श्री बाहुबलस्वामी, (श्रवणबेलगोला)।

 जैन-साहित्य-मन्दिर, सागर (म० प्र०)

श्री मुनि अनन्तसागर जी। श्री मुनि सूर्यसागर जी। श्री मुनि शान्तिसागर जी।

☞ सूचना-पृष्ठ संख्या देखते समय प्रथम या द्वितीय भाग का ख्याल रखियेगा।

चित्र—सूची

प्रथम भाग

द्वितीय भाग।

विषय-सूची।

प्रथम भाग।

☞ सूचना—पृष्ठ संख्या देखते समय प्रथम या द्वितीय भाग का ख्याल रखियेगा।

विषय-सूची।

ॐनमः सिद्धेभ्यः ।

ॐकारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायंति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः ॥ १ ॥
अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलकलंका ।
मुनिभिरुपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितम् ॥
अज्ञानतिमिरांधानां ज्ञानांजनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ३ ॥
परमगुरवे नमः परम्पराचार्य्यश्रीगुरवे नमः ।

सकलकलुषविध्वंसकं श्रेयसां परिवर्द्धकं धर्म्मसंबन्धकं भव्यजीवमनःप्रतिबोधकारकमिदं शास्त्रं श्री नाम धेयं......(ग्रन्थ का नाम लेवे) एतन्मूलग्रंथकर्त्तारः श्रीसर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रंथकर्त्तारः श्रीगणधरदेवास्तेषां वचोनुसारतामासाद्य श्री......(ग्रन्थकर्ता का नाम लेवे) विरचितम् ।

मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी ।
मंगलं कुंदकुंदाद्यो जैनधर्मोस्तु मंगलम् ॥
वक्तारः श्रोतारश्च सावधानतया शृण्वन्तु ॥

बड़ा जैन-ग्रन्थ-संग्रह

श्री गोमट्टगिरि, श्रवणवेलगोला ।

पिसनहारी की मढ़िया, जबलपुर।

5.r

श्रीवीतरागाय नमः

बड़ा जैन-ग्रन्थ-संग्रह

पहिला भाग।

रत्नकरण्ड-श्रावकाचार, हिन्दी-पद्यानुवाद।

(पं० गिरधर शर्मा कृत)

पहिला परिच्छेद।

सकल कर्ममल जिनने धोये, हैं वे वर्द्धमान भगवान।
लोकालोक भासते जिसमें, ऐसा दर्पण जिनका ज्ञान॥
बड़े चावसे भक्तिभावसे; नमस्कार कर बारंवार।
उनके श्रीचरणों में प्रणमूं, सुख पाऊँ हर विघ्न-विकार॥१॥
जो संसार दुःखसे सारे, जीवों को सु बचाता है।
सर्वोत्तम सुखमें पुनि उनको, भलीभाँति पहुँचाता है॥
उसी कर्मके काटनहारे, श्रेष्ठधर्मको कहता हूँ।
श्रीसमन्तभद्रार्यवर्यका, भाव बताना चहता हूँ॥२॥

धर्म किसे कहते हैं।

गणधरादि धर्मेश्वर कहते, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान-
सम्यक्चारित धर्मरम्य है, सुखदायक सब भाँति निदान॥
इनसे उलटे मिथ्या हैं सब, दर्शन ज्ञान और चारित्र।
भव कारण हैं भय कारण हैं, दुख कारण हैं मेरे मित्र॥३॥

सम्यग्दर्शन का लक्षण।

आठ अंगयुत, तीन मूढ़ता रहित, अमद जो हो श्रद्धान।
सच्चे देव शास्त्र गुरु पर दृढ़, सम्यग्दर्शन उसको जान॥
सच्चे देव शास्त्र गुरुका मैं, लक्षण यहाँ बताता हूं।
तीन मूढ़ता आठ अंग-मद, सबका भेद बताता हूं॥४॥

सच्चे देव का स्वरूप ।

जो सर्वज्ञ शास्त्र का स्वामी, जिसमें नहीं दोष का लेश ।
वही आप्त है वही आप्त है, वही आप्त है तीर्थ जिनेश ॥
जिसके भीतर इन बातों का, समावेश नहिं हो सकता ।
नहीं आप्त वह हो सकता है, सत्य देव नहिं हो सकता ॥५॥
भूख प्यास बीमारि बुढ़ापा, जन्म मरण भय राग द्वेष ।
गर्व मोह चिन्ता मद अचरज, निद्रा अरति खेद औ स्वेद ॥
दोष अठारह ये माने हैं, हों ये जिनमें जरा नहीं ।
आप्त वही है देव वही है, नाथ वही है और नहीं ॥६॥
सर्वोत्तम पद पर जो स्थित हो, परम ज्योति हो, हो निर्मल ।
वीतराग हो महाकृती हो, हो सर्वज्ञ सदा निश्चल ॥
आदि रहित हो अन्त रहित हो, मध्य रहित हो महिमावान ।
सब जीवों का होय हितैषी, हितोपदेशी वही सुजान ॥७॥
बिना रागके बिना स्वार्थके, सत्यमार्ग वे बतलाते ।
सुन सुन जिनको सत्पुरुषोंके, हृदय प्रफुल्लित हो जाते ॥
उस्तादोंके कर स्पर्शसे जब मृदङ्ग ध्वनि करता है ।
नहीं किसी से कुछ चहता है, रसिकों के मन हरता है ॥८॥

शास्त्र का लक्षण ।

जो जीवोंका हितकारी हो, जिसका हो न कभी खंडन
जो न प्रमाणों से विरुद्ध हो, करता होय कुपथ-खंडन ॥
वस्तुरूपको भलीभांतिसे, बतलाता हो जो शुचितर ।
कहा आप्तका शास्त्र वही है, शास्त्र वही है सुन्दरतर ॥९॥

तपस्वी या गुरु का लक्षण ।

विषय छोड़कर निरारम्भ हो, नहीं परिग्रह रक्खें पास ।
ज्ञान ध्यान तप में रत होकर, सब प्रकार की छोड़ें आस ॥

ऐसे ज्ञानध्यान तप भूषित, होते जो सांचे मुनिवर।
वही सुगुरु हैं वही सुगुरु हैं, वही सुगुरु हैं उज्ज्वलतर॥१०॥

सम्यक्त्वके अंग-निःशङ्कित।

तत्त्व यही है, ऐसा ही है, नहीं और, नहिं और प्रकार।
जिनकी सन्मारग में रुचि हो, ऐसी मनो खड्गकी धार॥
है सम्यक्त्व अंग यह पहला, निःशंकित है इसका नाम।
इसके धारण करने से ही, अंजनचोर हुआ सुखधाम॥११॥

निःकांक्षित।

भाँति भाँतिके कष्ट सहे भी, जिसका मिलना कर्माधीन।
जिसका उदय विविध दुखयुत है,जो है पापबीज अतिहीन॥
जो है अंतसहित लौकिक सुख,कभी चाहना नहिं उसको।
निःकांक्षित यह अंग दूसरा, धाराऽनंतमती इसको॥१२॥

निर्विचिकित्सित।

रत्नत्रयसे जो पवित्र हो, स्वाभाविक अपवित्र शरीर।
उसकी ग्लानि कभी नहिं करना,रखना गुणपर प्रीति सुधीर॥
निर्विचिकित्सित अंग तीसरा, यह सुजनोंका प्यारा है।
पहले उद्दायन नरपतिने, नीके इसको धारा है॥१३॥

अमूढ़दृष्टि।

दुखकारक हैं कुपथ कुपंथी, इन्हें मानना नहिं मन से।
करना नहिं सम्पर्क सत्कृति,यश गाना नहिं वचनों से॥
चौथा अंग अमूढ़दृष्टि यह, जगमें अतिशय सुखकारी।
इसको धार रेवती रानी, ख्यात हुई जगमें भारी॥१४॥

उपगूहन।

स्वयं शुद्ध जो सत्यमार्ग है, उत्तम सुख देने वाला।
अज्ञानी असमर्थ मनुजकृत, उसकी हो निन्दामाला॥

उसे तोड़कर दूर फेंकना, उपगूहन है पंचम अंग।
इसे पाल निर्मल यश पाया, सेठ जिनेन्द्रभक्त सुख संग ॥१५॥

स्थितीकरण ।

सद्दर्शनसे सदाचरणसे, विचलित होते हों जो जन।
धर्मप्रेमवश उन्हें करे फिर सुस्थिर, देकर तन मन धन ॥
स्थितीकरण नामक यह छट्ठा, अंग धर्मद्योतक प्रियवर।
वारिषेण श्रेणिक का बेटा, ख्यात हुआ चलकर इसपर ॥१६॥

वात्सल्य ।

कपट रहित हो श्रेष्ठ भावसे, यथायोग्य आदर सत्कार।
करना अपने सधर्मियोंका, सप्तमाङ्ग वात्सल्य विचार॥
इसे पालकर प्रसिद्धि पाई,मुनिवर श्रीयुत विष्णुकुमार।
जिनका यश शास्त्रों के भीतर, गाया निर्मल अपरंपार ॥१७॥

प्रभावना ।

जैसे होवे वैसे भाई, दूर हटा जग का अज्ञान।
कर प्रकाश,कर दे विनाश तम, फैला दे शुचि सच्चा ज्ञान ॥
तन मन धन सर्वस्व भले ही, तेरा इसमें लग जावे।
वज्रकुमार मुनीन्द्र सदृश तू, तब प्रभावना कर पावे ॥१८॥
सम्यग्दर्शन सुखकारी है, भवसन्तति इससे मिटती।
अङ्गहीन यदि हो इसमें तो, शक्ति नहीं इतनी रहती ॥
विष की व्यथा मिटा दे ऐसी, शक्तिमंत्र में है प्रियवर।
अक्षर मात्राहीन हुए से, मंत्र नहीं रहता सुखकर ॥ १९ ॥

लोकमूढ़ता ।

गंगादिक नदियों में न्हाये, होगा मुझ को पुण्य महान।
ढेर किये पत्थर-रेती के, हो जावेगा तत्वज्ञान ॥

गिरि से गिरो शुद्ध होऊंगा, जले आग में पावनतर।
ऐसे मन में विचार रखना, लोकमूढ़ता है प्रियवर ॥ २० ॥

देवमूढ़ता।

दई देवता की पूजाकर, मन चाहे फल पाऊंगा।
मेरे होंगे सिद्ध मनोरथ, लाभ अनेक उठाऊंगा॥
ऐसी आशायें मन में रख, जो जन पूजा करता है।
रागद्वेष भरे देवों को, देवमूढ़ता धरता है ॥ २१ ॥

गुरुमूढ़ता।

नहीं छोड़ते गाँठ-परिग्रह, आरंभ को नहिं तजते हैं।
भवचक्रों के भ्रमनेवाले, हिंसा को ही भजते हैं॥
साधु सन्त कहलाते तिस पर, देना इन्हें मान सत्कार।
है पाखण्डिमूढ़ता प्यारी, छोड़ो इसको करो विचार ॥२२॥

आठ मद।

ज्ञान जाति कुल पूजा ताकत, ऋद्धि तपस्या और शरीर।
इन आठों का आश्रय करके, है घमण्ड करना मद वीर॥
मद में आ निजधर्मिजनों का, जो जन कर्ता है अपमान।
वह सुधर्मके मान भंग का, कारण होता है अज्ञान ॥ २३ ॥
अगर पाप का हो निरोध तो, और सम्पदा से क्या काम।
अगर पाप का आश्रय हो तो, और सम्पदा से क्या काम॥
मित्रो यदि पहला होगा तो, दुख का उदय नहीं होगा।
यदि दुसरा होगा तो सम्पद, होने पर भी दुख होगा ॥२४॥

सम्यग्दर्शन की महिमा।

सम्यग्दर्शन की शुभ सम्पद, होती है जिनके भीतर।
मातंगज हो कोई भी हो, महामान्य हैं वे बुधवर॥

गुदड़ीके वे लाल सुहाने, ढँकी भस्मको हैं आगी।
सम्यग्दर्शनकी महिमासे, कहैं देव ये बड़भागी॥ २५ ॥
सुन्दर धर्माचरण किये से, कुत्ता भी सुर हो जाता।
पापाचरण किये से त्यों ही, श्वानं योनि सुर भी पाता॥
ऐसी कोई नहीं सम्पदा, जो न धर्म से मिलती है,
सब मिलती है सब मिलती है,सब मिलती है मिलती है॥२६॥
जिनके दर्शन किये चित्त में, उदय नहीं होवे समभाव।
जिनके पढ़ने सुनने से नहिं, उच्च चरित हो-हो न सुभाव॥
जिन्हें मान आदर्श चले से, सत्यमार्गभूले पड़ जायँ।
ऐसे खोटे देव शास्त्र गुरु, शुद्धदृष्टि से विनय न पायँ॥२७॥
ज्ञान शक्ति है ज्ञान बड़ा है, कोई वस्तु न ज्ञान समान।
त्यों चारित्र बड़ा गुणधारी, सब सुखकारी श्रेष्ठ महान॥
पर मित्रो दर्शन की महिमा, इन सब से बढ़कर न्यारी।
मोक्षमार्ग में इसकी पदवी, कर्णधार जैसी भारी॥ २८ ॥
सम्यग्दर्शन नहिं होवे तो, ज्ञान चरित्र कभी शुभतर-
फलदाता नहिं हो सकते हैं, जैसे बीज विना तरुवर॥
सम्यग्दर्शन विना ज्ञानको, मित्रो समझो मिथ्याज्ञान।
वैसे ही चारित्र समझ लो,मिथ्याचरित सकल दुखखान॥२९॥
मोह रहित जो है गृहस्थ भी,मोक्षमार्ग अनुगामी है।
हो अनगार न मोह तजा तो, वह कुपंथ का गामी है॥
मुनि होकर भी मोह न छोड़ा, ऐसे मुनि से तो प्रियवर।
निर्मोही हो गृहस्थ रहना, है अच्छा उत्तम बहतर॥ ३० ॥
भूत भविष्यत वर्तमान ये, कहलाते हैं तीनों काल।
देव नारकी और मनुज ये, तीनों जग में महा विशाल॥
तीनों काल त्रिजग में नहिं है, सुखकारी सम्यक्त्व समान।
त्यों ही नहिं मिथ्यात्व सदृश है,दुखदायक लीजे सच मान॥३१॥

मित्रो जो सम्यग्दर्शन से, शुद्धदृष्टि हो जाते हैं।
नारक तिर्यक षंढ-स्त्रीपन, कभी नहीं वे पाते हैं॥
व्रतविहीन वे होवें तो भी, नीचकुलों में नहिं होते।
नहिं होते अल्पायु दरिद्री, विकृत देह भी नहिं होते॥ ३२॥
विद्या वीर्य विजय वैभव चय, ओज तेज यश वे पाते।
अर्थसिद्धि कुलवृद्धि महाकुल, पाकर सज्जन कहलाते॥
अष्ट सिद्धि नव निधि होती हैं, उनके चरणों की दासी।
रत्नों के वे स्वामी होते, नृपगण के मस्तकवासी॥ ३३॥
पाके तत्वज्ञान मनोरम, वे महान हैं हो जाते।
सुरपति नरपति धरणीपति औ, गणधर से पूजा पाते॥
धर्मचक्र के धारक अनुपम, मित्रो तीर्थंकर होते।
तीनों लोकों के जीवों के, शरणभूत सच्चे होते॥ ३४॥
बाधा शंका रोग शोक भय, जरा जहां है जरा नहीं।
जिसमें विद्या सुख है अनुपम, जिसका क्षय है कभी नहीं॥
ऐसा उत्तम निर्मलतर है, शिवपद अथवा मोक्ष महान।
उसको पाते हैं अवश्य वे, जो जन सम्यग्दर्शनवान॥ ३५॥
है देवेन्द्रचक्र की महिमा, कहीं नहीं जो जाती है।
सार्वभौम की पदवी को सिर, महिपावली झुकाती है॥
सब पद जिसके नीचे ऐसा, तीर्थंकर है पद प्रियवर।
पा इन सब को शिवपद पाते, भव्य भक्त प्रभु को भजकर॥ ३६॥

दूसरा परिच्छेद।

सम्यग्ज्ञान का लक्षण।

वस्तुरूप को जो बतलाये, नो के न्यूनाधिकता-हीन।
ठीक ठीक जैसे का तैसा, अविपरीत सन्देह विहीन॥
गणधरादि आगम के ज्ञाता, कहते इसको सम्यग्ज्ञान।
इसको प्राप्त कराने वाले, कहे चार अनुयोग महान॥ ३७॥

प्रथमानुयोग।

धर्म अर्थ त्यों काम मोक्ष का, जिसमें किया जाय वर्णन।
पुन्यकथा हो चरित-गीति हो, हो पुराणका पूर्ण कथन॥
रत्नत्रय औ धर्म ध्यानका, जो अनुपम हो महानिधान।
कहलाता प्रथमानुयोग है, यों कहता है सम्यग्ज्ञान॥ ३८॥

करणानुयोग।

लोकालोकविभाग बतावे, युगपरिवर्तन बतलाता।
वैसे ही चारों गतियों को, दर्पणसम है दिखलाता॥
है उत्तम करणानुयोग यह, कहता है यों, सम्यग्ज्ञान।
इसे जानने से मानवकुल, हो जाता है बहुत सुजान॥३९॥

गृहस्थियोंका अनगारों का, जिससे चारित हो उत्पन्न।
बढ़े और रक्षा भी पावे, है चरणानुयोग प्रतिपन्न॥
मित्रो इसका किये आचरण, चरितगठन हो जाता है।
करते हुए समुन्नति अपनी, जीव महासुख पाता है॥ ४०॥

द्रव्यानुयोग।

जीवतत्व का स्वरूप ऐसा, ऐसा है अजीव का तत्व।
पापपुण्य का यह स्वरूप है, बन्धमोक्ष हैं ऐसे तत्व॥
इन सब को द्रव्यानुयोगका, दीप भलीविधि दिखलाता।
जो श्रुतिविद्या के प्रकाश को, जहां तहां पर फैलाता॥४१॥

तीसरा परिच्छेद।

सम्यक्चारित्र।

मोहतिमिर के दूर हुए से, सम्यग्दर्शन पाता है।
उसको पाकर साधु समकिती, श्रेष्ठ ज्ञान उपजाताहै॥
फिर धारण करता है शुचितर, सुखकारी सम्यक्चारित्र।
रहे राग ज्यों नहीं पास कुछ, और द्वेष नस जावे मित्र॥४२॥

राग द्वेष के नस जाने से, नहीं पाप ये रहते पांच।
हिंसा, मिथ्या, चोरी, मैथुन, और परिग्रह लीजे जाँच॥
इन सब से विरक्त हो जाना, सम्यग्ज्ञानी का चारित्र।
सकल विकल के भेदभावसे, धरें इसे मुनि गृही पवित्र॥४३॥

बारह प्रकार का विकल चारित्र।

बारह भेदरूप चारित है, गृही जनों का तीन प्रकार।
पांच अणुवत तीन गुणव्रत, और भले शिक्षाव्रत चार॥
क्रम से सभी कहो पर पहले, पांच अणुव्रत बतला दो।
उनका पालन करना सारे, सागारों को सिखला दो॥४४॥

पांच अणुव्रत।

हिंसा मिथ्या चोरी मैथुन, और परिग्रह जो हैं पाप।
स्थूलरूपसे इन्हें छोड़ना, कहा अणुव्रत प्रभु ने आप॥
निरतिचार इनको पालन कर, पाते हैं मानव सुरलोक।
वहां अष्टगुण अवधिज्ञान त्यों, दिव्य देह मिलते हरशोक॥४५॥

अहिंसा।

तीन योग औ तीन करणसे, त्रस जीवोंका वध तजना।
कहा अहिंसाणुव्रत ज्ञाता, इसको नित पालन करना॥
इसी अहिंसाणुव्रतके हैं, कहलाते पञ्चातीचार।
छेदन, भेदन, भोज्यनिवारण, पीड़न बहुत लादना भार॥४६॥
इसी अणुव्रतके पालनसे, जाति पाँतिका था चंडाल।
तो भी सब प्रकार सुख पाया, कीर्तिमान् होकर यमपाल॥
नहीं पालनेसे इस व्रतके, हिंसारत हो सेठानी-
हुई धनश्री ऐसी जिसकी, दुर्गति नहिं जाती जानी॥४७॥

सत्य।

बोले झूठ न झूठ बुलावे, कहे न सच भी दुखकारी।
स्थूल झूठसे विरक्त होवे, है सत्याणुव्रतधारी॥
निन्दा करना, धरोड़ हरना, कूटलेख लिखना परिवाद।
गुप्त बात को जाहिर करना, ये इसके अतिचार प्रमाद॥४८॥

इस व्रतके पालन करनेसे, पूज्य सेठ धनदेव हुआ।
नहीं पाल मिथ्यारत होकर, सत्यघोष त्यों दुखी मुआ॥
मिथ्या वाणी ऐसी ही है, सब जगको संकटदाई।
इसे हटाओ नहीं लड़ाओ, समझाओ सबको भाई॥४९॥

अचौर्य।

गिरा पड़ा भूला रक्खा त्यों, बिना दिया परका धन सार।
लेना नहीं, न देना परको, है अचौर्य, इसके अतिचार-॥
माल चौर्यका लेना, चोरी-ढंग बतलाना छल करना।
माल मेलमें नापतोलमें, भंग राजविधिका करना॥५०॥
इस व्रतको पालन करने से, वारिषेण जगमें भाया।
नहीं पालने से दुखबादल, खूब तापसी पर छाया॥
जो मनुष्य इस व्रतको पाले, नहीं जगतमें क्यों भावे।
क्यों नहिं उसकी शोभा छावे, क्यों न जगत सब जस गावे॥५१॥

ब्रह्मचर्य।

पापभीरु हो परदारासे, नहीं गमन जो करता है।
तथा औरको इस कुकर्ममें, कभी प्रवृत्त न करता है॥
ब्रह्मचर्य व्रत है यह सुन्दर, पाँच इसीके हैं अतिचार।
इन्हें भलीविध अपने जीमें, मित्रो लीजे खूब विचार॥५२॥
भण्ड-वचन कहना, निशिवासर अतितृष्णा स्त्री में रखना।
व्यभिचारिणी स्त्रियोंमें जाना, औ अनंग क्रीड़ा करना॥
औरों की शादी करवाना, इन्हें छोड़कर व्रतपाला।
वणिक्सुता नीलीने नीके, कोतवालने नहिंपाला॥५३॥

परिग्रहपरिमाण।

आवश्यक धन-धान्यादिकका, अपने मनमें कर परिमाण।
उससे आगे नहीं चाहना, सो है व्रत इच्छा-परिमाण॥
अति वाहन, अति संग्रह, विस्मय, लोभ लादना अतिशय भार।

इस व्रतके बोले जाते हैं, मित्रो ये पांचों अतिचार ॥५४॥
जयकुमारने इस वर व्रतको, पालन करके सुख पाया ।
वैश्य 'मूछ-मक्खन' नहिं पाला, 'हाय द्रव्य' कर दुखपाया ॥
पाँच अणुव्रत कहे, इन्हींमें, मद्य मांस मधुका जो त्याग ।
मिल जावे तो आठ मूल गुण, हो जाते हैं गृही-सुहाग ॥५५॥

चौथा परिच्छेद ।

गुणव्रत ।

मूल गुणों की बढ़ती होवे, इसके लिए गुणव्रत तीन ।
कहे श्रेष्ठ पुरुषोंने नीके, जिनसे होवें जन दुखहीन ॥
दिग्व्रत और अनर्थदंडव्रत, व्रत भोगोपभोगपरिमाण ।
इनको धारण करें भव्यजन, मान शास्त्रको सुदृढ़ प्रमाण ॥५६॥

दिग्व्रत ।

अमुक नदीतक अमुकशैलतक, अमुक गाँवतक जाऊँगा ।
दशों दिशामें अमुक कोससे, आगे पद न बढ़ाऊंगा ॥
ऐसी कर मर्यादा आगे, कभी उमरभर नहिं जाना ।
सूक्ष्मपापनाशक दिग्व्रत यह, इसे सज्जनोंने माना ॥५७॥
जो इस व्रतका पालन करते, उन्हें नहीं होता है पाप ।
मर्यादा के बाहर उनके, अणुव्रत होय महाव्रत आप ॥
प्रत्याख्यानाचरण बहुत ही, मित्रो कृशतर हो जाते ।
इससे कर्म चरित्र-मोहनी, मन्द-मन्दतर पड़जाते ॥५८॥

महाव्रत ।

तन मन वचन योगसे मित्रो, कृत कारित अनुमोदन कर ।
होते हैं नौ भेद-इन्हींसे, तजना पाँचों पाप प्रखर ॥
कहे जगत में ये जाते हैं, पञ्च महाव्रत सुखकारी ।
बहुत अंशमें महाव्रतीसा, होजाता दिग्व्रतधारी ॥५९॥
दशों दिशाकी जो मर्यादा, की हो उसे न रखना याद ।

भूल भाल उसको तज देना, या तज देना घार प्रमाद ॥
ऊँचे नीचे आगे पीछे, अगल बगल मित्रो बढ़ना।
दिग्वृतके अतिचार कहाते, याद न मर्यादा रखना ॥६०॥

अनर्थदण्डविरति।

दिगमर्यादा जो की होवे, उसके भीतर भी बिन काम।
पाप योगसे विरक्त होना; है अनर्थदंडवृत नाम॥
हिंसादान प्रमादचर्या, पापादेश-कथन अपध्यान।
त्योंही दुःश्रुति पाँचों ही ये, इस वृतके हैं भेद सुजान ॥६१॥

हिंसादान।

छुरी कटारी खंग खुनीता, अन्यायुध फलसा तलवार।
साँकल सींगी अस्त्र-शस्त्रका, देना, जिनसे होवें वार॥
हिंसादान नामका मित्रो, कहलाता है अनरथदंड।
बुधजन इसको तज देते हैं, ज्यों नहिं होवें युद्ध प्रचंड ॥६२॥

प्रमादचर्या।

पृथ्वी पानी अग्नि वायुका, बिना काम आरँभ करना।
व्यर्थ छेदना वनस्पतीको, बे-मतलब चलना फिरना॥
औरों को भी व्यर्थ घुमाना, है प्रमाद चर्या दुखकर।
कहा अनर्थदंड है इसको, शुभ चाहे तो इससे डर ॥६३॥

पापोपदेश या पापादेश।

जिससे धोखा देना आवे, मनुज करे त्यों हिंसारम्भ।
तिर्यंचोंको संकट देवे, वणिज करे फैलाकर दम्भ॥
ऐसी ऐसी बातें करना, पापादेश कहाता है।
इस अनर्थदंडकको तजकर, उत्तम नर सुख पाता है ॥६४॥

अपध्यान।

रागद्वेष के बसमें होकर, करते रहना ऐसा ध्यान।
उसकी प्रिया मुझे मिल जावे, मिल जावें उसके धनधान॥
वह मर जावे वह कट जावे, उसको होवे जेल महान।
वह लुट जावे संकट पावे, है अनर्थदंडक अपध्यान ॥६५॥

दुःश्रुति।

जिनके कारण से जागृत हों, राग द्वेष मद काम विकार।
आरंभ साहस और परिग्रह, त्यों छावें मिथ्यात्वविचार॥
मन मैला जिनसे हो जावे, प्यारो सुनना ऐसे ग्रन्थ।
दुःश्रुति नाम अनर्थ कहाता, कहते हैं ज्ञानी निर्ग्रंथ॥ ६६॥

अनर्थदण्डवृतके अतिचार।

स्मराधीन हो हँसी दिल्लगी-करना भंडवचन कहना।
बकबक करना आंख लड़ाना, कायकुचेष्टा में बहना॥
सजधज के सामान बढ़ाना, बिना विचारे त्यों प्रियवर-।
तनमनवचन लगाना कृतिमें, हैं अतिचार सभी वृतहर॥६७॥

भोगोपभोगपरिमाण।

इन्द्रिय-विषयों को प्रतिदिन ही, कम कर राग घटा लेना।
है व्रत भोगोपभोगपरिमित, इसकी ओर ध्यान देना॥
पंचेन्द्रिय के जिन विषयों को भोग छोड़ दें वे हैं भोग।
जिन्हें भोगकर फिर भी भोगें मित्रो वे ही हैं उपभोग॥६८॥
त्रस जीवों की हिंसा नहिं हो-होने पावे नहीं प्रमाद।
इसके लिये सर्वथा त्यागो, मांस मद्य मधु छोड़ विषाद॥
अदरख निम्बपुष्प बहुबीजक, मक्खन मूल आदि सारी।
तजो सचित चीजें जिनमें हो, थोड़ा फल हिंसा भारी॥६९॥
जो अनिष्ट हैं सत्पुरुषों के- सेवन योग्य नहीं जो है।
उन विषयों को सोच समझकर, तज देना जो व्रत सो है॥
भोग और उपभोग त्याग के, बतलाये यम नियम उपाय।
अमुक समयतकत्याग 'नियम' है, जीवन भरका यम कहलाय७०

नियम करने की विधि।

भोजन बाहन शयन स्नान रुचि, इत्र पान कुंकुम-लेपन।
गीत वाद्य संगीत कामरति, माला भूषण और वसन॥

इन्हें रात दिन पक्ष मास या, वर्ष आदि तक देना त्याग ।
कहलाता है 'नियम' और 'यम,' आजीवन इनका परित्याग७१

भोगोपभोगपरिमाणके अतिचार ।

विषय विषों का आदर करना, भुक्त विषय को करना याद ।
वर्तमान के विषयों में भी, रचे पचे रहना अविषाद ॥
आगामी विषयों में रखना, तृष्णा या लालसा अपार ।
बिन भोगे विषयों का अनुभव करना, ये भोगातिचार ॥७२॥

पांचवां परिच्छेद ।

शिक्षाव्रत—देशावकाशिक ।

पहला है देशावकाशि पुनि, सामायिक प्रोषध उपवास- ।
वैयावृत्य और ये चारों, शिक्षाव्रत हैं सुख-आवास ॥
दिग्व्रत का लम्बा चौड़ा स्थल, कालभेद से कम करना ।
प्रतिदिन व्रत देशाविकाश सो, गृही जनों का सुखझरना॥७३॥
अमुक गेह तक अमुक गली तक, अमुक गांव तक जाऊंगा ।
अमुक खेत से अमुक नदी से, आगे पग न बढ़ाऊंगा ॥
एक वर्ष छहमास मास या, पखवाड़ा या दिन दो चार ।
सीमाकाल भेदसे श्रावक, इस व्रत को लेते हैं धार ॥ ७४ ॥
स्थूल सूक्ष्म पांचों पापों का, हो जाने से पूरा त्याग ।
सीमा के बाहर सध जाते, इस व्रत से सु महाव्रत आप ॥
हैं अतिचार पांच इस व्रत के, मँगवाना प्रेषण करना ।
रूप दिखाय इशारा करना, चीज फेंकना, ध्वनि करना ॥७५॥

सामायिक ।

पूर्ण रीति से पञ्च पाप का, परित्याग करना सज्ञान ।
मर्यादा के भीतर बाहर, अमुक समय धर समता ध्यान ॥
है यह सामायिक शिक्षाव्रत, अणुव्रतों का उपकारक ।
त्रिधि से अनलस सावधान हो, बनो सदा इसके धारक ॥७६॥

जब तक चोटी मूठी कपड़ा, बंधा रहेगा मैं तब तक।
सामायिक निश्चल साधूंगा, यों विचार कर, निश्चयतक॥
मार पलाठी भली भांति से, कायोत्सर्ग रमाया कर।
है बैठना खड़ा रहना या, समय कहा जाता व्रत-धर॥७७॥
घर हो वन हो चैत्यालय हो, कुछ भी हो निरुपद्रव हो।
हो एकान्त शान्त अति सुन्दर, परम रम्य औ शुचितर हो॥
ऐसे स्थल में बड़ी खुशी से, तन को मन को निश्चल कर।
एक भुक्त उपवास-दिवस या प्रतिदिन ही सामायिक कर॥७८॥
सामायिक के समय गृही, आरम्भ परिग्रह तजते हैं।
पहिनाये हों वसन जिसे, ऐसे मुनि से वे दिखते हैं॥
साम्यभाव स्थिर रख मौनी रह, सब उपसर्ग उठाते हैं।
गरमी सरदी मसक डाँसके, परिषह सब सह जाते हैं॥७९॥
अशुभरूप अशरण अनित्य यह, पर स्वरूप संसार महान।
अतिशय दुःखपूर्ण है, तो भी बना हुआ है मेरा स्थान॥
इससे बिलकुल उलटा सुखमय, मोक्षधाम शाश्वत सत्तम।
सामायिक के समय भक्तजन, ध्यान धरो ऐसा उत्तम॥८०॥
अपने साम्यभाव को तजकर, कर देना चंचल तन को।
वाणी को चंचल कर देना, कर देना चंचल मन को॥
सामायिकका काल टालना, और पाठ रखना नहिं याद,
ये अतिचार पाँच इस व्रत के कहे गये हैं विना विवाद॥८१॥

प्रोपधोपवास।

सदा अष्टमी चतुर्दशी को, तज देना चारों आहार।
यह प्रोषध-उपवास कहाता, दिन भर रहे धर्मव्यवहार॥
अंजन मंजन न्हाना धोना, गंध पुष्प सजधज करना।
आरँभ पाँच पाप हिंसादिक, इस दिन बिलकुल परिहरना॥८२॥
तजना चारों आहारों का, होय निराकुल है 'उपवास'।

एक बार खाने को कहते, 'प्रोषध', जो हैं प्रभुपददास॥
दो प्रोषध के बिच में करना, एक वासका‡ कहलाता।
शुद्ध 'प्रोषधोपवास' पूरा, भव्यजनों का सुखदाता॥ ८३॥
देखे भाले विन चीजोंका लेना, मलक तज देना।
और बिछाना विस्तर का त्यों, व्रतकर्तव्य भुला देना॥
तथा अनादर रखना व्रत में, हैं ये पांचों ही अतिचार।
इन्हें छोड़कर व्रत को पालो, धारो उर में धर्मविचार॥८४॥

वैयावृत्य।

जो अनगार तपस्वी गुणनिधि, धर्महेतु, उनको दे दान।
प्रतिफल की इच्छा विन है यह, वैयावृत्य सु व्रत सुखखान॥
गुणरागी होकर मुनिवरके, चरण चापिये होय प्रसन्न।
उनका खेद दूर कर दीजे, सेवा कीजे जो हो अन्य॥८५॥

दान का स्वरूप।

सूनारम्भ* तजा है जिनने, धर्मकर्म हित, हर्षाकर।
नवधाभक्ति + भाव से ऐसे, आर्यों का तू गौरव कर॥
निर्लोभीपन, क्षमा, शक्ति त्यों, ज्ञान, भक्ति, श्रद्धा, संतोष।
निर्मलदाता के गुण हैं ये, धारो इनको तजकर दोष॥८६॥

दान—फल।

जिसने घर धर्मार्थ तजा उस, अतिथी की पूजा करना।
घरधंदे से बढ़े हुए पापों का है सचमुच हरना॥

---

‡ उपवासका।

* सूनाः—कूटना १, पीसना २, आग जलाना ३, पानी भरना ४, बुहारी देना ५,

+ नवधाभक्तिः—पड़िगाहना १, उच्च स्थान देना २, चरणोदक माथे लगाना ३, पूजा करना ५, मन वचन और काय की शुद्धि रखना ६-७-८ और एषण शुद्धि-अर्थात् शुद्ध आहार देना ९।

मुनि को नमने से ऊंचा कुल, रूप भक्तिसे, मिलता है।
मान दास्यसे, भोग दान से, स्तुति से शुचि यश बढ़ता है॥८७॥
बड़का बीज भूमि में जाकर, हो जाता है तरु भारी।
घेर घुमेर सघन घन सुन्दर, समय पाय छायाकारी॥
वैसे ही हो अल्प भले ही, पात्रदान सुख करता है।
समय पाय बहु फल देता है, इष्ट लाभ बहु भरता है॥८८॥

दानके भेद।

भोजन, भेषज ज्ञान-उपकरण देना और अभय आवास।
चार ज्ञानके धारी कहते, दान यही हैं चारों खास॥
इनके पालन करने वाले, श्रीषेणौर वृषभसेना।
कोतवाल कौण्डीशव शूकर, हुए प्रसिद्ध समझ लेना॥८९॥

देवपूजा।

प्रभुपद काम दहनकारी हैं, वाञ्छित फल देनेवाले।
उनका प्रतिदिन पूजन करिए, वे सब दुख हरनेवाले॥
जिनपूजाको एक पुष्प ले; मेंडक चला मोद धरके।
मुआ मार्गमें हुआ देव वह, महिमा महा प्रगट करके॥९०॥

वैयावृत्य या दानके अतीचार।

हरे पत्रके भीतर रखना, हरे पत्रसे ढक देना।
देने योग्य भोजनादिक को, पात्रअनादर कर देना॥
स्मरण न रखना देनेकी विधि, अथवा देना मत्सर कर।
हैं अतिचार पांच इस वृतके, इन्हें सर्वथा तू परिहर॥९१॥

छठवां परिच्छेद।

सल्लेखना।

आ जावे अनिवार्य जरा, दुष्काल, रोग या कष्ट महान।
धर्महेतु तब तनु तज देना, सल्लेखनामरण सो जान॥

अन्त समयका सुधार करना, यही तपस्याका है फल ।
अतः समाधिमरणहित भाई, करते रहो प्रयत्न सकल ॥६२॥
स्नेह, बैर, सम्बन्ध परिग्रह, छोड़, शुद्ध मन त्यों होकर ।
क्षमा करे निज जन परिजनको, याचे क्षमा स्वयं सुखकर ॥
कृत कारित अनुमोदित सारे, पापों का कर आलोचन ।
निश्छल जीवनभरको धारे, पूर्ण महाव्रत दुखमोचन ॥६३॥
शोक, दुःख, भय, अरति कलुषता, तज विषाद की त्यों ही आह ।
शास्त्रसुधाको पीते रहना, धारण कर पूरा उत्साह ॥
भोजन तजकर रहे दूध पर, दूध छोड़कर छाछ गहे ।
छाछ छोड़ ले प्रासुक जलको, उसे छोड़ उपवास लहे ॥६४॥
कर उपवास शक्ति अपनीसे, सर्व यत्नसे निज मनको ।
णमोकारमें तन्मय कर दे, तज देवे नश्वर तनको ॥
जीना चहना, मरना चहना, डरना मित्र याद करना ।
भावी भोग-वाञ्छना करना, हैं अतिचार, इन्हें तजना ॥६५॥
जिनने धर्म पिया है वे जन, हो जाते हैं सब दुखहीन ।
तीररहित दुस्तर निश्रेयस, सुखसागर को पिये प्रवीन ॥
जहां नहीं हैं शोक दुःख भय, जन्म जरा बीमारी मौत ।
है कल्याण नित्य केवल सुख, पावन परमानँदका स्रोत ॥६६॥
सल्लेखना मनुज जो धारें, पाते हैं, वे निरवधि मुक्ति ।
विद्या, दर्शन, शक्ति, स्वस्थता, हर्ष शुद्धि, औ अतिशय तृप्ति ॥
तीन लोकको उलटपलट दे, चाहे ऐसा हो उत्पात ।
नहीं कल्पशत में भी होता, मोक्षप्राप्त जीवों का पात ॥६७॥
कीटकालिमाहीन कनकसी, अति कमनीय दीप्तिवाले ।
तीनों लोक शिरोमणि सोहें, निःश्रेयस पानेवाले ॥
धन पूजा ऐश्वर्य हुकूमत, सेना परिजन भोग सकल ।
होय अलौकिक अतुल अभ्युदय, सत्य धर्म का ऐसा फल ॥६८॥

सातवां परिच्छेद।

ग्यारह प्रतिमा।

दर्शनप्रतिमाधारी।

ग्यारह पद होते श्रावकके, प्रति पदमें पहले गुणयुत।
अपने गुण मिल होय पूर्णता, यों बुध कहें सुमति संयुत॥
तत्वपथिक हैं शुचिदर्शन हैं, भव-तनु-भोगविरागी है।
परमेष्ठीपदशरणागत है, दर्शनप्रतिमाभागी है॥६६॥

व्रतप्रतिमाधारी।

पांच अणुव्रत सात शील जो, निरतिचार सुखसे धरता।
शल्यरहित व्रतप्रतिमाधारी, वृतियों में माना जाता॥
शिक्षाव्रत हैं चार, बताये तीन गुणवृत उपकारी।
ये सातों मिल शील कहाते, इन्हें धरे वृतका धारी॥१००॥

सामायिक-प्रतिमाधारी।

तीन बार करके आवर्तन, चार दिशामें चार प्रणाम-।
करे, परिग्रह सारे तज दे, धर ले कायोत्सर्ग ललाम॥
खड्गासन या पद्मासन धर, होकर मन वच तनसे शुद्ध।
करके वन्दना तीन कालमें, सामायिकधारी सो बुद्ध॥१०१॥

प्रोपधधारी और सचित्तत्यागी।

चारों पर्वों में हर महिने, धर्मध्यानमें रत रहकर।
शक्ति छुपाये बिनप्रोपध का, नियम करें वे 'प्रोपध-धर'॥
जो नहिं खावें कन्द, मूल, फल, शाखा, पुष्प बीज, कच्चे।
दयामूर्ति वे सचित्तत्यागी-प्रतिमाधारी, हैं सच्चे॥१०२॥

रात्रिभुक्तित्यागी और ब्रह्मचारी।

जीवों पर होकर दयालु जो, रजनीमें चारों आहार-।
करे नहीं सो 'रात्रिभुक्तिका' त्यागी 'दयावान् निर्धार॥
मलकारण मलबीज घृणायुत जान अंग, तज देना काम।
मित्रो है यह सप्तम प्रतिमा, ब्रह्मचर्य है इसका नाम॥१०३॥

आरंभत्याग और परिग्रहत्याग ।

सेवा कृषि वाणिज्यादिकके, आरँभ से बस हट जाना ।
हिंसा हो नहिं इस विचारसे, 'आरँभत्याग' इसे माना ॥
ममता तज निर्ममत्वरत हो, बाह्य परिग्रह दस तजना ।
स्वस्थ और संतोषी होना, परिग्रहत्याग इसे कहना ॥१०४॥

अनुमतित्यागी ।

नहिं जिनकी अनुमति आरँभमें, परिग्रह में नहिं होती है ।
सारे ही लौकिक कामों में, जिनकी अनुमति सोती है ॥
अनुमतित्यागी प्रतिमाधारी, वे सममति कहलाते हैं ।
साथ भली विधि इस पदवीको, ऊंचा पद पा जाते हैं॥१०५॥

उत्कृष्टश्रावक ।

घरको तज मुनिवनको जाकर, गुरु-समीप व्रत धारणकर ।
तपते हैं भिक्षाशन करते, खंडवस्त्रधारी होकर ॥
उत्तम श्रावकका पद यह है, जो मनुष्य इसको गहते ।
उन्हें श्रेष्ठजन क्षुल्लक ऐलक, भाग्यवान् श्रावक कहते ॥१०६॥
सत्य बात तो यह है मित्रो, पाप जीव का वैरी है ।
धर्मबन्धु है धर्म मित्र है, धरो इसे क्या देरी है ॥
निश्चय करता हुआ इसी विध, इसे पढ़ेगा जो मानव ।
अच्छे से अच्छा सर्वोत्तम, ज्ञानी होवेगा वह ध्रुव ॥१०७॥
हैं दर्शन चारित्र ज्ञान ये, तीनों रत्न बड़े सुन्दर ।
रत्नकरण्ड बनाते हियको, जो जन धरें इन्हें शुचितर ॥
भली भाँति पुरुषार्थ सिद्ध हो, उनके चरणों की दासी ।
बनती है बन पतिव्रतासी, देती है यों सुख राशी ॥१०८॥
कामी को ज्यों सुख देती है, रमणी, त्यों सुख दो मुझको ।
माता लाड़ लड़ाती सुतको, वैसे लाड़ करो मुझ को ॥
ज्यों पवित्र करती है कुल को, अति पवित्र सुगुणा कन्या ।
करो मुझे पावन वैसे ही, सम्यग्दर्शन श्री धन्या ॥१०९॥

॥ समाप्त ॥

द्रव्यसंग्रह-कवित्तबन्ध।

(कविवर भैया भगोतीदास कृत)

मंगलाचरण छप्पयछंद।

सकल कर्मक्षय करन, तरन तारन शिव नायक।
ज्ञान दिवाकर प्रगट, सर्व जीवहिं सुखदायक॥
परम पूज्य गणधरहु, ताहि पूजित—जिनराजे।
देवनि के पति इन्द्र वृंद, वंदित छवि छाजे॥
इहि विधि अनेक गुणनिधिसहित, वृषभनाथ मिथ्यात हर।
तसु चरण कमल वंदित भविक,भावसहित नित जोर कर॥१॥

दोहा।

तिहुँ जिन जीव अजीव के, लखे सगुण परजाय।
कहे प्रगट सब ग्रन्थ में, भेदभाव समुझाय॥ १ ॥

कवित्त।

जीव है सुज्ञानमयी चेतना स्वभाव धरे, जानिवो औ देखिवो अनादिनिधि पास है। अमूर्त्तिक सदा रहै और सो न रूप गहै, निश्चैनै प्रवान जाके आतम विलास है॥ व्योहार-नय कर्त्ता है देह के प्रमान मान, भुक्ता सुख दुःखनि को जग में निवास है। शुद्ध नै विलोके सिद्ध करम कलंक विना, ऊर्द्धको स्वभाव जाको लोक अग्रवास है॥ २॥

तिहुँकाल चार प्राण धरे जगवासी जीव, इन्द्रीबल आयु ओ उस्वासस्वास जानिये। एई चार प्राण धरे साता-मान जीवो करे, तातैं जीव नांव कह्यो नैव्योहार मानिये॥ निश्चैनय चेतना विराज रही शुद्ध जाके, चेतना विरुद सदा याही तै प्रमानिये। अतीत अनागत सुवर्तमान 'भैया' निज, ज्ञान प्रान शास्वतो स्वभाव यों वखानिये॥ ३॥

जीवके चेतना परिणाम शुद्ध राजत है, ताके भेद दोय जिन ग्रन्थनि में गाइये । एक है सुचेतना कहावैं शुद्ध दर्शन, दूजी ज्ञान चेतना लखेतैं ब्रह्म पाइये ॥ देखिवेके भेद चारि लीजिये हृदै विचारि, चक्षु ओ अचक्षु औधि केवल सुध्याइये । ये ही चार भेद कहे दर्शन के देखने के, जाके परकाश लोकालोक हू लखाइये ॥ ४ ॥

ज्ञानके जु भेद आठ ताके नाम भिन्न सुनो, कुमति कुश्रुति अवधि लों विशेखिये । सुमति सुश्रुति सु औधि मनपर्जय और, केवल प्रकाशवान वसुभेद लेखिये ॥ मति श्रुति ज्ञान दोऊ हैं परोक्षवान औधि, मनपर्जय प्रत्यक्ष एक देश पेखिये । केवल प्रत्यक्ष भास लोकालोक को विकास, यहै ज्ञान शास्वतो अनन्तकाल देखिये ॥ ५ ॥

मात्रिक कवित्त ।

अष्ट प्रकार ज्ञान चतु दरसन, नय व्यवहार जीव के लच्छन ।
निहचैं शुद्ध ज्ञान ओ दरसन, सिद्ध समान सुछन्द विंचक्षन ॥
केवल ज्ञान दरस पुनि केवल, राजै शुद्ध तजै प्रतिपच्छन ।
यह निहचै व्योहार कथनकी, कथा अनन्त कही शिव गच्छन ॥६॥

कवित्त ।

वर्ण पंच स्वेत पीत हरित अरुण श्याम, तिनहू के भेद नाना भांति के विदीत है । रस तीखो खारो मधुरो कडुओ कषायलो, इनहू के मिले भेद गणती अतीत है ॥ तातो सीरो चीकनो रूखो नरम कठोर, हरुवो भारी सुगन्ध दुर्गंधमयी रीत है । मूरति सुपुद्गल की जीव है अमूरतीक नैव्योहार मूरतीक बंधतै कहीत है ॥ ७ ॥

बंध्यो है अनादिही को कर्मके प्रबन्ध सेती, तातैं मूरतीक कह्यो परके मिलापसों । बंध ही में सदा रहै समैप्रति-

समै गहै; पुग्गलसों एकमेक ह्वै रह्यो है आपसों ॥ जैसे रूपो सोनो मिले एक नाव पाय रह्यो, तेसैं जीवमूरतीक पुग्गल प्रतापसों। यहै बात सिद्ध भई जीव मूरतीकमई, बंधकी अपेक्षा लई नैव्योहार छापसों ॥ ७ ॥

पुद्गल करमको करैया है चिदानन्द, व्योहार प्रवान इहां फेर कछु नाहीं है। ज्ञानावर्णी आदि अष्ट कर्म को करता है, रागादिक भाव धरै आप उहि पांही है ॥ शुद्ध नै विचारिये तो राग है कलंक याकै, यह तो अटंक सदा चेतना सुधाही है। अनन्त ज्ञान परिणाम तिनको करैया जीव, सास्वतो सदीव चिरकाल आपमाही है ॥ ८ ॥

व्योहार नै देखिये तो पुग्गल के कर्मफल, नाना भांति सुखदुःख ताको भुगतैया है। उपजाये आपुतैं ही शुभ ओ अशुभ कर्म, ताके फल साता ओ असाता को सहैया है ॥ निश्चैनय देखिये तो यह जीव ज्ञानमयी, अपुने चेतन परिणाम को करैया है। तातैं भोक्ता पुनि सुचेतन परिणामनि को, शुद्धनै विलोकिये तो सब को लखैया है ॥ ९ ॥

देहु के प्रमान राजै चेतन विराजमान, लघु और दीरघ शरीर के उदैसों है। ताही के समान परदेश याके पूरि रहे, सूक्ष्म औ बादर तन धरै तहां तैसो है ॥ व्यवहारनय ऐसो कह्यो समुद्घात विना, देह को प्रमान नाहि लोकाकाश जैसो है। शुद्ध निश्चयनयसों असंख्यात परदेशी, आतम स्वभाव धरै विद्यमान ऐसो है ॥ १० ॥

पृथ्वीकाय जलकाय अग्निकाय वायुकाय, वनस्पति-काय पांचो थावर कहीजिये । वे इन्द्री ते इन्द्री चौ इन्द्री पंचेन्द्रिय है चारों, जामें सदा चलिवे की शकति लहीजिये ॥

तन जीभ नाक आंख कान ये ही पंचइन्द्री, जाके जे ते होय ताहि तैसो सर्दहीजिये। संख द्वै पिपीलि तीन भौंर चार नर पंच, इन्हें आदि नाना भेद समुझि गहीजिये ॥ ११ ॥

पंच इन्द्री जीव जिते ताके भेद दोय कहे, एकनिके मन एक मनविना पाइये। और जगवासी जंतु तिनके न मन कहूँ, एकेंद्री बेइन्द्री तेंद्री चौइन्द्री बताइये ॥ एकेंद्रीके भेद दोय सूक्षम बादर होय, पर्यापत अपर्यापत सवै जीव गाइये। ताके बहु विस्तार कहे हैं जु ग्रन्थनि में, थोरे में समुझि ज्ञान हिरदै अनाइये ॥ १२ ॥

चउदह मारगणा चउदह गुणस्थान,होंहिं ये अशुद्ध नय कहे जिनराजने। येही भाव जोलों तोलों संसारी कहावै जीव, इनको उलंघनकरि मिलै शिव साजने ॥ शुद्धनै विलोकियेतौ शुद्ध हैं सकलजीव, द्रव्यकी उपेक्षा सो अनन्त छवि छाजने। सिद्धके समान ये विराजमान सवै हंस, चेतना सुभाव धर करैं निज काजनै ॥ १३ ॥

अष्टकर्महीन अष्ट गुणयुत चरमसु, देह तातें कछु ऊनो सुख को निवास है। लोकको जु अग्र तहां स्थित है अनन्त सिद्ध, उत्पादव्यय संयुक्त सदा जाको वास है ॥ अनन्तकाल पर्यंत थिति है अडोल जाकी, लोकालोकप्रतिभासी ज्ञानको प्रकाश है। निश्चै सुखराज करै वहुरि न जन्म धरै, ऐसो सिद्ध राशनि को आतम विलास है ॥ १४ ॥

प्रकृति औ थितिबन्ध अनुभाग बंधपरदेशबन्ध एई चार बन्ध भेद कहिये। इन्हीं चहुँ बन्धतैं अवन्ध ह्वैके चिदानन्द, अग्निशिखा सम ऊर्द्धको सुभावी लहिये॥ और सब जगजीव तजैं निज देह जब, परभोको गौन करै तवै सर्ल गहिये। ऐसें ही अनादिथिति नई कछू भई नाहिं, कही ग्रन्थमांहि जिन तैसी सरदहिये ॥ १ ॥

(इति जीवस्य नवाधिकाराः)

अजीवदरब पंच ताके नांव भिन्न सुनो, पुद्गल औ धर्मद्रव्यको सुभाव जानिये । अधर्म द्रव्य आकाश द्रव्य काल दर्व एई, पांचों द्रव्य जग में अचेतन वखानिये ।। तामें पुग्गल है मूरतीक रूप रस गन्ध, पर्शमई गुणपरजाय लिये जानिये । और पंच जीव जुत कहे हैं अमूरतीक, निज निज भाव धरै भेदी ह्वै पिछानिये ॥ १५ ॥

शवद वन्ध सूक्षम थूल औ आकार रूप, ह्वैवो मिलिवो औ विछुरिवो धूप छाय है । अंधारो उजारो औ उद्योत चन्द-कांतिसम, आतप सु भानु जिम नाना भेद छाय है ।। पुद्गल अनन्त ताकी परजाय हू अनन्त, लेखो जो लगाइये तोऽनंता-नन्त थाय हैं । एकही समैंमें आय सव प्रतिभास रही, देखी ज्ञानवंत ऐसी पुद्गल प्रजाय है ।। १६ ॥

जव जीव पुद्गल चलै उठि लोकमध्य, तवै धर्मास्ति-काय सहाय आय होत है । जैसें मच्छ पानी माहिं आपुहीतैं गौन करे, नीरकी सहाय सेती अलसता खोत है ।। पुनि यों नहीं जो पानी मीन को चलावे पंथ, आपुहीतै चलै तो सहाय कोऊ नोत है । तैसें जीव पुद्गलको और न चलाय सके, सहजे ही चले तो सहायका उदोत है ।। १७ ॥

जीव अरु पुद्गलको थितिसहकारी होय, ऐसो है अधर्म-द्रव्य लोकताईं हद है । जैसे कोऊ पथिक सुपंथमध्य गौन करे, छाया के समीप आय वैठे नेकु तद है ।। पै यों नहीं जु पंथी को राखतु वैठाय छाया, आपुने सहज वैठे वाको आश्रै-पद है । तैसें जीव पुद्गल को अधर्मास्तिकाय सदा, होत है सहाय 'भैया' थितिसमैं जद है ॥ १८ ॥

जीव आदि पंच पदार्थनिको सदाही यह, देत अवकाश तातैं आकाश नाम पायो है । ताके भेद दोय कहे एक है अलो-

आकाश, दूजो लोकाकाश जिन ग्रन्थनिमें गायो है ॥ जैसें कहूं घर होय तामें सब बसें लोय, तातें पंचद्रव्यहूको सदन बतायो है। याहीमें सर्व रहैं पै निज निज सत्ता गहैं, तातें परें और सो अलोक ही कहायो है ॥ १९ ॥

जितने आकाशमाहिं रहैं ये दरबपंच, तितने अकाश को जु लोकाकाश कहिये। धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य कालद्रव्य पुद्गल,-द्रव्य जीव द्रव्य एई पांचों जहां लहिये॥ इनतें अधिक कछु और तो विराज रह्यो, नाम सो अलोकाकाश ऐसो सर-दहिये। देख्यो ज्ञानवंतन अनन्तज्ञान चक्षु करि, गुनपरजाय सो सुभाव शुद्ध गहिये ॥ २० ॥

जोई सर्वद्रव्यको प्रवर्त्तावन समरथ, सोई कालद्रव्य बहुभेदभाव राजई। निज निज परजाय विषै परणवै यह, काल को सहाय पाय करै निज काजई ॥ ताही कालद्रव्य* के विधान रहे भेद दोय, एक व्यवहार परिणाम आदि छाजई। दूजो परमार्थकाल निश्चयवर्त्तना चाल, कायतैं रहित लोका-काशको सुराजई ॥ २१ ॥

लोकाकाश के जु एक एक परदेश विषै, एक एक काल अणुसुविराज रहे हैं। तातैं काल अणु के असंख्यद्रव्य कहियतु, रतन की राशि जैसें एक पुंज लहे हैं ॥ काहूसों न मिलै कोई रत्नजोत दृष्टि जोई, तैसें काल अणु होय भिन्नभाव गहे हैं। आदि अन्त मिल नाहिं वर्त्तना सुभाव मांहिं, समै पल महूर्त्त परजाय भेद कहे हैं ॥ २२ ॥

दोहा ।

जीव अजीवहि द्रव्य के, भेद सुषट्विध जान ।
तामें पंच सु काय वर, कालद्रव्य विन मान ॥ २३ ॥

---

*'यमराजके' ऐसा भी पाठ है।

कवित्त ।

ऐसे कह्यो जिनवर देख निज ज्ञान माहिं, इतने पदार्थनि को कायधर मानिये । जीवद्रव्य पुद्गलद्रव्य धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य औ अकाशद्रव्य एई नाम जानिये ॥ काय के समान सदा वहुते प्रदेश धरे, तातैं काय संज्ञा इन्हैं प्रत्यक्ष प्रवानिये । निज निज सत्ता में विराज रहे सबै द्रव्य, ऐसें भेद भाव ज्ञान दृष्टिसों पिछानिये ॥ २४ ॥

जीवद्रव्य धर्मद्रव्य अधरमद्रव्य इन, तीनों को असंख्य परदेशी कहियतु है । अनन्त प्रदेशी नभ पुद्गल के भेद तीन, संख्याऽसंख्याऽनंत परदेश को वहतु है ॥ काल के प्रदेश एक अन्य पाँच के अनेक, तातैं पंच अस्ति काय ऐसो नामहतु है । काल विन काय जिनराजजूनें यातैं कह्यो, एक परदेशी कैसें काय को धरतु है ॥ २५ ॥

पुग्गल प्रमाणु जोपैं एक परदेश धरै, तोपैं बहु प्रमाण मिलै वहु प्रदेश हैं । नानाकार खंधसों जु कितने प्रदेश होंहि, अनन्त असंख्यसंख्य भेद को धरेश हैं ॥ तातैं सर्वज्ञजूने पुग्गल प्रमाणु प्रति, कह्यो कायधर सदा जाके सब भेप है । देखिये जु नैननिसों पुग्गल के पुंज सबै, यहै लोक माहिं एक सासुतो नरेश है ॥ २६ ॥

जितनों आकाश पुग्गलाणु एक रोकि रह्यो, तितने अकाश को प्रदेश एक कहिये । शुद्ध अविभागी जाके एक के न होय दोय, ऐसे परमाणु के अनेक भेद लहिये ॥ अनन्त परमाणू को योग्य ठौर देवे को जु, ऐसो ही अकाश को प्रदेश एक गहिये । जामें और द्रव्य सब प्रगट विराज रहे, कोऊ काहू मिले नाहिं ऐसो सरदहिये ॥ २७ ॥

इति श्रीपड्द्रव्यपञ्चास्तिकायप्रतिपादनामा प्रथमोऽधिकारः॥१

चौपाई १५ मात्रा ।

आस्रव सँवर बन्ध को खंध, निर्जर मोक्ष पुण्य को बन्ध ।
पापरु जीव अजीव सु भेव, इते पदार्थ कहों संखेव* ॥ २८ ॥

दुर्मिल छंद (सवैया) ३२ मात्रा ।

जिँह आतमके परिणामनिसों, निजकर्महि आस्रव मान लये ।
तिँह भावनको यह नाम लियो, भावास्रव चेतनके जु भये ॥
दरबाश्रव पुद्गलको अयवो, करमादि अनेकन भांति ठये ।
इम भावनिको करता भयो चेतन, दर्वित आस्रव ताहितैं ये २९

मात्रिक कवित्त ।

पाँच मिथ्यात पांच है अव्रत, अरु पंद्रह परमादहिं जान ।
मनवचकाय योग ये तीनो, चतु कषाय सोरहविधि मान ॥
इन्हैं आदि परिणाम जाति बहु, भावास्रव सब कहे बखान ।
तातैं भावकर्म को करता, चिन्मूरत 'भैया' पहिचान ॥ ३० ॥

कवित्त ।

ज्ञानावर्णी आदि अष्ट कर्मनको आयबो, पुग्गल प्रमाणु मिलि नाना भांति थिते हैं । जीव के प्रदेशनि को आयके आछादतु है, कोऊ न प्रकाश लहै, असंख्यात जिते हैं ॥ ऐसो द्रव्य आस्रव अनेक भांति राजत है, ताही के जु वसि जग बसें जीव किते हैं । कहे सर्वज्ञजूने भेद ये प्रत्यक्ष जाके, वेदै ज्ञानवंत जाके मिथ्यामत चिते हैं ॥ ३१ ॥

चेतन परिणामसो कर्म जिते बांधियत, ताको नाव भावबन्ध ऐसो भेद कहिये । कर्म के प्रदेशनिको आतमप्रदेशनि सों, परस्परमिलिवो एकत्व जहां लहिये॥ताको नाव द्रव्यबन्ध कह्यो जिन ग्रन्थनिमैं, ऐसो उभै भेद बन्ध पद्धति को गहिये । अनादिही को जीव यह बन्धसेती बंध्यो है, इनहीके मिटत अनन्त सुख पहिये ॥ ३२ ॥

*संक्षेपसे ।

द्रव्यबंध भेद चारि प्रकृति औ स्थितिबंध, अनुभागबंध परदेश बंध मानिये । प्रकृति प्रदेशबंध दोऊ मनवचकाय, के संयोगसेती होंहि ऐसे उर आनिये ॥ थिति बंध अनुभाग होंय थै कषायसेती, समुझै समस्या एती समुझि प्रमानिये । ऐसे बंधविधि कही ग्रंथन के अनुसार, सवंगविचार सरवज्ञ भये जानिये ॥ ३३ ॥

कर्मनिके आस्रव निरोधिवेके भाव भये, तेई परिणाम भावसंवर कहीजिये । द्रव्यास्रव रोकिवेको कारण सु जे जे होंय, ते ते सर्व भेदद्रव्य संवर लहीजिये ॥ याहीविधि भेद दोय कहे जिनदेव सोय, द्रव्यभाव उभै होय 'भैया' यों गहीजिये । संवरके आवंत ही आश्रव न आवै कहूँ, ऐसे भेद पाय परभाव त्याग दीजिये ॥ ३४ ॥

अहिंसादि पंच महाव्रत पंचसमितिसु, मनवचकाय तीन गुपति प्रमानिये । धरम प्रकार दश बारह सुभावनासु, बाईस परीसह को जीतिवो सुजानिये ॥ बहुभेद चारितके कहत न आवै पार, अति ही अपार गुण लच्छन पिछानिये । एते सब भेद भाव संवरके जानियेजु, समुच्चैहि नाम कहे 'भैया' उर आनिये ॥ ३५ ॥

मात्रिक कवित्त ।

जे परिणाम होंहि आतमके, पुग्गल करम खिरनके हेत ।
अपनों काल पाय परमाणू, तप निमित्ततैं तजत सुखेत ॥
तिहँ खिरिवेके भाव होंहि बहु, ते सब निर्जरभाव सुचेत ।
पुग्गल खिरै सुद्रव्य निर्जरा, उभयभेद जिनवर कहिदेत ॥३६॥

छप्पय छंद ।

सकल कर्म छय करन, भाव अंतरगत राजै ।
तिन भावनिसों कहत, भाव यह मोक्ष सु छाजै ॥

दर्वमोक्ष तहाँ लहत, कर्म जहां सर्व विनासैं।
आतमके परदेश, भिन्न पुद्गलतैं भासैं॥
इहविधि सुभेद द्वै मोक्षके, कहे सु जिनपथ धारिकैं।
यह द्रव्य भावविधि सरदहत, सम्यकवंत विचारिकैं॥३७॥

कवित्त।

शुभभाव तहां जहां शुभ परिणाम होहिं, जीवनिकी रक्षा अरु व्रतनिकों करिबो। तातैं होय पुण्य ताको फल साता-वेदनीय, शुभ आयु शुभगोत बहु सुख बरिबो॥ अशुभ प्रणाम-नितें जीव हिंसा आदि वहु, पापके समूह होंय सुकृतको हरिबो। वेदनी असाता होय छिनकी न साता होय, आयु नाम गोत सब अशुभको भरिबो॥ ३८॥

इतिश्रीसप्ततत्वनवपदार्थ प्रतिपादकनामा द्वितीयोऽधिकारः॥२

छप्पय।

सम्यकदरशप्रमाण, ज्ञान पुनि सम्यक सोहै।
अरु सम्यक चारित्र, त्रिविध कारण शिव जो है॥
नय व्यवहार वखानि, कह्यो जिन आगम जैसे।
निहचै नय अब सुनहु, कहहुँ कछु लच्छन तैसे॥
दर्शन सुज्ञान चारित्रमय, यह है परम स्वरूप मम।
कारणसु मोक्षको आपु तैं, चिद्विलास चिद्रूप क्रम॥३९॥

कवित्त।

जीव व्यतिरेक ये रतनत्रयं आदि गुण, अन्य जड़द्रव्य-निमें नैकुहू न पाइये। तातैं दृगज्ञानचर्ण आतमको रूपवर्ण, त्रिगुणको मूलधर्ण चिदानंद ध्याइये॥ निश्चैनय मोक्षको जु कारण है आप सदा, आपनो सुभाव मोक्ष आपुमें लखाइये। जैसें जैनवैनमें वखाने भेदभाव ऐन, नैनसों निहार 'भैया' भेद यों बताइये।॥ ४०॥

जीवादि पदार्थनिकी जोंन सरधानरूप, रुचि परतीति होय निजपरभास है। ताको नाम सम्यक कहा है शुद्ध दरशन, जाके सरधाने विपरीत बुद्धि नाश है॥ आतम स्वरूपको सुध्यान ऐसे कहियतु, जाके होत होत बहु गुणको निवास है। सम्यक दरस भये ज्ञानहू सम्यक होय, इन्हैं आदि और सब सम्यक विलास है॥ ४१॥

छप्पय।

निजपरवस्तु स्वरूप, ताहि वेदै अरु धारै।
गुन लच्छन पहिचानि, यथावत अंगीकारै॥
संशय विभ्रम मोह, ताहि वर्जित निज कहिये।
ऐसो सम्यक ज्ञान, भेद जाके बहु लहिये॥
तसपद महिमा अगम अति, बुधवलको बरनन करै।
यह मतिज्ञानादिक बहुत, भेद जासु जिन उच्चरै॥४२॥

मात्रिककवित्त।

जासु स्वरूप सबै प्रतिभासत, दर्शन ताहि कहै सब कोय।
भावऽरु भेद विचार विना जहँ,एकहि बेर विलोकन होय॥
जानि जु द्रव्य यथावत वेदत, भेद अभेद करै नहिं जोय।
गुण देखै विकलप विनु 'भैया',दरसन भेद कहावे सोय॥४३॥

कुंडलिया। +

सब संसारी जीवको, पहिले दरशन होय।
ताके पीछें ज्ञान ह्वै, उपजैं संग न दोय॥
उपजै संग न दोय, कोइ गुण किसि न सहाई।
अपनी अपनी ठौर, सबै गुण लहै बड़ाई॥
पैश्रीकेवल ज्ञानको, होय परमपद जब्ब।
तब कहुं समै न अंतरो, होंहिं इकट्ठे सब्ब॥४४॥

+ इस कुण्डलियेमें कुछ विलक्षणता है।

कवित्त ।

पापपरिणाम त्याग हिंसातैं निकसि भाग, धरमके पंथ लाग दयादान कररे। श्रावकके व्रत पाल ग्रंथनके भेद भाल, लगै दोष ताहि टाल अघनिको हररे॥ पंच महाव्रतधरि पंच हू समिति करि, तीनहू गुपति वरि तेरह भेद चररे। कहै सर्वज्ञदेव चारित्र व्योहारभेव, लहि ऐसा शीघ्रमेव वेग क्यों न तररे॥ ४५॥

अभ्यंतर बाह्य दोऊ क्रियाको निरोध तहां,परम सम्यक्त गुण चारित उदोत है। वैन अरु काय दोऊ बाहिर के योग कहे, मन अभ्यंतर योग तीनो रोध होत है॥ ताहीतैं निघट जल जात है संसार रूप, रागादिक मलिनको याही क्रम खोत है। कषाय आदि कर्मके समूहको विनाश करै, ताको नाव सम्यक चारित्रदधिपोत है॥ ४६॥

मात्रिक कवित्त ।

द्वै परकार मोखको कारण, नितप्रति तस कीजे अभ्यास।
रत्नत्रयतैं ध्यानप्राप्त पुन, सुख अनंत प्रगटै निजरास॥
ध्यान होय तो लहै रतनत्रय,छिनमें करै कर्मको नास।
तातैं चिंता त्याग भवकिजन,ध्यान करो धर मन उल्लास॥४७॥

छप्पय ।

मोह कर्म जिन + करहु, करहु जिन रागरु द्वेषहिं।
इष्ट संयोगहि देख, करहु जिन राग विशेषहिं॥
मिलहिं अनिष्टसंयोग, द्वेष जिन करहु ताहि पर।
जो थिरता चित चहहु, लहहु यह सीख मंत्र वर॥
ध्रुवध्यान करहु बहु विधिसहित, निर्विकल्पविधि धारिकैं।
जिमि लहहु परमपद पलकमें,त्रिविध करम अघ टारिकैं॥४८॥

+ मत।

चौपाई १६ मात्रा.

पंच परम पद कीजे ध्यान। तस अक्षरका सुनहु विधान।
तीस पंच अक्षर गणलीजे। नमस्कार नितप्रति तिहँ कीजे॥
'णमों अरहंताणं' सात। 'णमो सिद्धाणं' पंच विख्यात।
'णमो आयरियाणं' पँच होय। 'णमो उवज्झायाणं' रिषि होय॥
'णमोलोये सव्वसाहूणं'। नवमिलि पैंतिस अक्षर गुणं।
शोलह अक्षरको विस्तार। सुनहु भविक परमागमसार॥
'अरहंत सिद्ध आचारज' नाम। 'उपाध्याय' नित 'साधु' प्रणाम।
अरहंत 'सिद्ध' छे अक्षर जान। 'अ सि आ उ सा' पंच प्रधान।
चतु अक्षर 'अरहंत' चितारि। द्वै अक्षर श्री 'सिद्ध' निहारि॥
इक अक्षर 'ओं' सब ही धरे। इनको सुमरन भविजन करे।
ये सबही परमेष्टि लखेय। अन्य सकलगुरुमुख सुन लेय॥

दोहा।

इह विधि पंच परमपदहि, भविजन नितप्रति ध्याय॥
इनके गुणहि चितारतें, प्रगट इन्हीं सम थाय॥ ४६॥

कवित्त।

ऐसें निज आतम अर्हंतको विचारियतु, चार कर्म नष्ट गये ताहीतें अफंद है। ज्ञानदर्शवरणीय मोहिनी सु अन्तराय, येही चारि कर्म गये चेतन सुछंद है॥ दृष्टिज्ञान सुख वीर्य अनन्त चतुष्टै युक्त, आतमा विराजमान मानों पूर्ण चन्द है। परमोद्गारीक देह वसे राग तजे जेह, दोषनितें रह्यो सुद्ध ज्ञान को दिनंद है॥ ५०॥

ऐसे यह आत्मा को सिद्ध कह ध्याइयतु आठोंकर्म देहादिक दोष जाके नसे हैं। लोक ओ अलोक को जु ज्ञानवंत दृष्टिमाहिं, जाकी स्वच्छताई में सुभाव सब लसे हैं॥ अनन्त-गुण प्रगट अनन्तकालपरजंत, थिति है अडोल जाकी पुरुषाकार बसे हैं। ऐसो है स्वरूप सिद्धखेत में विराजमान, तैसे ही निहारि निज आपुरस रसे हैं॥ ५१॥

पंच जु आचारज के जानंत विचार भले,ताही आचारज जू को नाम गुणधारी है। आपहू प्रवर्त्तं इह मारग दयालरूप, औरैं प्रवर्तावनको परउपकारी है॥ दरसनाचार ज्ञानाचार-वीर्याचार चर्णाचार तपाचार में विशेष बुद्धि भारी है। इन्हैं आदि और गुण केतई विराज रहे, ऐसे आचारज प्रति बन्दना हमारी है॥ ५२॥

मात्रिक कवित्त।

सम्यक दरश ज्ञान पुनि सम्यक, अरु सम्यक चारित कहिये।
ये रतनत्रय गुण करि राजत, द्वादश अंग भेदी लहिये॥
सदा देत पदेश धरमको, उपाध्याय इह गुण गहिये।
मुनि गणमाहिं प्रधान पुरुप है, ता प्रति वन्दन सरदहिये।५३।

दोहा।

सम्यक दर्शन संजुगत, अरु सम्यक जहँ ज्ञान।
तिहँ करि पूरण जो भर्यो, सो चारित परमान।
चारित मारग मोक्ष को, सर्वकाल सुध होय।
तिहँ साधत जो साधु मुनि,तिनप्रति वंदत लोय॥५४॥

छप्पय।

जब कहुँ साधु मुनीन्द्र, एक निज रूप विचारैं।
तब तहँ साधु मुनीन्द्र, अघनि के पुंज विदारैं॥
जब कहुँ साधु मुनीन्द्र, शुद्ध थिरतामहिं आवै।
तब तहँ साधु मुनीन्द्र, त्रिविध के कर्म बहावै॥
इम ध्यान करत मुनिराज जब, रागादिक त्रिक टारिके।
तिन प्रति निश्चै कहत जिन, वंदहु सुरति सँभारिके॥ ५५॥

कवित्त।

मनवचकाय तिहूँ जोगनिसों राचि कहुँ, करो मति चेष्टा तुम इनको कदाचिकें। बोलो जिन बैन कहूँ इनसों मगन

ह्वैके, चिंतो जिन आन कछु कहूं तोहि सांचिके ॥ पर वस्तु छांड़ि निज रूपमाहिं लीन होय, थिरता को ध्यान करि आतमसों राचिके । देख्यो जिन जिन वान यहै उतकृष्ट ध्यान, जामें थिर होय पर्म कर्म नाच नाचिके ॥ ५६ ॥

मात्रिक कवित्त।

जब यह आतम करै तपस्या, दाहै सकल कर्मवन कुंज।
श्रुतिसिद्धांत भेद बहु वेदत, जपै पंच पदके गुणपुंज ॥
व्रतपचखान × करै बहु भेदै, इक संयुक्त महा सुख भुंज ।
तब तिहँ ध्यान धुरंधर कहिये, परमानन्द प्राप्ति में मुंज ॥५७॥

कवित्त।

सकलगुण निधान पण्डितप्रधान बहु, दूपणरहित गुण-भूपणसहित हैं । तिनप्रति विनवत नेमिचँद मुनिनाथ, सोधियो जु थाको तुम अर्थ जे अहित हैं ॥ ग्रन्थ द्रव्य सग्रह सु कीनो मैं बहुत थोरो, मेरी कछु बुद्धि अलपशास्त्र जो महित हैं । तातें जु यह ग्रन्थ रचनाकरी है कछु, गुण गहि लीज्यो एती, विनती कहति हैं ॥ ५८ ॥

इति श्री द्रव्यसंग्रहग्रन्थे मोक्षमार्गकथनं तृतीयोऽधिकारः ।

दोहा ।

नेमचन्द मुनिनाथ ने, इहविध रचना कीन ।
गाथा थोरी अर्थ बहु, निपट सुगम करदीन ॥ १ ॥

छप्पय ।

ज्ञानवंत गुण लहै, गहै आतमरस अमृत ।
परसंगत सब त्याग, शांतरस वरैं सु निज कृत ॥
वेदै निज पर भेद, खेद सब तजैं कर्मतन ।
छेदै भवथिति वास, दास सब करहिं अरिनगन ॥

× प्रत्याख्यान = त्याग.

इहविधि अनेक गुण प्रगट करि, लहै सुशिवपुर पलकमें ।
चिद्विलास जयवंत लखि, लेहु 'भविक' निज झलक में ॥ २ ॥

दोहा ।

द्रव्यसंग्रह गुण उदधिसम, किहँविधि लहिये पार ।
यथाशक्ति कछु वरणिये निजमति के अनुसार ॥३ ॥

चौपाई १५ मात्रा.

गाथा मूल नेमिचँद करी । महा अर्थनिधि पूरण भरी ॥
बहुश्रुत धारी,जे गुणवंत । ते सब अर्थ लखहिं चिरतंत ॥४॥
हमसे मूरख समझैं नाहिं । गाथा पढ़ै न अर्थ लखाहिं ॥
काहू अर्थ लखे बुधि ऐन । बांचत उपज्यो अति चितचैन॥५॥
जो यह ग्रंथ कवितमें होय । तौ जगमाहिं पढ़ै सब कोय॥
इहिविधि ग्रंथ रच्यो सुविकास । मानसिंह व भगोतीदास॥६॥
संवत सत्रहसे इकतीस । माघसुदी दशमी शुभदीस ॥
मंगल करण परमसुखधाम । द्रवसंग्रहप्रति करहुँ प्रणाम ॥७॥

इति श्रीद्रव्यसंग्रहमूलसहित कवित्तबंध समाप्तः ।

पुण्य—पाप—फल । [कवित्त]

ग्रीषम में धूप परै तामें भूमि भारी जरै,
फूलत है आक पुनि अति ही उमहिकैं ।
वर्षाऋतु मेघ झरै तामें वृक्ष केई फरै,
जरत जवासा अघ आपुहीतैं डहिकैं ॥
ऋतु को न दोष कोऊ पुण्य पाप फलै दोऊ,
जैसें जैसें किये पूर्व तैसें रहै सहिकैं ।
केई जीव सुखी होहिं केई जीव दुखी होहिं,
देखहु तमासो 'भैया' न्यारे नेकु रहि कैं ॥

द्रव्यसंग्रह-मूल ।

[श्रीमन्नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती कृत]

जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं । देविंदविंद वंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥ जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो । भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई ॥ २ ॥ तिक्काले चदुपाणा इंदिय बलमाउ आणपाणो य । ववहारा सो जीवो णिच्चयणयदो दु चेदणा जस्स ॥ ३ ॥ उवओगो दुवियप्पो दंसण णाणं च दंसणं चदुधा । चक्खु अचक्खू ओही दंसणमध केवलं णेयं ॥४॥ णाणं अट्ठ वियप्पं मदिसुदओही अणाणणाणाणि । मणपज्जय केवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च ॥ ५ ॥ अट्ठ-चदुणाणदंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं । ववहारा सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं ॥ ६ ॥ वण्ण रस पञ्च गंधा दो फासा अट्ठ णिच्चया जीवे । णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो ॥ ७ ॥ पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णिच्चयदो । चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥ ८ ॥ ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मप्फलं पभुंजेदि । आदा णिच्चयणयदो चेदणभावं खु आदस्स ॥ ९ ॥ अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा । असमुहदो ववहारा णिच्चयणयदो असंखदेसो वा ॥ १० ॥ पुढविजलतेउवाऊवणप्फदी विविहथावरेइंदी । विगतिग चदुपंचक्खा तसजीवा होंति संखादी ॥ ११ ॥ समणा अमणा णेया पंचेन्दिय णिम्मणापरे सव्वे । बादरसुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य ॥ १२ ॥ मग्गण-गुणठाणेहिं य चउदसहिं हवंति तह असुद्धणया । विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥ १३ ॥ णिक्कम्मा अट्ठगुणा

किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा । लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादव-येहिं संजुत्ता ॥ १४ ॥ अज्जीवो पुण णेओ पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं । कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥ १५ ॥ सद्दो बंधो सुहमो थूलो संठाणभेदतमछाया । उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥ १६ ॥ गइपरि-णयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी । तोयं जह मच्छाणं अच्छंताणेव सो णेई ॥ १७ ॥ ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गल जीवाण ठाण सहयारी । छाया जय पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई ॥ १८ ॥ अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं । जेण्हं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥ १६ ॥ धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये । आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो ॥ २० ॥ दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो । परिणामादीलक्खो वट्टण-लक्खो य परमट्ठो ॥ २१ ॥ लोयायासपदेसे इक्केक्के जे ठिया हु इक्केक्का । रयणाणं रासीमिव ते कालाणू असंख-दव्वाणि ॥ २२ ॥ एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददोदव्वं । उत्तं कालविजुत्तं णायव्वा पंच अत्थिकाया दु ॥ २३ ॥ संति जदो तेणेदे अत्थीति भणंति जिणवरा जम्हा । काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥ २४ ॥ होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे । मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ ॥ २५ ॥ एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदे-सदो होदि । बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु ॥ २६ ॥ जावदियं आयासं अविभागी पुग्गलाणुवट्ठद्धं । तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥ २७ ॥ आसवबन्धण-संवरणिज्जरमोक्खा सुपुण्णपावा जे । जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पभणामो ॥ २८ ॥ आसवदी जेण कम्मं परिणा-

मेणप्पणो स विण्णेओ । भावासवो जिणुत्तो कम्मासवणं परो होदि ॥ २९ ॥ मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोहादओऽथ विण्णेया । पण पण पणदह तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥ ३० ॥ णाणावरणादीणं जोग्गं जं पुग्गलं समासवदि । दव्वासवो स णेओ अणेयभेओ जिणक्खाओ ॥ ३१ ॥ बज्झदि कम्मं जेण दु चेदणभावेण भावबन्धो सो । कम्मादपदेसाणं अण्णोण्णपवेसणं इदरो ॥ ३२ ॥ पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदा दु चदुविधो बन्धो । जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागा कसायदो होंति ॥ ३३ ॥ चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेऊ । सो भावसंवरो खलु दव्वासवरोहणे अण्णो ॥ ३४ ॥ वदसमिदीगुत्तीओ धम्माणुपिहा परीसहजओ य । चारित्तं बहुभेयं णायव्वा भावसंवरविसेसा ॥ ३५ ॥ जहकालेण तवेण य भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण । भावेण सडदि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा ॥ ३६ ॥ सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो । णेओ स भावमोक्खो दव्वविमोक्खो य कम्मपुधभावो ॥ ३७ ॥ सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा । सादं सुहाउ णामं गोदं पुण्णं पराणि पावंच ॥ ३८ ॥ सम्मद्दंसण णाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे । ववहारा णिच्चयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा ॥३९॥ रयणत्तयं ण वट्टइ अप्पाणं मुयतु अण्णदवियम्हि । तम्हा तत्तियमइओ होदि हु मोक्खस्स कारणं आदा ॥ ४० ॥ जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु । दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदि जम्हि ॥ ४१ ॥ संसय विमोहविब्भमविवज्जियं अप्पपरसरूवस्स । गहणं सम्मं णाणं सायारमणेयभेयं च ॥ ४२ ॥ जं सामण्णं गहणं भावाणं णेव कट्टु मायारं । अविसेसिदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णये समये ॥ ४३ ॥ दंसण-

पुव्वं णाणं छदुमत्थाणं ण दुण्णि उवओगा । जुगवं जम्हा केवलिणाहे जुगवं तु ते दो वि ॥ ४४ ॥ असुहादो विणिवित्ती सुहेपवित्ती य जाणचारित्तं । वदसिमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिण भणियं ॥ ४५ ॥ वहिरब्भंतर किरियारोहो भवकारणप्पणासट्ठं । णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारित्तं ॥४६॥ दुविहं पि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा । तम्हा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समब्भसह ॥ ४७ ॥ मा मुज्झह मा रज्जह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठअत्थेसु । थिरमिच्छह जइ चित्तं विचित्तझाणप्पसिद्धीये ॥ ४८ ॥ पणतीस सोल छप्पण चदु दुगमेगं च जवइ झाएह । परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण ॥४९॥ णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमईओ सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो ॥ ५० ॥ णट्ठट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्यजाणओ दट्ठा । पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो ॥ ५१ ॥ दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे । अप्पं परं च जुंजइ सो आयरिओ मुणी झेओ ॥ ५२ ॥ जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवएसणे णिरदो । सो उवझाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स ॥ ५३ ॥ दंसणणाणसमग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं । साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स ॥ ५४ ॥ जं किंचि वि चिंततो निरीहवित्ती हवे जदा साहू । लद्धूणय एयत्तं तदाहु तं तस्स णिच्चयं झाणं ॥ ५५ ॥ मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह किं वि जेण होइ थिरो । अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव परं हवे झाणं ॥ ५६ ॥ तवसुदवदवं चेदा झाणरहधुरंधरो हवे जम्हा । तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सदा होह ॥ ५७ ॥ दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचय चुदा सुदपुण्णा । सोधयंतु तणुसुत्तधरेण णेमिचंदमुणिणा भणियं जं ॥ ५८ ॥

जुआ का ड्रामा ।

ज्वारी—आओ खेलें जुआ आओ खेलें जुआ ।
पल में फ़क़ीर अमीर हुआ ॥
विरोधी—मत खेलो जुआ मतखेलो जुआ—
पल में अमीर फकीर हुआ ॥
जूएबाजकी सुनो कहानी अब किनलाके भाई ॥
द्रोपदि नारी पांडव हारी शर्म जरा नहिं आई ॥१॥मत०
ज्वारी—जुआ जो खेला दुर्योधन ने जीती पांडव नार ।
एक घड़ी में बन गये थारो पर नारी भरतार ॥२॥आओ०
विरोधी—जुएबाज तस्कर डाकू का कौन करे इतबार ।
जावे जिधर गालियाँ पावे मिलता नहीं उधार ॥३॥मत०
ज्वारी—जुएबाज औ चोर डकेतू कौन करे तकरार ।
जावे जिधर खजाना पावे मिलें एक के चार ॥४॥आओ०
विरोधी—जुएबाज के पास जो होता इक दम देत लगाय ।
बच्चे चाहे मरें भूख से करें नहीं परवाह ॥५॥मत०
ज्वारी—जुएबाज के पास जो होता करता मौज बहार ।
ऐश उड़ावै घर में नारी मजा करे परवार ॥६॥आओ०
विरोधी—अगर जो जावे हार जुए में फिर चोरी वो करते ।
हर दम लानत राजद्वारे दण्ड भोगने पड़ते ॥७॥मत०
ज्वारी—बेशक जावें हार जुए में फिकर नहीं कुछ करते ।
अगले दिन फिर जीत के आवें मोटर गाड़ी चलते ॥८॥आओ०
विरोधी—सब विषयों में विषय ये खोटा समझो मेरे भाई ।
नर्क बोच ले जाने वाला सच्ची बात सुनाई ॥९॥मत०
ज्वारी—सुनी नसीहत तेरी भाई दिल मे कीना ख्याल ।
इस पापी चांडाल जुए ने कर दीना कंगाल ॥१०॥नहिं०

विरोधी—जो चाहो कल्यान तो प्यारे सब से नियम करावो ।
एस. आर, कँहू लानत भेजो खाक न इसमें पावो ॥११॥मत०
ज्वारी—जुआ बड़ा जंजाल भाइयो मत लो इसका नाम ।
पैसे मारो फेंक जमी से दूर से करो सलाम ॥१२॥
नहिं खेलें जुआ, नहिं खेलें जुआ—आज से हमने नियम लिया ॥

सट्टे का ड्रामा ।

सट्टेबाज—जरा सट्टा लगा जरा सट्टा लगा, घर बैठे तू चैन उड़ा ।
विरोधी—मत सट्टा लगा मत सट्टा लगा कर देगा यह तुझको तवाह
सट्टेबाज की कहूं कहानी सुनओ मेरे भाई ।
धन तो सारा दिया लुटा फिर होश ज़रा नहिं आई ॥ मत०
सट्टेबाज—सट्टे की कुछ कहूं हकीकत सुनो लगाकर कान ।
एक अंक के निकले से ही हो जाते धनवान ॥ जरा०
विरोधी—एक अंक की आशा करतें हो जाते कंगाल ।
जगह २ पर मारे फिरते वुरा होय अहवाल ॥मत०
सट्टेबाज—एक दाव जो आजावे बस फिर हो मौज बहार ।
एक के बदले मिलें कई सौ क्या अच्छा व्यौहार ॥जरा०
विरोधी—सट्टेबाज कोइ धनी न देखा सब देखे कंगाल ।
बुरा शौक सट्टे का भाई कर देता पामाल ॥मत०
सट्टेबाज—सट्टे में जो जीत के आवे पावे एश आराम ।
मजा करे परिवार जो सारा क्या अच्छा ये काम ॥जरा०
विरोधी—सट्टे के शौकीन जो भाई खोजें साधु फकीर ।
सौ सौ गाली सुनकर आवैं क्या उलटी तकदीर ॥मत०
सट्टेबाज—साधु संत जो गाली देते तू क्या जाने यार ।
सट्टेबाज ही अर्थ निकालें दिल में सोच विचार ॥
विरोधी—सट्टे में कुछ नहीं भलाई—हट छोड़ शीघ्र तू भाई ।

सी. एच, लाल कहैं तुमसे, हो आखिर में दुखदाई ॥
सट्टेबाज—सुनी नसीहत तेरी भाई दिल में किया खयाल।
इस पापी सट्टे ने हमको कर दीना कंगाल
नहिं सट्टा लगाऊँ ०२, आज से लो मैं हलफ उठाऊं॥

चोरी का ड्रामा।

चोर—चलो चोरी करें ०२, जाकर किसी का धन हम हरें—टेक
चोरी करने वाले यारो मन माना धन पाते।
मजे करें हैं अपने घर में बैठे ऐश उड़ाते॥ चलो०
विरोधी—मत चोरी करो ०२, नाहक किसी का धन क्यों हरो,
इस दुनियां में धन है भाइयो प्राणों से भी प्यारा।
जो कोइ चोरी करके लावे वो होवे हत्यारा॥ मत०
चोर—चोरी करने वाले यारो कभी न हों कङ्गाल।
सारा कुनबा ऐश उड़ावे मिले मुफत का माल॥ चलो०
बिरोधी—चोर उचक्के डाकू का कोइ नहीं करे इतबार।
घर बाहर नहिं इज्जत पावे बुरा कहे संसार॥ मत०
चोर—चोर उचक्के डाकू जग में जमा मर्द कहलाते।
नाम हमारा सुन कर भाई सभी लोग थर्राते॥ चलो०
विरोधी—बुरा काम चोरी है भाई मतलो इसका नाम।
पड़े जेलखाने में जाकर नाहक हों बदनाम॥ मत०
चोर—चोरी करने वाले यारो जरा फिकर नहिं करते।
क़ैद भलेहो जांय वहां भी पेट मजे से भरते॥ चलो०
बिरोधी—क्या करता तारीफ कैदकी सुनकर दिल थर्रावे।
चक्की पीसें बुनें बोरिया मार रात दिन खावें॥ मत०
चोर—जो असली हैं चोर कैद में नहीं मार वह खाते।
करके काम मज़े से सारा मुफ्त रोटियां पाते॥ चलो०

विरोधी—नहीं चैन दिन रात क़ैद में भरते रहें तवाई ।
महा कष्ट से प्राण छोड़ कर सहैं नरक दुख दाई ॥ मत०
चोर—नरकों के दुख का कुछ भइया तुम मत करो विचार ।
देखा भाला नहीं किसी ने झूठ कहे संसार ॥ चलो०
विरोधी (शेर)-नरकों के दुख की कुछ तुम्हें यारो खबर नहीं ।
दूसरों का धन चुराओ फिर भी मन में डर नहीं ॥
मारें छेदें चीरें फारें नर्क गति में नारकी ।
याद रक्खो चोर का इसके सिवा कोई घर नहीं ॥
गर तुम्हें मंजूर होवे बहतरी अपनी सदा ।
मत हरो धन और का इसका समर अच्छा नहीं ॥ मत०
चलत—जो चोरी से नहिं डरते, वो दुख नरकों में पाते ।
मान कहा मूरख अज्ञानी चोरी कभी न करना ॥ मत०
चोर—अब मेरी समझ में आई बेशक है बहुत बुराई ।
मत करो इसे कोई भाई जो चाहो सदा भलाई ॥
त्याग दिया चोरी को मैंने जो जग में दुखदाई ।
नहिं चोरी करूं (२ बार) आज से लो मैं नियम करूं ॥

वेश्या-निषेध ड्रामा ।

वेश्या प्रेमी—ज़रा रण्डी नचा, ज़रा रंडी नचा ।
दौलत का दुनियां में यह है मज़ा ॥ टेक ।
विरोधी—मत रंडी नचा मत रंडी नचा ।
नरकों में देगी ये तुझको पहुंचा ॥
फिजूल करो बरबाद रुपैया ज़रा तो सोचो भाई ।
देख २ सन्तान तुम्हारी बिगड़ जाय अन्याई ॥ १ ॥ मत०
वेश्या प्रेमी—तालीम सीखने रण्डी घर औलाद हमारी जावे ।
सभी बात में ताक बने, फिर कभी खता नहिं पावे ॥ ज़रा०

विरोधी—रंडी की खातिर जो देखें सो नारी ललचावे।
मनमें उनके उठे उमंगे, रंडी स्वांग बनावे॥ ३ ॥मत०
वेश्या प्रेमी—समधी के दरवाजे गाली रण्डी आय सुनावे।
दे जवाब समधिन जब इसको बाग बाग हो जावे॥४॥जरा०
विरोधी—नाच देखने के शौकीनो जरा सुनों दे कान।
तुम्हरे रुपया से कुरबानी होवे वे परिमान॥ ५ ॥मत०
वेश्या प्रेमी—हम रुपया रंडी को देते ना कुछ करते भाई।
गाना सुन कर आनँद पावें चित्त शान्ति होजाई॥६॥जरा०
विरोधी—रातों जगने से महफिल में होते हो बीमार।
बहुत जगह बुनियाद इसी पर चलत खूब पैजार॥७॥मत०
वेश्या प्रेमी—महफिल में रंडी की शौहरत सुनकर सब आजावें।
रौनक बढ़े विवाह की भारी रुपया सभी चढ़ावें॥८॥जरा०
विरोधी—रंडी का सुन नाम सभा से धार्मिक जन उठजावें।
नंगों के बैठे रहने से मजा नहीं कुछ आवे॥९॥मत०
वेश्या प्रेमी—बिन इसके रौनक नहिं आवे सूनी लगे बरात।
जैसे तैसे दिवस बितावें कटे न खाली रात॥१०॥जरा०
विरोधी—धर्मोपदेशक बुलवा करके कीजै धर्मप्रचार।
रंडी भड़वे तुम्हें बनावें करदें खाना ख्वार॥११॥मत०
वेश्या प्रेमी—नित्य नहीं हम नाच करावें कभी २ करवावें।
नेग टेहले के साथै हैं नहीं खता हम पावें॥१२॥जरा०
विरोधी—एक दफे का लगा ये चसका कर देता है ख्वार।
धन दौलत सब खोकर प्यारे हो जाता बेजार॥१३॥मत०
वेश्या प्रेमी—सुनी नसीहत तेरी भाई मनमें हुआ विचार।
रुपया तबाह होके क्या जाना होगा नर्क मझार॥जरासच्ची बतार
विरोधी—सत्य कहूं मैं नर्क पड़ोगे सुनलो रण्डी वालो।
कहे जवाहर जैनी तुम से कसम धरम की खालो॥१५॥मत०

वेश्या प्रेमी—सुन कर शिक्षा तेरी भाई कसम धरम की खाऊं।
नाच देखने और कराने का मैं हलफ उठाऊं॥ १६॥
नहिं रण्डी नचाऊं नहिं रण्डी नचाऊं-आजसे लो मैं हलफ उठाऊं॥

शराब का ड्रामा।

शराबी-भरजाम भरजाम भरजाम पियूं गुल-लाला, जैन्टलमैन मैं आला, हो जिसपै उसकी रहमत उसे मिलती ऐसी न्यामत।
विरोधी-जो पिये बनादे बहसो, यह जानकी दुश्मन ऐसी।
लख लानत मुंह पै थूक, अमल ऐसे की ऐसी तैसी॥
क्वा कितनां ही हो ख्वांदा, झट पट कर देती अन्धा।
ये अकल पै लावै जन्दा, है बड़ा फैल यह गन्दा॥
शराबी-रम विस्की बरान्डी देशी, पीलो दिल चाहै जैसी।
विरोधी-लख लानत मुंह पर थूक, अमल ऐसीकी ऐसो तैसी।
शराबी-भरजाम भरजाम भरजाम पियूं गुललाला, बनूं जन्टलमैन मैं आला, हो जिसपै उसकी रहमतउसे मिलती ऐसीन्यामत
विरोधी-दे त्याग नशा ये भाई, ज़र दूर की करै सफाई।
जिसने यह मुंह से लगाई, ना पास रही इक पाई॥
शराबी-ये बात बनाते कैसी, करते दीवाने जैसी।
विरोधी-लख लानत मुंह पर थूक अमल ऐसी को ऐसी तैसी।
शराबी-क्या मजेदार यह प्याला पीकर हो जा मतवाला।
जिसको यह मिला निवाला; उसे समझो किस्मतवाला
विरोधी-वाह मजेदार यह प्याला, नाली में गिराने वाला।
जूतों से पिटाने वाला, इज्जत को घटाने वाला॥
शराबी-यह मस्त बनावे ऐसा बस बादशाह हो जैसा।
विरोधी—ऐ! अहले हिंद तुम को डुबोया शराब ने।
जाहो, जलाल मरतबा, खोया शराब ने॥

बे सुध पड़े हो ऐसे कि अपनी खबर नहीं।
उल्लू बना दिया तुम्हें गोया शराब ने॥
अब मंजिले तरक्की परे पहुंचोगे किस तरह।
कांटों का बीज राह में बोया शराब ने॥
ग़ैरत नहीं ज़रा तुम्हें देखो तो हाल को।
फेहरिश्त नंगी नाम को धोया शराब ने॥

(चलत)-यह हालत देखो कैसी, बिलकुल है मुर्दा जैसी।
अब होश में आओ, छोड़ नशे को, इसको ऐसी तैसी॥
शराबी-क्या अजब हाल हुआ मेरा, किस बदमस्ती ने घेरा।
यह कैसा छाया अंधेरा, दिखता नहिं शाम सवेरा॥
विरोधी-तू हठ को छोड़ दे भाई, नहिं इसमें कोइ बड़ाई।
यह नशा बड़ा दुखदाई, कहता हूं सुन चितलाई॥
शराबी-तेरी मान नसीहत छोड़ूं, बोतल को ज़मी से तोड़ूं।
ना पियूं कभी ये प्याला, बेइज़्ज़त करने वाला॥
ना पियो कोई ये प्याला, लानत लानत यह प्याला।

भांग का ड्रामा ।

पीनेवाला-चलो भँगिया पियें चलो भँगिया पियें, इस बिन मूरख योंही जियें, कुंडी सोटा बजे दमादम छने छना छन भङ्ग, मजा ज़िन्दगी का अब यारो हो चुल्लू में भङ्ग॥
विरोधी-मत भँगिया पियो २, इससे अच्छे योंही जियो।
खुश्की लावे. अक्ल नशावे, बे सुध करिके डारे,
होश रहे नहिं दीन दुनी की बिना मौत ही मारे।
पीनेवाला—तू क्या जाने स्वाद भंगका, है यह रस अनमोल।
मगन करे आनन्द बढ़ावे, दे घट के पट खोल॥ चलो०
विरोधी—सर घूमे अरु नथने सूखें, नींद घनेरी आवे।

कलकी बात रही कल ऊपर, भूल अभी को जावे ॥ मत०
पीनेवाला—भंग नहीं यह शिव की बूटी, अजर अमरहै करती।
जन्म जन्म के पाप नशा कर सब रोगों को हरती॥चलो०
विरोधी—भंग नहीं यह विष की पत्ती, करे मनुष को ख्वार।
जीते जी अन्धा कर देती, फिर नर्कों दे डाल ॥ मत०
पीनेवाला—कुण्डो में खुद बसें कन्हैया, औ सोटे में श्याम।
विजया में भगवान बसे हैं, रगड़ रगड़ में राम ॥ चलो०
विरोधी—अरे भंग के पीनेवाले भङ्ग बुद्धि हरलेत।
होशयार औ चतुर मर्द को, खरा गधा कर देत ॥ मत०
पीनेवाला—झूठी बातें फिरे बनाता, ले पी थोड़ी भंग।
एक पहर के बाद देखना कैसा छावै रंग ॥ चलो०
विरोधी—लानत इस पर, लानत तुझ पर, चल चल होजा दूर।
भंग पिये भंगड़ कहलावे अरे पातकी क्रूर ॥ मत०
पीनेवाला—भंग के अदभुत मजे को तूने कुछ जाना नहीं।
रंग को इसके जरा भी मूढ़ पहचाना नहीं ॥
आंख में सुरखी का डोरा मन में मौजों की लहर।
शांति आनँद विन इसी के कोइ पा सकता नहीं ॥
(चलत) साधू संत भङ्ग सब पीते क्या कंगाल अमीर।
ईश्वर से लौलीन करावै ये इसकी तासीर ॥ चलो०
विरोधी—है नहीं यह भङ्ग कातिल अक्ल की तलवार है।
वेहोश करती है यही जानों महा मुरदार है ॥
खौफ जिनको नर्क का है वह इसे छूते नहीं।
बात सच मानो हमारी नर्क का यह द्वार है ॥
(चलत) यह सब झूठी बातें भाई भंग नरक में डाले।
आखें खोल जगत में देखो लाखों काम विगाड़े ॥ मत०
पीनेवाला—सुनकर यह उपदेश तुम्हारा हमें हुआ आनंद।

लो मैं छोड़ी भंग आज से ईश्वर की सौगन्द ॥ मत०

विरोधी—भला किया ये काम आपने दई भंग जो छोड़ ।
सब से नियम कराओ अब तो कूंडी सोटा फोड़ ॥ मत०

पीनेवाला—कुंडी फोड़ूं सोटा तोड़ूं भङ्ग सड़क पर डारूं ।
मत पीना अब भङ्ग भाइयो बारम्बार पुकारूं ॥ मत०

हुक्का का ड्रामा ।

हुक्केबाज—आहाहा क्या अच्छा हुक्का है ।
है कोई हुक्के का पीने वाला ॥

(चलन) क्या हुक्का बनाये आला, भर भर पीलो तुम लाला ।
जो पीवें इसे पिलावें वह लुत्फ ज़िन्दगी पावें ॥

विरोधी—बुरी आदत है यह भाई मत इसकी करो बड़ाई ।
दूर दूर हो लानत लानत क्यों बनता सौदाई, ॥
यह तन को खूब जलावे. बलग़म को बहुत बढ़ावे,
जो मुंह से इसे लगावे, ना लज़्ज़त कुछ भी पावे ॥

हुक्के बाज़—जिसको इक चिलम पिलाई बलगम की करी सफाई ।

विरोधी—दूर दूर हो लानत लानत क्यों बनता सौदाई ॥

हुक्केबाज—क्या हुक्का बना यह आला, भरभर पीलो तुम लाला ।
जो पीवें इसे पिलावें वह अकलमन्द कहलावें ॥

विरोधी—जो हुक्के का दम लावें, ले चिलम आग को जावें ।
सौ सौ गाली फिर खावें यह मान बड़ाई पावें ॥

हुक्केबाज—यह कैसी बात बनाई कुछ कहते शरम न आई ।

विरोधी—दूर दूर हो लानत लानत, क्यों बनता सौदाई ॥

हुक्केबाज—क्या खूब बना यह आला, गङ्गाजल इसमें डाला ।
पीते हैं अदना आला, यह घट में करे उजाला ॥

विरोधी—क्या खाक बना यह आला, दिल जिगर करे सब काला ।

अच्छा यह नशा निकाला, दोज़ख में गिराने वाला
हुक्केबाज—यह महफिल का सरदार, क्या जाने मूढ़ गंवार।
विरोधी—कब तक कि हुक्का नोशी मुहल्ला जगाओगे।
बंशी बजा के नाग के कबतक खिलाओगे॥
एक दिन यह मारे आस्तीं डसेगा बस तुम्हें।
पंजे से ऐसे देव के बचने न पाओगे॥
गर चाहते हो जिन्दगी तो इसको तरक करो।
खुद अपना वरना खिरमने हस्ती जलाओगे॥
(चलत)—जिन इससे प्रीति लगाई, आखिर में हुई दुखदाई।
मान कहा क्यों पागल बनता कहां गई चतुराई॥ मत०
हुक्केबाज—तेरी मान नसीहत छोड़ूं, ले अभी चिलम को तोड़ूं।
नहचे को तोड़ मरोड़ूं, हुक्के को जमी से फोड़ूं॥
ना पीऊं कभी यह हुक्का, लानत लानत यह हुक्का।
न पियो कोई यह हुक्का, वेशक लानत यह हुक्का॥

सिगरेट का ड्रामा।

पीनेवाला—यारो मुझे सिगरेट या बीड़ी दिलाना।
बीड़ी दिलाना, माचिस लगाना कैसा यह फैशन बना॥
विरोधी—शेम २—छोड़ो जरा सिगरेट का पीना पिलाना।
पीना पिलाना दिल को जलाना नाहक क्यों करते गुनाह॥
पीने-हूर२-है जेब खाली डिबिया भी खाली छूटता नहीं यह नशा।
विरोधी-शेम२मदिरा पड़ी इसमें लीद भरीहै लानतहै लानतहै नशा॥
पीने-हूर२ बातें हैं कैसी दीवानों यह जैसी गप शपलगातेहो क्या।
विरोधी-शेम२-होवेगी ख्वारी नरकों की तैयारी इसको तोत्यागो जरा
पीने-हूर२-पीवो पिलावो जरा मुहको लगावो कैसा यह शीरीं अहा
विरोधी-शेम२-शोएल पुकारे जिन दास प्यारे सोचो तो दिल मेंजरा

पीने-शीमर-सोचा विचारा दिलमें यह धारा बेशक बुरा है नशा ॥
विरोधी—शाबाश—छोड़ो जरा सिगरेट का पीना पिलाना।
सिगरेट को तोड़ूं डिबिया मरोड़ूं लानत है लानत नशा ॥
विरोधी—शाबाश-छोड़ो जरा सिगरेट का पीना० ॥

वृद्ध विवाह का ड्रामा।

वृद्ध—मैं तो शादी करूं-मैं तो शादी करूं।
शादी से खाना आबादी करूं ॥
नई नवेली छैल छबीली इक जोरू ब्याह लाऊं।
बूढ़ा होकर दुलहा कहाऊं सिर पर मौर धराऊं ॥मैं तो०
सुधारक—मत शादी करे, मत शादी करे, भारतकी क्यों बरबादी करे
साठ वर्ष का बूढ़ा खूसट, मुंह में रहा न दांत।
गड़ गड़ हाले गर्दन तेरी, थर थर कांपे गात ॥ म त०
बूढ़ा—साठा पाठा कहलाता हूं, तू क्या जाने यार।
देख मेरे चेहरे की रंगत, जैसे लाल अनार ॥ मैं तो०
सुधारक—चहरा तेरा है मुरझाया, पोले पड़ गये गाल
बातें करते हुये टपकती, मुंह से टप-टप राल ॥ मत०
बूढ़ा—हाथ पैर से हूं मैं चंगा, बदन गठीला मेरा।
जो इक थप्पड़ कसकर मारूं, तो मुंह फिरजा तेरा ॥मैं०
सुधारक—बस बस रहो बढ़ो मत आगे, बड़े न बोलो बोल।
आंखों के अन्धे हो फिर भी देखो आँखें खोल ॥ मत०
बूढ़ा—देख मेरी आंखों का सुरमा, कैसा लगता प्यारा।
हाथों कंगन पहन लगूं मैं, जैसे राज दुलारा ॥ मैं तो०
सुधारक—बेटे पोते औ पड़पोते, कुटुम तेरे घर बारी।
तुझे लगी शादी की बिलकुल, गई तेरो मत मारी ॥मत०
बूढ़ा—बेटे पोते अपने घर के, मेरा तो घर खाली।

घर की लाली जभी रहे जब, हो घर में घरवाली ॥मैंतो०

सुधारक—घरवाली क्या तेरी जान को रोवेगी नादान ॥

आज कराता है तू शादी कल चढ़ चले विमान ॥ मत०

शेर—बैठकर अर्थी पे तू कल जायगा शमशान में ॥

कर के जायगा दुलहन को रांड तू इक आन में ॥

क्या भरोसा ज़िन्दगी का और फिर बूढ़ा है तू,

पैर, तेरे गोर में और हाथ कबरिस्तान में ॥

क्यों करो ज़ालिम किसी की ज़िन्दगी बरबाद तू,

क्या धरा अब ब्याह में औ ब्याह के अरमान में ॥

गर तू "ज्योति" चाहता है आक़बत में हो भला,

मन लगा भगवान में और धन लगा पुण्य-दान में ॥

(चलत) मत कर शादी, घर बरबादी, तुझे सलाह दी सुखकारी,

सोच समझ कर देख जरा तू इसमें निकलेगी ख्वारी

मान मान तू कहना मेरा, कर शादी से अब इनकारी,

सोच समझ कर देख—मत शादी करे०

बूढ़ा—कुछ परवा की बात नहीं जो कल हूं रथी सवार ।

करवा फोड़े चुड़ियां तोड़े नई नवेली नार ॥ मैं तो०

शेर—क्या भला यह कम नफा है जो हो घर में स्त्री,

तोड़ चूडियां फोड़ करवा सिर की फाड़े चूनरी ।

और घर के सब करेंगे शोक लोकालाज को,

पर वह सच्चे दिल से मेरा शोक माने गम भरी ॥

एक तो वैसे ही मरना है बुरा संसार में ।

और फिर रंडवे का मरना बात है कितनी बुरी ॥

यह समझ कर मैं इरादा ब्याह करने का किया,

अब नहीं मानूंगा 'ज्योति" है इसी में बहतरी ॥

होवे शादी, घर आबादी, मन की मुरादी बर आवे,
हट्टा कट्टा हूं मैं पट्ठा, तू क्यों रोड़ा अटकावे ।
शादीमें जो मजा, तू जानता है क्या, बातें अब न बना,
बनने दे हां बन्ना ॥ बन्ना बनूंगा, ब्याह करूंगा, तू क्या मुझको
समझे हट्टा कट्टा हूं मैं पट्ठा, तू क्यों रोड़ा अटकावे ॥ मैं तो०
सुधारक—मैं कहता हूं तेरे भले की समझ समझ नादान,
बन्ना बने मत, ब्याह करे मत, बात मेरी ले मान ॥ मत०
बूढ़ा—नहीं भले की बात कहीं तैं कही बुरे की सारी,
जा घर अपने बैठ छोकरे अकल गई क्यों मारी ॥ मैं तो०
सुधारक—हाय हाय बूढ़ों के ब्याह ने किया देश का नाश,
कई लाख भारत की विधवा भोग रहीं हैं त्रास ॥ मत०
बूढ़ा—फिर क्या भारत की राडों का मैं हूं जिम्मेवार,
उन कमबख्तों के सिर आकर पड़ी कर्मकी मार ॥ मैंतो०
सुधारक—नहीं कर्म की मार पड़ी यह तुझ जैसों ने कीना,
खुशी र से शादी करके महापाप सिर लीना ॥ मत०
बूढ़ा—बात कही तैं सच्ची प्यारे आंख खुली अब मेरी,
मैं नहिं हरगिज ब्याह करूंगा सुनी नसीहत तेरी,
नहिं शादी करूं, नहिं शादी करूं आजसे लो मैं नियमकरूं

बाल विवाह का ड्रामा ।

सरला—मुख तेरा खुश दीखता, अरु प्रमुदित सब गात ।
बहिन बतादे क्या भई, आज खुशी की बात ॥
विमला—हाँ बहिना जो सत्य है, आनंद कारण आज ।
मेरे प्यारे भ्रात का हुआ ब्याह का साज ॥
मामी मौसी मिल सभी, करत सुमंगल गान ।
गीत नृत्य के रंग में, सब गा है इक तान ॥

मेरे भाई का व्याह, मेरे भाई को व्याह-चल कर खुशी मनाऊंगी आज-
सरला—क्या कहती हो वहिनजी, भाई अति ही वाल।
आठ वर्ष की उम्र में, क्या व्याहन का काल॥
नहीं बुद्धि विद्या कछू, नहिं जाने कुछ राह।
पढ़ना पहिली क्लास में, क्या जाने वह व्याह॥
बुरी भारत की राह, बुरी भारत की राह, मत कर भाई का छोटे में व्याह-
विमला—क्यों होगा आनन्द नहिं, भाई का है व्याह।
बात खुशी की है वहिन, सबको होगी चाह॥
वड़े भाग के योगतें, आवे यह संयोग।
लाड़ लड़ा कर वहू का, धन का हो उपयोग॥
मेरे भाई का व्याह, मेरे भाई का व्याह, चलकर खुशी मनाऊंगी आज-
सरला—धूम मचाई अटपटी, खुशी मनाई भूर।
तुम सब कुछ नहिं समझती, गलती है भरपूर॥
बुरी भारत की राह, बुरी भारत की राह, मत कर भाई का छोटे में व्याह
विमला—मेरी भावज को अभी, लगा वारवां वर्ष।
जोड़ी अच्छी देख कर, सबने माना हर्ष॥
नाऊ ब्राह्मण मिल सभी, घर पर आये आज।
खुशी मनाते हैं सभी, सुन कर साज समाज॥ मेरे॰
सरला—भावज भाई से वड़ी, लगा वारवां वर्ष।
लानत ऐसे व्याह पर, क्यों माना है हर्ष॥
पढ़ी लिखी भी है नहीं, जाने नहिं कुछ राह।
जल्दी इतनी क्यों करो, पीछे होता व्याह॥ बुरी॰
विमला—लड़की भी वह है वड़ी, रक्खें कैसे लोग।
पढ़ने से क्या होयगा, कहते हैं सब लोग॥
माता उसकी अनपढ़ी, करे कौन तव गौर।
रोना धोना आ गया, अब क्या करना और॥ मेरे॰

सरला—अरे अरे अफसोस है, दुक्ख भरा संसार।
जिसमें रोने आदि को, शिक्षा का परचार॥
स्वार्थ बुद्धि ये हैं पिता, माता उनकी क्रूर।
जिससे बहिनें हो गईं, बालपने में चूर॥ बुरी०

विमला—पढ़ने से क्या होयगा, करना क्या व्यापार।
इतना ही बस बहुत है, करना शिष्टाचार॥ मेरे०

सरला—बहिना लड़की एक है, देवी अति ही बाल।
छोटेपन में ले गया, उसके पति को काल॥
पढ़ती शाला में अभी, थी अति ही अज्ञान।
पढ़ने से अब हो गया, उसे बहुत कुछ ज्ञान। बुरी०

विमला—हाय हाय यह जुल्म क्या, यह विधवा अति बाल।
बहिनाजी बतलाय दे, इन जुल्मों का हाल॥ मेरे०

सरला—बहिन बताऊं क्या तुझे, इन जुल्मों का हाल
दुलहा बूढ़ा होय तो, लड़की अति ही बाल।
मात पिता कर ब्याह को. आप बुलाते काल॥ बुरी०

विमला—इसका कारण क्या बहिन, ब्याह होय अनमेल।
इतने भारो काम को क्यों कर रक्खा खेल॥ मेरे०

सरला—कितनी मूरख लड़कियाँ, इस भारत के मांहि।
मात पिता जिनको कभी, शिक्षा देते नाहिं।
लड़की जीवे या मरे, रुपये की है चाह।
पति कपूत अरु पाप रत, देते उनको ब्याह॥ बुरी०

विमला—हाँ बहिनाजी सत्य है, रुपये का है काम।
भावज लाने के लिये, दिए बहुत से दाम॥
गुरू हमारी हो तुम्हीं, मुझको देहु बताय।
जिससे मैं कुछ कर सकूं' इसका जरर उपाय। बुरी०

सरला—बहिना यही उपाय है सुन ले मेरी बात ।
कन्याशाला में पढ़ो. विद्या होवे प्राप्त ॥
और सुधारो आचरण, कर भारत उपकार ।
सब बहिनों का काम है, करना जाति सुधार ॥ बुरी०
विमला—बहिन बात यह सत्य है हम सब धरें जु ध्यान ।
तो हो जावे जल्द ही, भारत का कल्यान ॥
तेरी शिक्षा से बहिन, करूं अवश यह काज ।
अंध कूप के पतन से, मुझेबचाया आज ॥ बुरी०
सरला—बहुत कहूँ क्या ऐ बहिन बाल विवाह अनीति ।
यह कुरीति निर्वार कर, सब फैलावें कीर्ति ॥
भगवत् से हम प्रार्थना, करती हैं धर ध्यान ।
भारत की सुख शांति का हो जावे उत्थान ॥
बुरी भारत की राह, बुरी भारत की राह, ना करूँ भाई का छोटे में व्याह ॥

कन्या-विक्री का भजन ।

हुये कैसे मा बाप पुत्री बेच कर खावें ॥ टेक ॥
भेड़ और बकरी की नाईं, बेचे हैं उनको अन्याई, नकद लेलें चुप चाप— पुत्री० ॥ कोई तीन हज़ार गिनावें, कोई बदले व्याह करावें, हा कैसा छाया पाप—पुत्री० ॥ बूढ़ों से बच्ची को व्याहैं, विधवा उनको करना चाहैं । जरा न कुछ पछतावैं—पुत्री० ॥ अय सुता बेचने वालो, अब ज़ुल्म से हाथ उठालो । शर्म से लो मुंह ढांप—पुत्री० ॥ मिहनत से टका कमाओ, मत पुत्रि बेच कर खाओ; बनो नहिं पापी आप—पुत्री० ॥ कह सालिगराम पुकारी, तुम मानो बात हमारी; बनो सच्चे मा बाप—पुत्री० ॥

माता पुत्री का संवाद।

माता—ऐ प्यारी बेटी, अब तू जावेगी ससुराल।
बेटी—अरी मेरी माता, कैसे रहूंगी ससुराल॥
माता—सुन २ प्यारी बेटी सब कुटम्ब परिवार।
बस बेटी मेरी, मिल करके रहना वहाँ सार॥
माँ—नहिं २ री बेटी, करना न दिल में इसका ख्याल।
ऐ प्यारी बेटी, घहाँ बहुत है परिवार। उन्हीं को समझो, माता कुटुम्ब परिवार॥ सुन प्यारी बेटी अपना आचरण संभाल। चलना तुम ऐसे, जैसी वहाँ को होवे चाल॥ सेवा तुम करियो, सास ससुर की अपार। आज्ञा तुम पालो अपने पति की सिरो-धार॥

बेटी—रक्खूंगी माता, वचनों का तेरे अति ख़्याल।
किन्तु जब आवे, भईया बहिन का हमें ख्याल॥
माँ—तब तू करियो बेटी ननद देवर का दुलार। यदि होवे बेटी, ननद देवर दर्जन चार॥ उन्हीं से रखियो, भैया बहिन ऐसा प्यार! कार्यों को करियो, बेटी तुम खूब सँभार॥ बेटी मत छोड़ियो, अपना धर्म सुख सार। विद्या का करियो, तुम मन से खूब प्रचार॥ तृष्णा को बेटी, समझो ये हैगी जग ख्वार। वस्त्रादि भूषण, का तुम घटाओ अब विचार॥ सुन प्यारी बेटी, वाक्य न ऐसा उचार। को जिससे होवे, सास ननद का दिल खार॥ आभूषण पहिनो बेटी ऐसा विचार। बेटी तुम नथिया, लज्जा की नाक में डार। और कंठी बेटी, सत्य की हिये चित्त धार। बेटी तुम पहिनो पहुंची पराया उपकार। चलना तुम सीखो, पैजेबों की देवे बहार॥
बेटी—माताजी तुमने, जैसा बताया उपकार।
रखती हूं अब मैं तेरी आज्ञा सिरो-धार

भाई-बहिन सम्वाद।

भाई—थारो री बहिनों, पंच महाव्रत सार।
बहिन—हाँ हाँ जो भैया, पंच महाव्रत सार॥
भाई—देखो री बहिनों, हिंसा कर्म अपार।
बहिन—हाँ हाँ जी भैया दे निगोद दुख भार॥
भाई—याही से त्यागो इसको बारम्बार। देखो री बहिनों, झूठ
से नरक मँझार। सहते हैं जिसमें कष्ट महा दुख भार॥
भाई—सुन लो री बहिनों, चोरी निंद्य अपार।
बहिन—हाँ हाँ जो भैया, राजा दे दंड अपार। कर्मों के वस से
हो नरकों का अगार॥
भैया—थारो री बहिनों, शील धरम् अति सार। इसको अब
पालो, मन वच काय सँभार। देखोरी बहिनों, परिग्रह
का जंजाल॥
बहिन—हाँ हाँ जी भैया, त्यागे मुनीश्वर सार।
भैया—इससे अब रक्खो, थोड़ा परिग्रह भार॥१॥

दो बहिन सम्वाद।

१—ऐ प्यारी बहिनो, दया धरम अति सार।
इसको तुम धारो, मन वच काय सँभार॥ १॥
२—बतला दे जीजी, दया स्वरूप विचार।
तो मैं भी कर लूँ, दया धर्म-स्वीकार॥ २॥
१—ऐ मेरी बहिनो, सब जीव एक प्रकार।
इनका मत करना, किसी तरह सँहार॥ ३॥
दुख सबको होवे, बध बंधन से अपार॥
नहीं समझे मूरख, लालच से, होते हैं ख्वार॥ ४॥

सबको सुख देना, यही दया का है सार।
पशुपक्षी, मानव, सबके ही हित विचार ॥ ५ ॥
नहीं करना हिंसा, चाहे हो स्वार्थ हज़ार।
सब पर वर्षा दो, प्रेमामृत की धार ॥ ६ ॥
करियो तुम ऐसे: घर का काम विचार।
नहिं होने पावे, सूक्ष्म जीव संहार ॥ ७ ॥
बोलो तुम सच्चे, मीठे वचन विचार।
कि जिससे होवे, सबका हृदय सुखकार ॥ ८ ॥
२—लेती हूँ जीजी, तेरी शिक्षा सिर धार।
शक्ती भर मैं भी, करूंगी दया परचार ॥ ९ ॥

शील-प्रभाव ।

है शील की महिमा भारी, तुम चेतो सब नर नारी ॥ १ ॥
दुष्ट धवल को पाप समाया, रैन-मंजूषा पर वह धाया।
तब देव करी रखवारी, तुम चेतो सब नर नारी ॥ २ ॥
सोमा का शीलव्रत भारी, पति बन गये सुख-संचारी।
देवों ने करी जयकारी, तुम चेतो सब नर नारी ॥ ३ ॥
मनोरमा का शील था भारी, खोली थी वज्र-किवारी।
हुई सबमें महिमा भारी, तुम चेतो सब नर नारी ॥ ४ ॥
सीता का शीलव्रत भारी, कूदी थी अग्नि मँझारी।
वह अग्नि हुई जल धारी, तुम चेतो सब नर नारी ॥ ५ ॥

मेरी समाधि ।

इतना तो कर दे स्वामी, जब प्राण तन से निकले।
होवे समाधि पूरी, तब प्राण तन से निकले ॥ १ ॥
माता पितादि जितने, हैं ये कुटुम्ब सारे।
उनसे ममत्व छूटे, तब प्राण तन से निकले ॥ २ ॥

बैरी मेरे बहुत से, जो होवें इस जगत में ।
उनसे क्षमा कराऊँ, तव प्राण तन से निकले ॥ ३ ॥
परिग्रह का जाल मुझपर, फैला बहुत है स्वामी ।
उससे ममत्व टूटे, जब प्राण तन से निकले ॥ ४ ॥
दुष्कर्म दुख दिखावें, या रोग मुझ को घेरें ।
प्रभु का ध्यान छूटे, जब प्राण तन से निकले ॥ ५ ॥
इच्छा क्षुधा तृषा की, होवे जो उस घड़ी में ।
उनको भी त्याग कर दूँ, जब प्राण तन से निकले ॥ ६ ॥
ऐ नाथ अर्ज़ करती विनती पै ध्यान दीजे ।
होवे सफल मनोरथ, जब प्राण तन से निकले ।
होवे समाधि पूरी तब प्राण तन से निकले ॥ ८ ॥

वेश्या कुटलाई ।

मत करो प्रीति वेश्या विष बुझी कटारी । है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥ टेक ॥ औषधि अनेक हैं सर्प डसेकी भाई । पर इसके काटेकी नहिं कोई दवाई ॥ गर लगे बान तो जीवित हू रहि जाई । पर इसके नैनके बानसे होय सफाई ॥ है रोम रोम विष भरी करो न यारी । है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥१॥ यह तन मन धन हर लेय मधुर बोली में । बहुतों का करै शिकार उमर भोली में ॥ कर दिये हजारों लोटपोट होली में । लाखोंका दिलकर लिया कैद चोली में ॥ गई इसी कर्म में लाखों की ज़मीदारी । है यही सकल रोगन की खान हत्यारी ॥२॥ हो गये हजारोंके वल वीर्य छारा । लाखों का इसने वंश नाश कर डारा ॥ गठिया प्रमेह आतिश ने देश बिगारा । भारत गारत हो गया इसीका मारा ॥ कर दिये हजारों इसने चोर अरु ज्वारी । है यही सकल दुर्गुणकी खान हत्यारी ॥ ३ ॥ इसही ठगनीने मद्य मांस सिखलाया । सब धर्म कर्मको इसने धूर मिलाया ॥ और दया

क्षमा लज्जा को मार भगाया। भक्तीका मूल नाश करवाया। हों इसके उपासक रौरव के अधिकारी। है यही० ॥ ४ ॥ वह नव युवकोंको नैन सैनसे खावे। और धनवानों को चट्ट-गट्ट कर जावे ॥ धन हरण कर फिर पीछे राह बतावे। करे तीन पांच तो जूते भी लगवावे ॥ पिटवा कर पीछे ल्यावे पुलिस पुकारी। है यही० ॥५॥ फिर किया पुलिस ने खूब अतिथि सत्कारा। हो गई सजा मिला मजा इश्क का सारा ॥ जो झूठ होय तो सज्जन करो विचारा। दो त्याग झूठ करो सत्य वचन स्वीकार ॥ अब तजो कर्म यह अति निन्दित दुखकारी। है यही सकल रोगोंको खानि हत्यारी ॥ ६ ॥

शील के भेद।

ये भेद शील के जानो जो हो सतवंती नारी—टेक
पर पुरुषों से बात न करना, निंदुक जन का साथ न करना—
पर घर वासा रात न करना, काम कथा मत गारी ॥ जो हो०
इक आसन पर कभी न बैठो, पर पुरुषों के साथ न लेटो—
पिता भ्रात पति को तुम भेंटो, बनो कुटुम की प्यारी ॥ जो हो०
पर पुरुषों के अंग न निरखो, अँग कीर्ती सुन मत हर्षो—
कुटिल सरल को मन से परखो, तू नीची नजर रखारी ॥ जो हो०
हाट बाट में खड़ी न होना, इकले घर में जाय न सोना—
जैनी, समय व्यर्थ ना खोना, लज्या से सुयश बढ़ारी ॥ जो हो०

कन्या विनय करै हैं।

अब करो विचार, कन्या विनय करैं हैं ॥ अज्ञान महा नदि भारी, हम डूब रहीं अब सारी। तुम करो उद्धार, कन्या विनय करै हैं ॥ अज्ञान तिमिर अँधियारी, अब छाई कारी कारी। तुम करो उजार, कन्या विनय करै हैं ॥ विद्या इस जग में प्यारी, सुख देती हमको भारी--तुम करो प्रचार, कन्या विनय करै हैं ॥ बिगड़ी है दशा

हमारी, तुम चेतो सब ही नारी। तुम करो सुधार, कन्या विनय करै हैं॥ तुम घोर अविद्या टारो, अब अपनी दशा सुधारो। त्यागो कुविचार, कन्या विनय करै हैं॥ विषयों के करके यारी, क्यों अपनी दशा बिगारी। करो जल्दी उपकार, कन्या विनय करै हैं॥ सती अंजना गयी निकारी, वह रोती आँसू ढारी। अब लगा शील में दाग, कन्या विनय करै हैं॥ ये शील महातम भारी, वन में भी हुआ सुखारी। फिर मिल गये कुमार, कन्या विनय करै हैं॥ हा सीता शील अपारी, कूदी थी अग्नि-मँझारी। हुई अग्नि जल धार, कन्या विनय करै हैं॥ मैं विनय करूँ कर जोरी, सुन लो माताओ मेरी। करो शिक्षा संचार, कन्या विनय करै हैं॥

खुशामद का भजन।

खुशामद ही से आमद है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक
महाराज ने कहा एक दिन, बैंगन बड़ा बुरा है।
खुशामदी ने कहा, तभी तो, बे-गुन नाम पड़ा है॥
खुशामद से सब कुछ रद है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक
महाराज कुछ देर में बोले, बैंगन तो अच्छा है।
खुशामदी ने कहा तभी तो, शिर पर मुकुट धरा है॥
खुशामद में इतना मद है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक
स्वामी दिन को रात कहे तो, वह तारे चमका दें।
यदि वह रात को दिन कह दें तो, सूरज भी दिखला दें॥
खुशामद की भी कुछ हद है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक
स्वामी कहें मद्य कैसा है? कहें सुरा सुखकर है।
स्वामी पूछें हिंसा जायज? कह दें जीव अमर है॥
बुरा है भला, भला बद है, बड़ी इसलिये खुशामद है। टेक

मुसाफिरी-भजन।

मुसाफिर क्यों पड़ा सोता भरोसा है न इक पल का,।
दमा दम बज रहा डंका तमाशा है चला चल का॥ टेक

सुबह जो तख्तशाही पर बड़े सज धज के बैठे थे—दुपहरे वक्त में उनका हुआ है वास जंगल का॥ टेक॥ कहां हैं राम अरु लछमन कहां रावण से वलधारी। कहां हनुमन्त से योधा पता जिनके न था बल का॥ टेक॥ उन्हीं को काल ने खाया तुझे भी काल खावेगा—सफर सामान उठकर तू बना ले बोझ को हलका॥ टेक॥ ज़रा सी ज़िन्दगानी पर न इतना मान कर मूरख—यह बीते जिन्दगी पल में कि जैसे बुदबुदा जल का॥ टेक॥ नसीहत मान ले ज्योती उमर पल पल में कम होती-भजन कर आज प्रभुवर का भरोसा कुछ न कर पल का॥

मरना-ज़रूर-होगा।

मरना ज़रूर होगा, करना जो चाहो कर लो। फल उसका पाना होगा, करना जो चाहे करलो॥ टेक॥ पाया मनुष जनम है; जिसका न मोल कम है। जबतक कि तन में दम है। करना०॥१॥ जीवन के साथ मरना, जीवन का फल बुढ़ापा; धन का भी नाश होगा, करना जो चाहो कर लो॥२॥ कर लो भलाई भाई, करते हो क्यों बुराई, दिन चार जीना होगा। करना जो चाहो०॥३॥ कर कर के छल कपट को, लाखों रुपये कमाये, सब छोड़ जाना होगा, करना०॥४॥ अपने मज़े की ख़ातिर, पर के गले क्यों काटो, दुःख तुमको पाना होगा, करना जो चाहो कर लो॥५॥ शुभ काम करके मरना, समझो इसीको जीना, जीना न और होगा; करना जो चाहो कर लो॥ ६॥ है मोल जग में सबका, पर मोल न समय का, 'बालक' समय न होगा, करना जो चाहो करलो ७॥

संग चले न कोय ।

देखो देखोरे चेतनवा तेरे संग चले ना कोय ।
संग चले ना कोय, नाती साथी परिजन लोय ॥ टेक ॥
मात तात स्वारथ के साथी, है मतलब के सगे सँगाती, तेरा हितू न कोय, तेरे संग० ॥१॥ झूठी नैना उलफत बांधी, किस के सौना किसके चांदी, क्यों मूरख पतखोय, तेरे संग ॥२॥ नदी नाव संयोग मिलाया, सो सब जन मिल कुटम्ब कहाया, सदा रहे ना कोय, तेरे संग० ॥३॥ इक दिन पवन चलैगी आँधी, किसको बीबी किस की बांदी, उलट पलट सब होय, तेरे० ॥४॥ खोटा बनज किया व्यौपारो, टाँड़ा जोड़ धरा सरभारी, किस विध हलका होय, तेरे० ॥५॥ आश्रव बाँध चुका इक-वारा, हलका हो सर बोझा भारा, तान चदरिया सोय, तेरे ॥६॥ न्यामत मंजिल दूर पड़ी है, विकट बड़ी है, कठिन कड़ी है, कांटे शूलन बोय ॥ तेरे० ॥ ७ ॥

स्वदेशी भजन ।

अपने देश की रे, अब तो, मिलके दशा सुधारो ॥ टेक ॥
उज्वल काशी की जो शक्कर, नीक सुगन्धीदार ।
त्यागि हाड़ की कन्द चबाते, उनको है धिक्कार ॥ १ ॥
कम दामों के बड़े टिकाऊ, देशी वस्त्र सुडौल ।
त्याग विदेशी कपड़े पहिनो, रहे टौल के टौल ॥ २ ॥
देशी भाई बड़े दुखी हैं, कौड़ी को मुहताज ।
तुम्हें स्वदेशी चीजें लेते, पर आती हैं लाज ॥ ३ ॥
खेल खिलौने कांच पिटारी, दारू और सिगरेट ।
देकर नाज दनादन लेते, कहैं हमारा पेट ॥ ४ ॥
जैन जाति को मिट्टी कर दे, जो मिट्टी का तेल ।
आंखों ऐनक धार, बने तुम, कोल्हू कैसे बैल ॥ ५ ॥

जो तुम सच्चे धर्म के हो तो कह दो हाथ उठाय।
कभी विदेशी चीज न लेंगे, प्राण रहें चाहे जाय ॥ ६ ॥

जातिकी सेवा।

जाति की सेवा करनी, यह पहिला काम अपना।
सेवा के वास्ते यह, जीवन तमाम अपना ॥
तुम चाहे गालियां दो, भर पेट निंदा करलो।
छोड़ें जो सेवा करनी, जीवन हराम अपना ॥ जाति०
जीते जी मर मिटेंगे, अच्छी बुरी सहेंगे।
सेवा मगर करेंगे, जबतक है चाम अपना ॥ जाति०
सेवा का दम भरेंगे, जबतक कि हम जियेंगे।
इस रंग से ही होगा, मुकती का धाम अपना ॥ जाति०
सब आपदा सहेंगे, सच्ची मगर कहेंगे।
है सच्चा काम अपना, सच्चा कलाम अपना ॥ जाति०
ऐ देश के जवानो, निज फर्ज को भी जानो।
सेवा की मन में ठानो, यह है पैगाम अपना ॥ जाति०
है जाति-धर्म की सेवा, सारे सुखों को देवा।
कर सेवा तुम बता दो—जैनी है नाम अपना ॥ जाति०

हिन्दी भाषा।

सकल भाषाओं में रे उत्तम देवनागरी भाषा ॥ टेक ॥
देवनागरी है वो भाषा जो लिक्खो सो पढ़ लो।
और किसी में सिफत नहीं है चाहे परीक्षा कर लो ॥ १ ॥
अक्षर केवल चार नागरी शब्द बना हरिद्वार।
सात हरफ उर्दू के मिल कर बनता हरीद्विार ॥ २ ॥
एच, ए, आर, डी, डबल्यू, ए, आर (HARDWAR)
अंगरेजी में लिक्खा जावे फिर भी हरीडुआर ॥ ३ ॥

किसी ने उर्दू में खत लिख कर मंगवाये थे आलू ।
पढ़नेवाले ने क्या भेजा एक पिंजरे में उल्लू ॥ ४ ॥
शुड (SHOULD) में एल लिखा जाता है पढ़ने में नहिं आवे ।
कौन खता के बगैर मतलब विरथा पकड़ा जावे ॥ ५ ॥
सुन्दर नाम नागरी लिक्खो प्रियवर मोतीदत्त ।
अंग्रेजी में लिखा जावे डीयर मोटीडट्ट ॥ ६ ॥
इँग्लिश के स्पेलिंग देख कर क्यों नहिं हाँसी आवे ।
बो यू टी तो बट हो किन्तु पी यू टी पुट हो जावे ॥
मुद्दत से यह संस्कृत भाषा मुरदा हुई थी सारी ।
पुन जीवन कर गये इसी को अकलंक देव निस्तारी ॥ ७ ॥

गले का गजरा ।

पति ईश के चरण में । अब तो लगो री बहिनो ॥
दिल इसमें तुम लगाओ । भूषण इसी का पहिनो ॥
विद्या से तुम हे बहिनो । कीरति कमाओ जग में ॥
होगी इसी से इज्ज़त । यह ख्याल कर लो मन में ॥
गजरा ऐ मेरी बहिनो ! सद्धर्म का पहिन लो ॥
होगी भलाई इसमें । अज्ञान को हटा लो ॥
चेतो ऐ प्यारी बहिनों । सूखा हुआ है गजरा ।
गजरे को अब खिलाना । कर्तव्य है तुम्हारा ॥ १ ॥

गृहस्थ धर्म ।

मेरी विनती सुनो धर ध्यान ।
चहुँ आश्रम में गृहस्थ धर्म है, सबसे श्रेष्ठ महान ॥ मेरी० ॥
पुरुष तो है सो घर को शोभा, उनकी तिरिया जान ।
तिय की शोभा पतिव्रत धर्म है, रक्षा करैं भगवान ॥ मेरी० ॥
दोनों की शोभा परस्पर प्रीती, पानी दूध समान ।
जिस घर में ये दोनों, खुश हैं, वह घर स्वर्ग समान ॥ मेरी० ॥

मुख की शोभा मीठ वचन हैं, हाथ की शोभा दान।
दान की शोभा पात्र हो अच्छा, कह गये पुरुष महान ॥ मेरी ॥
देह की शोभा परोपकार है, धर्म उसीका जी जान ॥
धर्म की शोभा 'दया' 'अहिंसा' सबमें यही प्रधान ॥ मेरी० ॥

स्त्रियों के आभूषण।

भला ओढ़ोरी सुहागिन पतिव्रत धर्म की चूनरी। मलमल विद्या की बनवाओ, रंगत बुद्धि की रंगवाओ, गोटा गोखरू ज्ञान लगाओ, बूटा सत् शास्त्र अनुसार, जगत में चमके चूनरी ॥ १ ॥ मिस्सी मीठे वचन उचारो, टिकुली परोपकार की धारो, पति की सेवा करो हर बार, सोहाग की ओढ़ो चूनरी ॥२॥ घूंघट चतुराई की काढ़ो, लाज को नथ को नाक में डालो, बाजूबंद दया का बांधो, हंसुली सत्य की कंठ में धारो; जीव से प्यारी चूनरी ॥ ३ ॥ हार ज्ञान का हिये में पेन्हो, माला धीरजता की धारो, घर में हिलमिल सबसे रहना, गुरुजन-सेवा अंगूठी गहना, असीस की ओढ़ो चूनरी ॥४॥ पहुंची दया धर्म चित धरना, बेरा मान बड़ों का करना, गजरा सबको हुक्म मानना; भलाई की ओढ़ो चूनरी ॥ ५ ॥

विद्याभिलाषा।

बहिनों न पढ़ना छोड़ो, यदि प्राण तन से निकले।
हो उन्नतो ऐ बहिनों, सत्ज्ञान-सूर्य निकले ॥
माता हो मूर्ख तेरी, या भ्रात हो अनाड़ी।
शिक्षा के जानी दुश्मन, या और शत्रु निकले ॥ बहिनों०
समझा बुझा के सबको, विद्या रसिक बना दो ॥
पढ़ती रहो सदा तुम, यदि प्राण तन से निकले। बहिनों०

पितु मात को तुम्हारे, धन का जो ख्याल होवे॥
समझा दो उनको ऐसे, कि लोभ दिल से निकले॥ बहिनो०
ऐ मात, यह समझ ले, धन कुछ नहीं जगत में।
दिल खोल कर पढ़ा दे, अब ही दरिद्र निकले॥ बहिनो०
धन भाग्य हो हमारे, मनकामना हो पूरी॥
विद्या में पूरी होकर, सब बालिकाएं निकलें॥ बहिनो०

वे मुनिवर।

वे मुनिवर कब मिलि हैं उपकारी॥ टेक॥
साधु दिगम्बर नगन निरम्बर, सम्बर भूषणधारी। वे मुनि०॥ १॥
कंचन कांच बराबर जिनके, ज्यों रिपु त्यों हितकारी।
महल मसान मरन अरु जीवन, सम गरिमा अरु गारी॥ वे० २॥
सम्यक् ज्ञान प्रधान पवन बल, तप पावक पर जारी।
सोधत जीव सुवर्ण सदा जे काय कारिमा टारी। वे मुनि० ३॥
जोरि जुगल कर भूधर विनवै, तिन पद धोक हमारी।
भाग उदय दरशन जब पाऊं, तादिन की बलिहारी॥ वे मुनि० ४॥

आये चले गये।

दुनियां में देखो सैकड़ों आये चले गये। सब अपनी करामात दिखाये चले गये॥ टेक॥ अर्जुन रहा न भीम न रावण महाबली। इस काल बली से सभी हारे चले गये॥ १॥ क्या निर्धनों धनवन्त और मूर्खो गुणवन्त, सब अन्त समय हाथ पसारे चले गये॥ २॥ सब जंत्र मंत्र रह गये कोई बचा नहीं। इक वो बचे जो कर्म को मारे चले गये॥ ३॥ सम्यक्त धार न्यामत अबदिल में समझ ले। पछतायगा जो प्राण तुम्हारे चले गये॥ ४ इति॥

मुखड़ा क्या देखे !

मुखड़ा क्या देखे दर्पण में। तेरे दया धर्म नहीं मन में ॥ टेक ॥ काल अनन्त व्यतीत भये तू भ्रमा चतुर गति बन में, कठिन कठिन कर नर भव पायो क्यों खोवे विषयन में ॥ १ ॥ सप्त व्यसन आठों मद माती बढ़ी कषाय बढ़न में। कुगुरु कुदेवन के संग राचा पहुँचा नरक सदन में ॥ २ ॥ चंदन अतर कपूर अरग-जा काहे लगावे तन में। यह काया तेरी विनश जायगी जैसे पलट गगन में ॥ ३ ॥ पूजा दान शील व्रत तप कर पाप कटें इक क्षण में। इन्द्रजीत कहैं सुन प्राणी यह विचार कर मन में ॥ ४ ॥

मुनिराज खड़े वन में।

होरी खेलें मुनिराज खड़े बन में ॥ होरी खेलें ॥टेक॥
ज्ञान गुलाल सुरुचि पिचकारी धाय धाय मारें तन में ॥ १ ॥
ज्ञान अनन्त पियूष पीय कर मगन रहें निश दिन मन में ॥ २ ॥
ऐसी होरी जो कोई खेले पाप कटें उस के छिन में ॥ ३ ॥ इति

हंस तेरे तन का।

जब हंस तेरे तन का कहीं उड़के जायगा।
अय दिल बता तो किस से तू नाता लगायेगा ॥टेक॥
यह भाई बन्धु जो तुझे करते हैं आज प्यार-जब आन बने कोई नहीं काम आयेगा ॥ १ ॥ यह याद रख कि सब हैं तेरे जीते जी के यार-आखिर तू अकेला ही मरण दुःख उठायगा ॥२॥ सब मिल के जला देंगे तुझे जाके आग में-इक छिन के छिन में तेरा पता भी न पायगा ॥ ३ ॥ कर घात आठ कर्मों का निज शत्रु जानकर-वे नाश किये इन के तू मुक्ती न पायगा ॥ ४ ॥ औसर यही है जो तुझे करना है आज कर-फिर क्या करेगा काल जब मुँह बाके आयगा ॥ ५ ॥ अब न्यामत उठ चेत क्यों मिथ्यात में पड़ा-जिन धर्म तेरे हाथ ये मुश्किल से आयगा ॥ ६ ॥

सप्त व्यसन निषेध।

छोड़ो इन व्यसनों का संग सत्यानाश मिटाने वाले ॥ टेक ॥
सम्पति जूआ खेल गमावें। इज्जत जुआ खेल नशावै ॥
तो भी जरा मजा नहि पावें, इज्जत हुर्मत खोने वाले ॥ १ ॥
जो है महा घिनावन मांस। निर्दय खावें आवे घास ॥
जिन के रहम न दिल में पास। क्यों कर बहिश्त पानेवाले ॥२॥
दौलत खोकर पियें शराब। फिर ना रहे बदन में ताब।
कुत्ते दें मुँह में पेशाब, दिल से हया गंवाने वाले ॥ ३ ॥
धन यौवन चौपट कर छल से। पिटवा कर निकलावे घर से।
दुखिया सुजाक और आतिश से, रंडीबाजी करने वाले ॥ ४ ॥
चोरें सम्पति प्राणन प्यारी। तो भी रहते सदा दुखारी ॥
वध बंधन सहते दुख भारी। देखो चोरी करने वाले ॥ ५ ॥
जीवें वन में चरके घास, डरते पशू करें ना त्रास। तो भी करते उन का नाश ॥ सीधे नर्कों जाने वाले ॥ ६ ॥ विषयों फँसें काम के फंद। निरखें परनारी तुम "चन्द्र"। पापों से न डरें मति मन्द। झूठा खाना खाने वाले ॥ ७ ॥

तम्बाकू का निषेध।

जरा होजाना हुशियार ओ सिगरेट के पीने वाले ॥ टेक ॥
कड़ुआ मुख हो खुश्की लावे। दिल दिमाग में नुक्स करावे। आंखों का है तौर घटावे। हो जिरियान जो पीने वाले ॥ जरा० ॥ गौरव का सब धुआं उड़ाकर। कर सिगरट में धुआं फकाफक ॥ जरा० २ ॥ पैड्रो आदिक सिगरट लावे। धन अरु धर्म में आग लगावे। होकर दमा साथ दम जावे। कानों से कम सुनने वाले ॥ जरा० ॥ राजा भी कानून बनावे। बच्चा कभी न पीने पावे। तौभी तुमको शर्म न आवे। ज्ञान का "चन्द्र" छिपाने वाले ॥ जरा० ॥

अनाथों—रोदन ।

गये मात पिता हमें छोड़ हाय अब कौन बंधावे धीर ॥ टेक ॥
फिरते हैं भटकते दर दर, करै कौन लाड़ अब हम पर ।
नहीं कोई हमारे सिर, हाय यूं फूट गई तकदीर ॥ गये० ॥
रहने को है नहीं ठिकाना, मिले पेटभर कभी न खाना ।
अब तुम ही हमें बताना, करें क्या जीवन की तदबीर ॥गये०॥
जब भूख औ प्यास सतावै, तब खान पान नहीं पावै ।
हा! बस यही पार बसावैं, बहा देते आंखों से नीर ॥ गये०॥
जब कभी बहुत दुख पावैं, तब याद मातु पितु लावै ।
हम रोदन बहुत मचावें, खींच दिल में उनकी तसवीर ॥ गये० ॥
पर कुछ नहीं पार बसाती, रह जाते पीट कर छाती ।
बस अब दुनियां में नाती, हमारे तुम भारत वीर ॥ गये० ॥
हो तुमहीं पिता औ माता, हो तुमहीं बहिन और भ्राता ।
नहीं और नजर कोई आता, हरे जो दिल की हमारी पीर ॥ गये०॥
अच्छे कुल के हम जाये, पर विपति ने बहुत सताये ।
हम शरन तुम्हारी आये, काट दो दुख की अब जंजीर ॥ गये०॥
अब धर्म और प्राण हमारे, हैं सब आधीन तुम्हारे ।
इनकी रक्षा में प्यारे, कमर कस सालिग बन के वीर ॥ गये० ॥

सुख का उपाय ।

(आर्या)

जग के पदार्थ सारे, वर्तें इच्छानुकूल जो तेरी ।
तो तुझ को सुख होवे, पर ऐसा हो नहीं सकता ॥
क्योंकि परिणमन उनका, शाश्वत उनके अधीन ही रहता ।
जो निज अधीन चाहे, वह व्याकुल व्यर्थ होता है ॥
इससे उपाय सुखका, सच्चा, स्वाधीन-वृत्ति है अपनी ।
राग-द्वेष-विहीना, क्षण में सब दुख हरती जो ॥

दया का असर ही नहीं ।

कैसे प्राणी के प्राणों का घात करे तेरे दिल में दया का असर ही नहीं ॥ जो तू हिरनों का वन में शिकार करे क्या निगोद नरक का खतर ही नहीं ॥ टेक ॥ जैन बानी सुनो, ज़रा ग़ौर करो, जान औरों की अपनी सी ध्यान धरो, ज़रा रहम करो, अपने दिल में डरो, प्यारे ज़ुलम का अच्छा समर ही नहीं ॥ १ ॥ भोले वन के पखेरू हैं डरते फिरें, मारे डरके तुम्हारे से दूर रहें । वो तुम्हारा न कोई विगाड़ करें, उनका वन के सिवा कोई घर ही नहीं ॥ २ ॥ तृण घास चर अपना पेट भरें, धन देश तुम्हारा न कोई हरें । प्यारे बच्चों से अपने वो प्रीती करें, उनके दिल में तो कोई भी शर ही नहीं ॥ ३ ॥ कामी लोगों ने इसको रवां है किया, झूठा अपनी तरफ से है मसला घड़ा । वरना पुरान कुरान में जीवों के मारन का, आता कहीं भी ज़िकर ही नहीं ॥ ४ ॥ दयामई है धरम सत जानो सही, जिन राज ने है यह बात कही । सुनो न्यामत बिना जिन धर्म कभी प्यारे होगा मुकत में घर ही नहीं ॥ ५ ॥

झूठा है संसार ।

झूठा है संसार आँख खोल कर देखो ॥ टेक ॥
जिसे कहता मेरा २ नहीं तू मेरा मैं तेरा मतलबी है संसार ॥ १ ॥ जीतेजी के सब साथी, क्या घोड़ा ऊंट और हाथी, बताये क्या परिवार ॥ २ ॥ जब काल अचानक आवे, तब कंठ पकड़ ले जावे, चले न कुछ तकरार ॥ ३ ॥ यहाँ बड़े २ योधा आये, सब ही को काल ने खाये, समझ तू मूर्ख गंवार ॥ ४ ॥ यह सुपने कैसी माया, क्यों देख मार्ग में आया, बिनस जाय लगे न वार ॥ ५ ॥ क्यों मोह नीद में सोवे, और जन्म वृथा क्यों खोवे, मिले न बारंबार ॥ ६ ॥ जो प्रभुजी का गुण गावे, सो जन्म सफल हो जावे, यह जौहर कहे पुकार ॥ ॥

श्रीमान पूज्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी।   बाबा भागीरथजी वर्णी।   पं० दीपचन्द्रजी वर्णी।
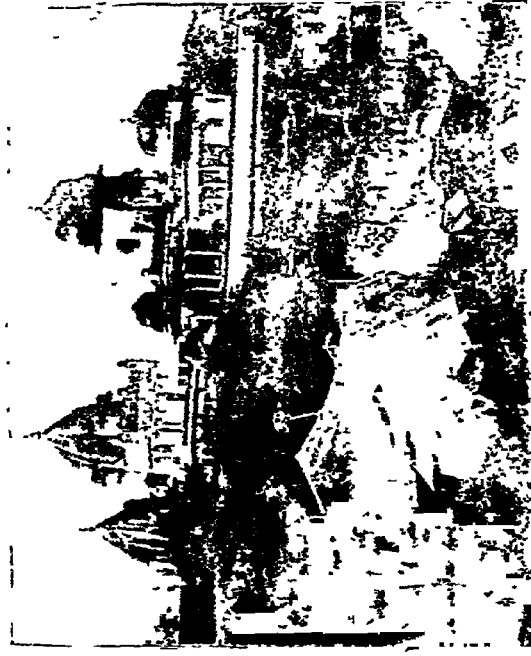
चतुर्मास का दृश्य। क्षेत्रपाल-ललतपुर।

मुनि-आहार-विधि ।

(कविवर भैया भगोतीदास कृत)

अरहँत सिद्ध विचार चित, आचारज उवझाय ।
साधु सहित वंदन करों, मन वच शीस नवाय ॥ १ ॥
दोष छियालिस टारकें, मुनि जो लेहिं अहार ॥
नाम कथन ताके कहूं, जिन आगम अनुसार ॥ २ ॥

अस्थि चर्म सूखे अरु हरे । दृष्टि देख भोजन परिहरे ॥
उखली खोटैं चक्की चलै । शिलापिसंती देखत टलै ॥३॥
गोवर थापै माटी छुवै । कोरैं वस्त्र भींट जो हुवै ॥
चूल्हा जरतो नयन निहार । ता घर मुनि नहिं लेहिं अहार ॥४॥
शिरहिं नहाती दीखे कोय । सीस कंघही करती होय ॥
कच्चे पानी परसे अंग । ता घरतें मुनि फिरहिं अभंग ॥५॥
करवो खांडो दीसे कहीं । छुवो फाटो हूं जो तहीं ॥
देत बुहारी दृष्टिहि परे । ताघर मुनि आयेतें फिरै ॥६॥
अन्नादिक सूकन को धरे । मिथ्याती भेटै तिहँ घरै ॥
ओंटे कोय कपास निहार । ताघर मुनि फिर जांहिं विचार ॥७॥
भींटे पाक स्वान मंजार । रोमकँवल परसन परिहार ॥
अग्निदाह जो दृष्टिहि परे । रोवत सुनै अहार न करै ॥८॥
प्रतिमा भंग सुनै जे कान । शास्त्र जरैं इम सुनै सुजान ॥
प्रतिमा हरी भयो भयजोर । ता घर आये फिरहिं किशोर ॥९॥
विन धोये पट पहिरे होय । पड़िगाहैं श्रावक जो कोय ॥
ता कर लेय अहार न साध । अशुचिदोष लागे अपराध ॥१०॥
कर्कश वचन सुनहिं विकराल । विनय हीन जो हो अदयाल ॥
लागै चोट ललाटहिं पेख । फिरहिं साधु छर्दित नर देख ॥११॥
विकलत्रय आवै तिहँ ठौर । नख केशादि अपावन और ॥

पानी बूंद परै आकास । ता वर मुनि फिरजांहि विमास ॥१२॥
खाज सहित रोगी नर देख । पीव बहत पीड़ित पुनि पेख ॥
लोहू दृष्टि परै जो कहीं । तो मुनि असन लेनके नहीं ॥१३॥
मांसादिक मल दृष्टिहि परै । कंद रु मूल मृतक परिहरै ॥
फल अरु बीज होय तिहँ ठौर । तौ मुनि लेहि न एको कौर ॥१४॥
ऐसे दोष छियालिस हीन । तजहिं ताहि संयमि परवीन ॥१५॥
उत्तम कुल श्रावक को जान । द्वारापेखन शुद्ध प्रमान ॥
विनयवंत प्राशुक कर नीर । बोलै तिष्ठ स्वामि जगवीर ॥१६॥
ताघर दृष्टि विलोकहिं साध । यहां न कोउ लागै अपराध ॥
तब तिहँ मंदिर में अनुसरै । प्रासुक भूमि निरख पग धरै ॥१७॥
श्रावक जो प्राशुक आहार । कीन्हों दोष छियालिस टार ॥
निजहित पोषनको परवार । ता महितैं कछु भिन्न निकार ॥१८॥
द्वै करजोर मुनीश्वर लेहिं । श्रावक निजकरसों तिहँ देहि ॥
पुनिकर फेर नीर को धरै । प्रासुकजल तिहँ करमें करै ॥१९॥
लेय अहार नीर तिहँ ठौर । जिनकल्पी उत्तम शिरमौर ॥
थिवरकल्पिकी हू यह चाल । दोऊ मुनिवर दीनदयाल ॥२०॥
दोऊ बनवासी निर्ग्रन्थ । दोऊ चलहिं जिनेश्वर पंथ ॥
दोऊ जपतप किरिया करैं । दोऊ अनुभव हिरदै धरैं ॥२१॥
जिनकल्पी एकाकी रहै । थिवरकल्पि शिष्यशाखा गहै ॥
अट्ठाईस मूलगुण सार । आपसाधु पालहिं निरधार ॥२२॥
षष्टम अरु सप्तम गुण थान । दोऊ रहैं परम परधान ॥
पूरव कोटि वरष वसु घाट । उतकृष्टे वरतै यह बाट ॥२३॥
केवलज्ञान दोऊ उपजाय । पंचमि गतिमें पहुँचें जाय ॥
सुख अनंत विलसै तिहँ ठौर । तातैं कहैं जगत शिर मौर ॥२४॥
सम्वत सत्रह सै पंचास । जेठ सुदी पंचमि परकाश ॥
भैया बंदत मन हुल्लास । जय जय मुकति पंथ सुखवास ॥२५॥

बाईस-परीषह ।

छप्पय—क्षुधा तृषा हिम उष्ण दंशमंशक दुःखभारी। निराचरण तन अरति खेद उपजावत नारी ॥ चर्या आसन शयन दुष्टवायक वधवंधन । याचें नहीं अलाभ रोग तृण परस होय तन । मल अनितमानसन्मनि वश प्रज्ञा और अज्ञानकर । दर्शन मलीन बाईस सब साधु परीषह जान नर ॥

दोहा—सूत्र पाठ अनुसार ये, कहे परीषह नाम ।
इनके दुख जे मुनि सहैं, तिन प्रति सदा प्रणाम ॥

१ क्षुधापरीषह—अनशन ऊनोदर तप पोषत पक्ष मास दिन बीत भये हैं । जो नहिं बने योग्य भिक्षा विधि सूख अंग सब शिथिल भये हैं ॥ तब भी दुस्सह भूख वेदना साधु सहैं नहिं नेक नये हैं । तिनके चरण कमलप्रति, प्रतिदिन, हाथ जोड़ हम शीस नये हैं ॥

२ तृषा परीषह—पराधीन मुनिवरकी भिक्षा परघर लेंय कहैं कछु नाहीं । प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढ़त प्यासकी त्रास तहां ही ॥ ग्रीषमकाल पित्त अति कोपे लोचन दोय फिरैं जब जाहीं । सहैं तृषा ते साधु सदा ही, जयवन्तो वर्तो जग मांहीं ॥

३ शीत परीषह—शीतकाल सब ही जन कम्पैं खड़े जहां वन वृक्ष डहे हैं । झंझा वायु वहे वर्षा ऋतु वर्षत बादल झूम रहे हैं ॥ तहां धीर तटिनी तट चौपट ताल पाल पर कर्म दहे हैं । सहैं सम्हाल शीत की बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं ॥

४ उष्ण परीषह—भूख प्यास पीड़े उर अन्तर प्रजुले आंत देह सब दागे । अग्नि स्वरूप धूप ग्रीषमकी ताती वायु झालसी लागे ॥ तपै पहाड़ ताप तन उपजै कोप पित्त दाहज्वर जागे । इत्यादिक गर्मीकी बाधा सहैं साधु धीरज नहिं त्यागें ॥

५ दंशमशक परीषह—दंशमशक माखी तन काटैं पीड़ैं वन पक्षी बहुतेरे। डसैं व्याल विषहारे विच्छू लगैं खजूरे आन घनेरे॥ सिंघ स्याल शुण्डाल सतावै रीछ रोझ दुख देंय घनेरे। ऐसे कष्ट सहैं समभावन ते मुनिराज हरैं अघ मेरे।

६ नग्न परीषह—अन्तरविषय वासना वर्त्तै बाहिर लोकलाज भय भारी। तातैं परम दिगम्बर मुद्रा धर नहिं सकैं दीन संसारी॥ ऐसी दुर्द्धर नग्न परीषह जीतैं साधु शील व्रतधारी। निर्विकार बालक वत निर्भय तिनके पायन धोक हमारी॥

७ अरति परीषह—देश कालको कारण लहिके होत अचैन अनेक प्रकारैं। तब तो खिन्न होंय जगवासी कलमलाय थिरता-पन छाड़ैं। ऐसी अरति परीषह उपजत तहां धीर धीरज उर धारैं। ऐसे साधुनको उर अन्तर बसो निरन्तर नाम हमारे॥

८ स्त्री परीषह—जे प्रधान केहरि को पकड़ै पन्नग पकड़ पान से चावैं। जिनको तनक देख भौं बांकी कोटिन सूर दीनता जापैं॥ ऐसे पुरुष पहाड़ उठावन प्रलय पवन त्रिय वेद पयापैं। धन्य धन्य ते साधु साहसी मन सुमेरु जिनको नहिं कांपै॥

९ चर्य्या परीषह—चार हाथ परिमाण निरख पथ चलत दृष्टि इत उत नहिं तानें। कोमल चरण कठिन धरती पर धरत धीर बाधा नहिं मानें। नाग तुरङ्ग पालकी चढ़ते ते सर्वादि हृदय नहिं आनें। यों मुनिराज सहैं चर्य्या दुख तब दृढ़ कर्म्म कुलाचल भानें॥

१० आसन परीषह—गुफा मशान शैल तरु कोटर निवसैं जहां शुद्ध भू हेरैं। परिमित काल रहैं निश्चल तन वारवार आसन नहिं फेरैं॥ मानुषदेव अचेतन पशु कृत बैठे विपत आन जब घेरैं। ठौर तजैं नहिं स्थिर होवें ते गुरु सदा बसो उर मेरे॥

११ शयन परीषह—जे महान सोनेके महलन सुन्दर सेज सोय सुख जोवैं। ते अब अचल अङ्ग एकासन कोमल कठिन भूमिपर

सोवैं ॥ पाहन खण्ड कठोर कांकरी गढ़त कोर कायर नहिं होवैं। ऐसो शयन परीषह जीतत ते मुनि कर्म कालिमा धोवैं ॥

१२ आक्रोश परीषह—जगत् जीव सम्पूर्ण चराचर सबके हित सबको सुखदानी। तिन्हें देख दुर्वचन कहें शठ पाखण्डी ठग यह अभिमानी। मारो याहि पकड़ पापीको तपसी भेष चोर है छानी। ऐसे वचन बाण की विरियां क्षमा ढाल ओढ़ें मुनि ज्ञानी ॥

१३ वध बन्धन परीषह—निरपराध निर्वैर महामुनि तिनको दुष्ट लोग मिल मारैं। कोई खेंच खम्भसे बांधे कोई पावक में परजारैं ॥ तहां कोप करते न कदाचित पूरब कर्म विपाक विचारैं। समरथ होय सहैं वध बंधन ते गुरु सदा सहाय हमारैं ॥

१४ याचना परीषह—घोर वीर तप करत तपोधन भये क्षीण सूखी गलबांहीं। अस्थिचाम अवशेष रहे तनु नसा जाल झलके जिस माहीं ॥ औषधि असन पान इत्यादिक प्राण जांय पर याचित नांहीं। दुर्द्धर अयाचीक व्रत धारैं करहिं न मलिन धर्म परछांहीं ॥

१५ अलाभ परीषह—एकबार भोजनको विरियां मौन साध बस्तीमें आवैं। जो नहिं बने योग भिक्षा विधि तो महन्त मन खेद न लावें। ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतें तब तप वृद्ध भावना भावैं। यों अलाभकी परम परीषह सहैं साधु सोही शिव पावैं ॥

१६ रोग परीषह—वात पित्त कफ श्रोणित चारों ये जब घटैं बढ़ैं तनु माहीं। रोग संयोग शोक तब उपजत जगत् जीव कायर हो जाहीं ॥ ऐसी व्याधि वेदना दारुण सहैं सूर उपचार न चाहीं। आतमलीन विरक्त देहसों जैन यती जिन नेम निबाहीं ॥

१७ तृणस्पर्श परीषह—सूखे तृण अरु तीक्षण कांटे कठिन कांकरी पांय विदारैं। रज उड़ आन पड़े लोचनमें तीर फांस तनु पीर विथारैं ॥ तापर पर सहाय नहिं वांछत अपने कर सों काढ़ न डारैं। यों तृणपरस परीषह विजयी ते गुरु भव भव शरण हमारैं॥

१८ मल परीषह—जीवन भर जल न्हौन तजो जिन नग्न रूप वन थान खड़े हैं । चलै पसेव धूप की विरियां उड़त धूल सब अंग भरे हैं ॥ मलिन देहको देख महा मुनि मलिन भाव उर नाहिं करे हैं । यो मल जनित परीषह जीतें तिन्हें पाय हम सीस धरे हैं ॥

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह—जे महान् विद्या निधिविजयी चिर तपसी गुण अतुल भरे हैं । तिनकी विनय वचन सों अथवा उठ प्रणाम जन नाहिं करे हैं ॥ तो मुनि तहां खेद नहिं मानत उर मलीनता भाव हरे हैं । ऐसे परम साधुके अहिनिशि हाथ जोड़ हम पाँय परे हैं ॥

२० प्रज्ञा परीषह—तर्क छन्द व्याकरण कलानिधि आगम अलङ्कार पढ़ जानैं । जाकी सुमति देख परवादी विलखे होय लाज उर आनैं ॥ जैसे सुनत नादि केहरि को वन गयन्द भाजत भय मानैं । ऐसी महाबुद्धि के भाजन ये मुनीश मद रंच न ठानैं ॥

२१ अज्ञान परीषह—सावधान वर्तैं निशिवासर संयम शूर परम वैरागी । पालत गुप्ति गये दीर्घ दिन सकल संग ममता पर त्यागी ॥ अवधिज्ञान अथवा मनपर्यय केवल ऋद्धि आज न हि जागी । यों विकल्प नहिं करें तपोधन सो अज्ञान विजयी बड़भागी ॥

२२ अदर्शन परीषह—मैं चिरकाल घोर तप कीने अजौं ऋद्धि अतिशय नहिं जागे । तप बल सिद्धि होत सब सुनिये सो कुछ बात झूंठसी लागे ॥ यों कदापि चित में नहिं चिन्तित समकित शुद्ध शान्ति रस पागे । सोई साधु अदर्शन विजयी ताके दर्शन से अघ भागे ।

किस कर्म के उदय से कौन परीषह होती हैं—

(कवित्त)

ज्ञानावरणी से दोय प्रज्ञा औ अज्ञान होय, एक महा मोहतें अदर्शन बखानिये । अन्तराय कर्म सेती उपजे अलाभ दुख,

सत चारित्र मोहनी केवल सुजानिये॥ नगन निषद्यानारी मान सन्मान गारि, याचना अरति सब ग्यारह ठीक ठानिये। एकादश बाकी रहीं वेदना उदय से कही, बाईस परीषह उदय ऐसेउर आनिये॥

अडिल्ल छन्द—एकवार इन माहिं एक मुनिके कही। सब उनीस उत्कृष्ट उदय आवें सही॥ आसन शयन विहार दोइ इन माहिकी। शीत उष्ण में एक तीन ये नाहिं की॥

बारहमासा–श्रीमुनिराजजी का।

राग मरहठी।

मैं बन्दूं साधु महन्त बड़े गुणवन्त सभी चित्तलाके।
जिन अथिर लखा संसार वसे वन जाके॥ टेक॥

चित चैत में व्याकुल रहे, काम तन दहे, न कुछ बन आवे। फूली बनराई देख मोह भ्रम छावे। जब शीतल चले समीर, स्वच्छ हो नीर भवन सुख भावे। किस तरह योग योगीश्वर से बनआवे॥

(झड़) तिस अवसर श्रीमुनि ज्ञानी, रहें अचल ध्यान में ध्यानी। जिन काया लखी पयानी। जग जरत खाक समआनी॥ उस समय धीर धर रहैं, अमर पद लहैं, ध्यान शुभ ध्याके। जिन अथिर लखा संसार बसे वन जाके॥१।

जब आवत है बैसाख, होय तृण खाक, तपन में जलके। सब करैं धाम विश्राम पवन झलझलके॥ ऋतु गर्मीमें संसार, पहिन वर नार वस्त्र मलमलके। वे जलसे करते नेह जो हैं जी थलके॥

(झड़)—जिस समय मुनी महराजे, तन नग्न शिखर गिर राजे। प्रभु अचल सिंहासन राजे, कहो क्यों न कर्म दल लाजे। वो घोर महा तप करैं, मोक्षपद धरैं, बसै शिव जाके॥ २॥ जिन०

जब पड़े ज्येष्ठमें ज्वाला, होय तन काला धूपकी मारी। घर बाहर पग नहिं धरे कोइ घरवारी॥ पानीसे छिड़कैं धाम, कर

विश्राम सकल नर नारी । घर खसकी टटिया छिपैं लूहकी मारी ॥

(झड़)—मुनिराज शिखिर गिर ठाड़े, दिन रैन ऋद्धि अति बाढ़े । अति तृषा रोग भय बाढ़े, तब रहैं ध्यानमें गाढ़े ॥ सब सूखे सरवर नीर, जलै शरीर, रहैं समझाके ॥ ३ ॥ जिन०

आषाढ़ मेघका जोर, बोलते मोर, गरजते बादल । चमके बिजली कड़ कड़े पड़े धारा जल ॥ अति उमड़े नदियां नीर गहर, गम्भीर, भरे जलसे थल । भोगीको ऐसे समय पड़े कैसे कल ॥

(झड़)—उस समय मुनी गुणवन्ते, तरवर तट ध्यान धरन्ते ॥ अति काटैं जीव अरु जन्ते, नहिं उनका सोच करन्ते, वे काटैं कर्म जंजीर नहीं दिलगीर रहैं शिव पाके ॥ ४ ॥ जिन०

श्रावणमें त्योहार, झूलती नार, चढ़ी हिंडोले । वे गावैं राग मल्हार पहन नये चोले ॥ जग मोह तिमिर मन बसे, सर्वतन कसे देत झकझोले । उस अवसर श्रीमुनिराज बनत हैं भोले ॥

(झड़)—वे जीतैं रिपु से लरके, कर ज्ञान खड्ग ले करके । शुभ शुक्लध्यानको धरके, परफुल्लित केवल वरके ॥ नहिं सहैं वो यमकी त्रास, लहैं शिव वास अघात नशाके ॥ ५ ॥ जिन०

भादव अँधियारी रात, सूझै नाहाथ, घुमड़ रहे बादर । बन मोर पपीहा कोयल बोलैं दादुर ॥ अति मच्छर भिन भिन करैं, सांप फुंकरैं, पुकारैं थलचर । बहु सिंह बघेरा गज घूमैं वन अन्दर ॥

(झड़)—मुनिराज ध्यान गुण पूरे, तब काटैं कर्म अँकूरे । तनु लिपटत कान खजूरे, मधु मक्ख ततइयें भूरे ॥ चिटियोंने बिल तन करे, आप थिर खड़े, हाथ लटका के ॥ ६ ॥ जिन०

आश्विनमें वर्षा गई, समय नहिं रही, दशहरा आया । रही नहिं वृष्टि अरु कामदेव लहराया ॥ कामी नर करैं किलोल, बनावैं

डोल, करें मन भाया। है धन्य साधु जिन आतम ध्यान लगाया॥
(झड़)—वसु याम योगमें भीने, मुनि अष्ट कर्म क्षय कीने। उपदेश सबनको दीने, भविजनको नित्य नवीने॥ हैं धन्य धन्य मुनिराज, ज्ञानके ताज, नमूं शिर नाके॥ ७॥ जिन०

कार्तिकमें आया शीत, भई विपरीत, अधिक शरदाई। संसारी खेलें जुआ कर्म दुखदाई॥ जग नर नारी का मेल, मिथुन सुख केल, करैं मन भाई। शीतल ऋतु कामी जनको है सुखदाई॥
(झड़)—जब कामी काम कमावैं, मुनिराज ध्यान शुभ ध्यावैं। सरवर तट ध्यान लगावैं, सो मोक्ष भवन सुख पावैं॥ मुनि महिमा अपरम्पार, न पावै पार, कोई नर गाके॥ ८॥ जिन०

अगहनमें टपके शीत यही जगरीत, सेज मन भावे। अति शीतल चले समीर देह थर्रावे॥ शृङ्गार करे कामिनी, रूप रस ठनी, साम्हने आवे। उस समय कुमतिवन सबका मन ललचावे॥
(झड़)—योगीश्वर ध्यान धरे हैं, सरिताके निकट खरे हैं, वहां ओले अधिक परे हैं, मुनि कर्मका नाश करे हैं। जब पड़े वर्फ घनघोर, करें नहिं शोर, जयो दृढ़ताके॥ ९॥ जिन०

यह पौष महीना भला, शीतमें घुला, काँपती काया। वे धन्य गुरू जिन इस ऋतु ध्यान लगाया॥ घरबारी घरमें छिपैं, वस्त्र तन लिपैं, रहै जैड़ाया। तज वस्त्र दिगम्बर हो मुनि ध्यान लगाया
(झड़)—जलके तट जग सुखदाई, महिमा सागर मुनिराई। धर धीर खड़े हैं भाई, निज आतम से लवलाई॥ है यह संसार असार, वे तारणहार, सकल वसुधाके॥ १०॥ जिन०

है माघ वसन्त वसन्त, नार अरु कन्थ, युगल सुख पाते। वे पहिने वस्त्र वसन्त फिरें मदमाते॥ जब चढ़े मदनकी सैन, पड़ै नहिं चैन, कुमति उपजाते। हैं वड़े धीर जन वहुधा वे डिग जाते॥
(झड़)—तिस समय जु हैं मुनि ज्ञानी, जिन काया लखी

पयानी । भव डूबत बोधे प्राणी, जिन ये वसन्त जिय जानी ॥ चेतन सो खेलें होरी, ज्ञान पिचकारी, योग जल लाके ॥११॥ जिन०

जबलगे महीना फाग, करें अनुराग, सभी नरनारी । ले फिरे फैंटमें कर गुलाल पिचकारी ॥ जब श्रीमुनिवर गुणखान अचल धर ध्यान, करें तप भारी । कर शील सुधारस कर्मन ऊपर डारी ॥

(झड़)—कीर्ति कुम कुमें बनावैं, कर्मोंसे फाग रचावैं । जो बारामासा गावैं, सो अजर अमर पद पावैं ॥ यह भाषैं जीया-लाल, धर्म गुणमाल, योग दर्शाके ॥ १२ ॥ जिन अथिर लखा०

बारहमासा—राजुल ।

राग मरहठी [झड़ी]

मैं लुंगी श्रीअरहन्त, सिद्ध भगवन्त, साधु सिद्धान्त चारका सरना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—॥ टेक

आषाढ़ मास (झड़ी)

सखि आया अषाढ़ घन घोर, मोर चहुंओर, मचा रहे शोर इन्हें समझावो । मेरे प्रीतम की तुम पवन परीक्षा लावो ॥ हैं कहां मेरे भरतार, कहां गिरनार, महाव्रत धार वसे किस बन में । क्यों बांध मोड़ दिया तोड़ क्या सोची मन में ॥

(झर्बटे)—न जारे पपैया जारे, प्रीतमको दे समझारे । रहिनों अब संग तुम्हारे, क्यों छोड़ दई मझधारे ॥

(झड़ी)—क्यों बिना दोष भये रोष, नहीं सन्तोष, यही अफसोस बात नहिं बूझो । दिये जादों छप्पन कोड़ छोड़ क्या सूझो । मोहिं राखो शरण मंझार, मेरे भर्तार, करो उद्धार, क्यों दे गये झुरना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—

श्रावण मास (झड़ी)

सखि श्रावण संवर करे, समन्दर भरे, दिगम्बर धरे क्या

करिये। मेरे जी में ऐसी आवे महाव्रत धरिये। सब तजूं हार श्रृंगार, तजूं संसार, क्यों भव मंझार में जी भरमाऊं। फिर पराधीन तिरिया का जन्म नहिं पाऊं॥

(झर्वटें) सबसुन लो राजदुलारी। दुख पड़गया हम पर भारी। तुम तज दो प्रीति हमारी--कर दो संयम की त्यारी॥

(झड़ी)—अब आगया पावस काल, करो मत टाल, भरे सबताल महा जल बरसै। बिन परसे श्रीभगवन्त मेरा जी तरसै। मैं तज दई तीज सलौन, पलट गई पौन, मेरा है कौन मुझे जग तरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना॥

भादों मास (झड़ी)

सखि भादों भरे तलाव, मेरे चितचाव, करूंगी उछाव से सोलहकारण। करूं दसलक्षण के व्रत से पाप निवारण। करूं रोटतीज उपवास, पञ्चमी अकास, अष्टमी खास निशल्य मनाऊं। तपकर सुगन्ध दशमी को कर्म जलाऊं॥

(झर्वटें)—सखि दुद्धर रस की धारा। तजिहार चार परकारा। करूं उग्र उग्र तप सारा। ज्यों होय मेरा निस्तारा।

(झड़ी)—मैं रत्नत्रय व्रत धरूं, चतुर्दशी करूं, जगत् से तिरूं करूं पखवाड़ा। मैं सब से क्षमाउं दोष तजूं सब राड़ा। मैं सातों तत्व विचार, के गाऊं मल्हार, तजा संसार तो फिर क्या करना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—

आसौज मास (झड़ी)

सखि आया मास कुँवार, लो भूषण तार, मुझे गिरनार की दे दो आज्ञा। मेरे पाणिपात्र आहार की है परतिज्ञा। लो तार ये चूड़ामणी, रतन की कणी, सुनों सब जड़ी खोल दो वैनी। मुझको अवश्य भरतारहिं दीक्षा लेनी॥

(झर्वटैं)—मेरे हेतु कमण्डलु लावो । इक पीछी नई मँगावो । मेरा मत जी भरमावो । मम सूते कर्म जगाश्रो ॥

(झड़ी)—है जगमें असाता कर्म, बड़ा बेशर्म, मोह के भ्रमसे धर्म न सूझै । इसके वश अपना हित कल्याण न बूझै । जहां मृग तृष्णा की धूर, वहां पानी दूर भटकता भूर कहां जल झरना ॥ निर्नेम नेम विन हमें जगत् क्या करना—

कार्त्तिक मास (झड़ी)

सखि कातिक काल अनन्त, श्रीअरहन्त, की सन्त महन्तने आज्ञा पाली । धर योग यत्न भव भोगकी तृष्णा टाली । सजे चौदह गुण अस्थान, स्वपर पहचान, तजे रु मकान महल दिवाली । लगी उन्हैं मिष्ट जिन धर्म अमावस काली ॥

(झर्वटैं)—उन केवल ज्ञान उपाया । जगका अन्धेर मिटाया । जिसमें सब विश्व समाया । तन धन सब अथिर बताया ॥

(झड़)—है अथिर जगत् सम्बन्ध, अरो मतिमन्द, जगत्का अन्ध है धुन्ध पसारा । मेरे प्रीतमने सत जानके जगत् विसारा । मैं उनके चरणकी चेरी, तू आज्ञा देरी, सुनले मा मेरी है एक दिन मरना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना—

अगहन मास (झड़ी)

सखि अगहन ऐसी घड़ी, उदै में पड़ी, मैं रहगई खड़ी दरस नहिं पाये । मैंने सुकृत के दिन विरथा योंही गँवाये ।

नहिं मिले हमारे पिया, न जप तप किया, न संयम लिया अटक रही जगमें । पड़ी काल अनादिसे पापकी बेड़ी पग में ॥

(झर्वटैं)—मत भरियो माँग हमारी । मेरे शीलको लागेगारी । मत डारो अञ्जन प्यारी । मैं योगन तुम संसारी ॥

(झड़ी)—हुये कन्त हमारे जती, मैं उनकी सती, पलट गई रती तो धर्म नहिं खण्डूं । मैं अपने पिताके वंशको कैसे भंडूं ।

मैं मण्डा शील सिङ्गार, अरी नथ तार, गये भर्त्तारके संग आभरना।
निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना—

पौष मास (झड़ी)

सखि लगा महीना पोह, ये माया मोह, जगत्से द्रोह रु प्रीत करावै। हरे ज्ञानावरणी ज्ञान अदर्शन छावै। पर द्रव्यसे ममता हरै, तो पूरी परै, जु सम्वर करै तो अन्तर टूटै। अस ऊंच नीच कुल नामकी संज्ञा छूटै॥

(झर्वटें)—क्यों ओछी उमर धरावे। क्यों सम्पतिको विलगावे। क्यों पराधीन दुःख पावै। जो संयममें चित लावै॥

(झड़ी)-सखि क्यों कहलावे दीन, क्यों हो छवि छीन, क्यों विद्याहीन मलीन कहावै। क्यों नारि नपुंसक जन्ममें कर्म नचावै। वे तजैं शील शृंङ्गार, रुले संसार, तिन्हें दरकार नरकमें पड़ना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना—

माघ मास (झड़ी)

सखि आगया माह वसन्त, हमारे कन्त, भये अरहन्त वो केवल ज्ञानी। उन महिमा शील कुशीलकी ऐसी वखानी। दिये सेठ सुदर्शन सूल, भई मखतूल, वहां वरसे फूल हुई जयवाणी। वे मुक्ति गये अरु भई कलङ्कित राणी॥

(झर्वटें)—कीचक ने मन ललचाया। द्रुपदीपर भाव धराया। उसे भीमने मार गिराया। उन किया जैसा फल पाया॥

(झड़ी)—फिर गहा दुर्योधन चीर, हुई दलगीर, गई जुड़ भीर लाज अति आवे। गये पाण्डु जुयेमें हार न पार बसावै। भये परगट शासन वीर, हरी सब पीर, बन्धाई धीर पकर लिये चरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना—

फागुन मास (झड़ी)

सखि आया फागुन बड़भाग, तो होरी त्याग, अठाही लाग के

मैनासुन्दर । हरा श्रीपालका कुष्ट कठोर उदम्बर । दिया धवल सेठने डार, उदधि की धार, तो हो गये पार वे उसही पल में । अरु जा रणी गुण माल नहूवे जल में ॥

(झर्वटें)—मिली रैन मंजूशा प्यारी । जिन ध्वजा शील कीधारी । परी सेठ पै मार करारी । गया नर्क में पापाचारी ॥

(झड़ी) तुम लखो द्रौपदी सती, दोष नहिं रती कहैं दुर्मती पद्म के वन्धन । हुआ धातकी खण्ड जरूर शील इस खंडन । उन फूटे घड़े मंझार, दिया जल डाल, तो वे आधार थमा जल झरना । निर्मम नेम विन हमें जगत् क्या करना—

चैत्रमास (झड़ी)

सखि चैत्र में चिन्ता करे, न कारज सरे, शील से टरे कर्मकी रेखा । मैंने शीलसे भीलको होता जगत् गुरु देखा । सखो शीलमें सुलसा तिरी, सुतारा फिरी, खलासी करी श्रीरघुनन्दन । अरु मिली शील परताप पवन से अञ्जन ॥

(झर्वटें)—रावण ने कुमत उपाई । फिर गया विभीषण भाई । छिनमें जा लंक गमाई । कुछ भी नहिं पार वसाई ॥

(झड़ी)—सीता सती अग्नि में पड़ी, तो उस ही घड़ी, वह शीतल पड़ी चढ़ी जल धारा । खिल गये कमल भये गगनमें जय जय कारा । पद पूजे इन्द्र धरेन्द्र, भई शीतेन्द्र, श्रीजिनेन्द्रने ऐसा वरना । निर्मम नेम विन हमें जगत् क्या करना—

वैशाख मास (झड़ी)

सखी आई वैसाखी मेख, लई मैं देख, ये ऊरध रेख पड़ी मेरे करमें । मेरा हुआ जन्म युहाँ उग्रसेन के घरमें । नहिं लिखा करम में भोग, पड़ा है जोग, करो मत सोग जाऊं गिरनारी । मात पिता अरु भ्रात से क्षमा हमारी ॥

(झर्वटें)—मैं पुण्य प्रताप तुम्हारे । घर भोगे भोग अपारे ।

जो विधिके अङ्क हमारे । नहिं टरें किसी के टारे ॥
(झड़ी)—मेरी सखी सहेली वीर, न हों दलगीर, धरो चित धीर मैं क्षमा कराऊं । मैं कुलको तुम्हारे कबहुं न दाग लगाऊं । वह ले आज्ञा उठ खड़ी, थी मंगल घड़ी, वन में जा पड़ी सुगुरू के चरना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—

जेठ मास (झड़ी)

अजी पड़ी जेठकी धूप, खड़े सब भूप, वह कन्या रूप सती बड़ भागन । कर सिद्धन को परणाम किया जग त्यागन । अजि त्यागे सब संसार, चूड़ियां तार, कमण्डलु धार कैलाई पिछोटी । अरु पहर के साड़ी श्वेत उपाटी चोटी ॥
(झर्वटें) उन महाउग्र तप कीना । फिर अच्युतेन्द्र पद लीना । है धन्य उन्होंका जीना । नहि विषयन में चित दीना ॥
(झड़ी)— अजी त्रिया वेद मिट गया, पाप कट गया, पुण्य बढ़ गया बढ़ा पुरुषारथ । करे धर्म अरथ फल भोग रचे परमारथ । वो स्वर्ग सम्पदाभुक्त, जायगी मुक्ति, जैन की उक्ति में निश्चय धरना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना—
जो पढ़े इसे नर नार, बढ़े परिवार, सब संसारमें महिमा पावें । सुन सतियन शील कथान विघ्न मिट जावें । नहिं रहें सुहागिन दुखी, होंय सब सुखी, मिटे वेरुखी करें पति आदर । वे होंय जगत् में महा सतियोंकी चादर ॥
(झर्वटें)—मैं मानुष कुल में आया । अरू जाति यती कहलाया । है कर्म उदय की माया । बिन संयम जन्म गँवाया ॥
(झड़ी)—ग्राम संवत कविवंश नाम—
है दिल्ली नगर सुवास, वतन है खास, फाल्गुन मास अठाही आठैं । हों उन के नित कल्याण छपा कर बाटैं । अजी विक्रम अब्द उनीस, पै धर पैंतीस, श्री जगदीश का लेलैं शरणा । कहै दास नैनसुख दोष पर दृष्टि न धरना ।

नेमि-ब्याह ।

(विनोदीलाल कृत)

(सवैया)

मौर धरो शिर दूलहके, कर कंकण बांध दई कस डोरी ।
कुण्डल काननमें झलकें, अति भालमें लाल विराजत रोरी ॥
मोतिनकी लड़ शोभित है, छवि देखि लजें वनिता सब गोरी ।
लालविनोदी के साहिबको, मुख देखनको दुनियां उठ दौरी ॥ १ ॥
छत्र फिरें शिर दूलहके, तब बांटत रत्त शिवादेवी मैया ।
कृष्ण इतें बलभद्र उतें, कर ढोरत चम्र चले दोऊ भैया ॥
भूप समुद्र विजै सब संग, चले वसुदेव उछाह करैया ।
लाल विनोदीके साहिबको, वनिता सब ही मिलि लेत बलैया ॥२॥
गोड़े गये जब नेम प्रभू, पशु पक्षिन खेंच पुकार करी है ।
नाथसे नाथनके प्रतिपाल, दयाल, सुनो विनती हमरी है ॥
बन्दि पड़े बिललांय सबै, विन कारण आपद आनि परी है ।
पूछत लाल विनोदीके साहिब, सारथी क्यों इन बन्दि भरी है ॥३॥
सारथीने कर जोड़ कहो, सुन नाथ, इन्हें जु विदारेंगे अब ।
यादव संग जुरे सबरे, तिन कारण ये सब मारेंगे अब ॥
बच्चा इनके बनमें बिलपें, इनको वह आज संघारेंगे अब ।
ताते तुमसे फरियाद करें, हमरी गति नाथ सुधारेंगे अब ॥ ४ ॥
बात सुनी उतरे रथसे, पशु पक्षिनकी सब बन्दि छुड़ाई ।
जाव सबै अपने थलको, हमरो अपराध क्षमा करो भाई ॥
है धृक् जीवन यों जगमें, तबही प्रभु द्वादश भावना भाई ।
देव लोकान्तिक आय गये, जिन धन्य कहैं सब यादव राई ॥ ५ ॥
कौन करै प्रभु तो विन यों, अरु को जगमें यह बात विचारे ।
कौन तजै सुत बन्धु वधू, अरु को जगमें ममता निर्वारे ॥

को वसु कर्मनि जीत सके, धनि आप तरे अरु औरन तारे ।
लाल विनोदीके साहवने, यश जीत लियो जग जीतन हारे ॥
नेम उदास भये जवसे, कर जोड़के सिद्धका नाम लयो है ।
अम्बर भूषण डार दिये, शिर मौर उतारके डार दयो है ।
रूप धरो मुनिका जवही, तव ही चढ़िके गिरिनार गयो है ।
लाल विनोदीके साहिवने, तहां पंच महाव्रत योग ठयो है ॥७॥
नेमकुमारने योग लयो, जव होनेको सिद्ध करा मन इच्छा ।
या भवके सुख जान अनित्य, सो आदर एक उदण्डकी भिक्षा ॥
नेह तजो घरवार तजो, नहि भोग विलासनका मन शिक्षा ।
लाल विनोदीके साहिवके संग, भूप सहस्रलई तव दिक्षा ॥८॥
काहूने जाय कहो-सुनि राजुल, तेरो पिया गिरिनारि चढ़ो है ।
ये सुन भूमि पछार लई, मनु या तन से सव जीव कढ़ो है ॥
सो उग्रसेनसे जाय कहो, सुन तात, विधाता अनर्थ गढ़ो है ।
लाज सवै सुध भूल गई, पिय देखनको जु उछाह वढ़ो है ॥६॥
लाड़ली क्यों गिरिनारि चढ़े, उस ही पति तुल्य सुधो वर लाऊं ।
प्रोहित को पठवाऊं अभी, वहु भूपरके सब देश ढुंढ़ाऊं ॥
ब्याह रचों फिरके तुम्हरो, महि मण्डलके सव भूप वुलाऊं ।
लाल विनोदीके नाथ विना, द्युतिवंतको कंत तुझे परणाऊं ॥१०॥
काहे न वात सम्हाल कहो. तुम जानत हो यह वात भली है ।
गालियां काढ़त हो हमको, सुन तात भली तुम जीभ चली है ।
मैं सवको तुम तुल्य गिनूं. तुम जानत ना यह वात रली है ।
या भवमें पति नेमि प्रभूं, वह लाल विनोदीको नाथ वली है ॥११॥
मेरो पिया गिरनारि चढ़ो, सुनतात मैं भी गिरिनारि चढ़ोंगी ।
संग रहों पियके वनमें, तिन ही पियको मुख नाम पढ़ोंगी ॥
और न वात सुहाय कछू, पियकी गुणमाल हियेमें मढ़ोंगी ।
कंत हमारे रचैं शिवसे, शिव थानकोमैं भी सिवानचढ़ोंगी॥१२॥इति॥

सङ्कटहरण विनती ।

हो दीनबन्धु श्रीपती करुणानिधान जी । अब मेरी विथा क्यों ना हरो बार क्या लगी ॥ टेक ॥ मालिक हो दो जहान के जिनराज आप ही । ऐबो हुनर हमारा कुछ तुम से छिपा नहीं ॥ बेज़ान में गुनाह जो मुझ से बन गया सही । ककरी के चोर को कटार मारिये नहीं ॥ हो दीन० १॥ दुख दर्द दिलका आप से जिसने कहा सहीं । मुशकिल कहर बहर से लई है भुजा गही ॥ सब वेद औ पुराण में परमाण है यही । आनन्द कन्द श्रीजिनन्द देव है तुही ॥ हो दीन० २ ॥ हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती । गंगा में गहीं ग्राहने गजराज की गती ॥ उस वक्तमें पुकार किया था तुम्हें सती । भयटार के उभार लिया हो कृपापती ॥ हो दीन० ३॥ पावक प्रचण्ड कुण्ड में उमण्ड जब रहा । सीता से सत्य लेने को जब राम ने कहा ॥ तुम ध्यान धरके जानकी पग धारती तहां । तत्काल ही सर स्वच्छहुआ कमल लहलहा ॥ हो० ४॥ जबचीर द्रोपदीका दुशासनने था गहा । सबरे सभा के लोग कहते थे हहा हहा ॥ उस वक्त भीर पीर में तुमने किया सहा । परदा ढका सती का सुयश जगत में रहा ॥ हो० ५ ॥ सम्यक शुद्ध शीलवन्त चन्दनासती । जिसके नजीक लगती थी जाहर रती रती । बेड़ीमें पड़ी थी तुमें जब ध्यावती हुती ॥ तब वीरधीर ने हरी दुःख द्वन्द की गती ॥ हो० ६ ॥ श्रीपाल को सागर विषै जब सेठ गिराया । उसकी रमासे रमने को आया था बेहया ॥ उस वक्त के संकट में सती तुमको जो ध्याया । दुख द्वन्दफन्द मेटके आनन्द बढ़ाया ॥ हो० ७ ॥ हरषेण की माता को था जब शोक सताया । रथ जैनका तेरा चले पीछेसे बताया ॥ उस वक्त के अनशन में सती तुमको जो ध्याया ।

चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया॥ हो० ८॥ जब अंजना सती को हुआ गर्भ उजाला। तब सासु ने कलक लगा घर से निकाला॥ वन वर्गके उपसर्गमें सती तुमको चितारा। प्रभु भक्तियुत जानके भय देव निवारा॥ हो० ६॥ सोमा से कहा जो तू सती शील विशाला। तो कुम्भ में से काढ़ भला नाग ही काला॥ उस वक्त तुम्हें ध्याय के सती हाथ जो डाला। तत्काल ही वो नाग हुआ फूलकी माला॥ हो० १०॥ जब राज रोग था हुआ श्रीपालराजको। मेनासती तब आपको पूजा इलाज को॥ तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपालराज को। वह राज भोग भोग गया मुक्तिराजको॥ हो० ११॥ जब सेठ सुदर्शन को मृषा दोष लगाया। रानी के कहे भूपने शूली पै चढ़ाया॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान में ध्याया। शूली से तार उसको सिंहासन पै बिठाया॥ हो० १२॥ जब सेठ सुधन्ना को था बापी में गिराया। ऊपर से दुष्ट उसको था वह मारने आया॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने दिल अपने में ध्याया। तत्काल ही जंजाल से तब उसको बचाया॥ हो० १३॥ एक सेठके घरमें किया दारिद्र ने डेरा। था भोजन का ठिकाना भी नहीं सांझ सवेरा॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब ध्यान में घेरा। तबकर दिया था आपने लक्ष्मी-का बसेरा॥ हो० १४॥ बलि बादमें मुनिराज सों जब पार न पाया। तब रातको तलवार ले शठ मारने आया। मुनिराज ने निज ध्यान में मन लीन लगाया। उस वक्त हो परतक्ष तहाँ देव बचाया॥ हो० १५॥ जब रामने हनुमन्त को गढ़लङ्क पठाया। सीता की खबर लेनेको फौरन ही सिधाया॥ मग बीच दो मुनिराजकी लख आगमें काया। झटवार मूसलधारसे उपसर्ग बुझाया॥ हो० १६॥ जिननाथ ही को माथ नवाता था उदारा। घेरेमें पड़ा था वह कुम्भकरण बिचारा॥ उस वक्त

तुम्हें प्रेमके संकटमें उचारा। रघुवीरने सब पीर तहां तुरत निवारा॥ हो० १७॥ रणपाल कुंवरके पड़ी थी पांवमें वेरी। उस वक़ तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सवेरी। तत्काल हो सुकुमार की सब भड़ पड़ी वेरी। तुम राजकुंवरकी सभी दुःख द्वन्द्व निवेरी॥ हो० १८॥ जब सेठके नन्दनको डसा नाग जु कारा। उस वक्त तुम्हें पीरमें धरधीर पुकारा॥ तत्काल ही उस बालका विषभूरि उतारा। वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा॥ हो० १६॥ मुनि मानतुङ्गको दई जब भूपने पीरा। तालेमें किया वन्द भरी लोह जंजीरा। मुनीशने आदीशकी थुत की है गँभीरा। चक्रेश्वरी तब आनके झटदूर की पीरा॥ हो० २०॥ शिवकोटने हठथा किया समन्तभद्र से। शिवपिण्डकी बन्दन करो संको अभद्र से॥ उस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सो। जिन चन्द्रकी प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्र सो॥ हो०२१॥ सूवेंने तुम्हें आनके फल आम चढ़ाया। मैंडक ने चढ़ा फूल भरा भक्त का भाया॥ तुम दोनोंको अभिराम स्वर्गधाम बसाया। हम आपसे दातारको लख आज ही पाया॥ २२॥ कपि स्वान सिंह नवल अज बैल विचारे। तिर्यंच जिन्हें रञ्च न था बोध चितारे। इत्यादिको सुरधाम दे शिवधाममें धारे। हम आपसे दातारको प्रभु आज निहारे॥ हो० २३॥ तुमहीं अनन्त जन्तु का भय भाड़ निवारा। वेदो पुराणमें गुरु गणधरने उचारा। हम आपकी शरणागतिमें आके पुकारा। तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इक्ष अहारा॥ हो० २४॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भुक्त मुक्तके दानी। आनन्द कन्द वृन्दको हो मुक्तिके दानी। मोहि दीन जान दीनबन्धु पातक भानी। संसार विषय तार तार अन्तरयामी॥ हो० २५॥ करुणानिधान बानको अब क्यों न निहारो। दानी अनन्त दानके दाता हो संभारो॥ वृष चन्द नन्द

वृन्दका उपसर्ग निवारा। संसार विषमक्षार से प्रभु पार उतारो॥ हो दीनबन्धु० २६॥

पुकार पच्चीसी।

दोहा—जो यह भव संसारमें, भुगतें दुःख अपार।
सो पुकार पच्चीसिका, करें कवित इक ढार॥

तेईसा छन्द।

श्री जिनराज गरीबनिवाज सुधारन काज सबै सुखदाई।
दीनदयाल बड़े प्रतिपाल दया गुणमाल सदा शिर नाई॥
दुर्गतिटारन पाप निवारन हो भवतारन को भव ताई।
बारहिंबार पुकारतु हों जनकी विनती सुनिये जिनराई॥ १॥
जन्म जरा मरणों त्रय दोष लगे हमको प्रभु काल अनाई।
तासु नसावनको तुम नाम सुनो हम वैद्य महा सुखदाई॥
सो त्रय दोष निवारनको तुम्हरे पद सेवतु हों चित ल्याई। बारहिं०॥२॥
जो इक ह्वै भवको दुख होय तो राख रहों मनको समझाई।
यह चिरकाल कुहाल भयो अबलों कहुं अन्त परो न दिखाई॥
मो पर या जगमांहि कलेश परे दुख घोर सहे नहिं जाई। बारहिं०॥३॥
देख दुखी पर होत दयाल सुहै इक ग्राम पती शिर नाई।
हो तुमनाथ त्रिलोकपती तुमसे हम अर्ज करी शिर नाई॥
मो दुख दूर करो भवके वसु कर्मन ते प्रभु लेउ छुड़ाई। बारहिं० ॥४॥
कर्म बड़े रिपु हैं हमरे हमरी बहु हीन दशा कर पाई।
दुःख अनन्त दिये हमको हर भाँतिन भाँतिन खाद लगाई॥
मैं इन वैरिनके वश ह्वै करिके भटकोसु कहो नहि जाई। बारहिं०॥५॥
मैं इस ही भव काननमें भटको चिरकाल सुहाल गमाई।
किञ्चित् ही तिलसे सुखको बहु भांति उपाय करे ललचाई॥
चार गतें चिर मैं भटको जहां मेरु समान महा दुखदाई। बारहिं०॥६॥

नित्य निगोद अनादि रहो असके तनकी जहां दुर्लभताई ।
ज्यों क्रम सो निकसो वह तें त्यों इतर निगोद रहो चिरछाई ॥
सूक्षम बादर नाम भयो जबही यह भाँति धरी पर्यायी । वारहि०॥७॥
औ जब ही पृथ्वी जल तेज भयो पुनि होय वनस्पतिकाई ।
देह अघात धरी जब सूक्षम घातत बादर दीरघताई ॥
एक उदै प्रत्येक भयो सह धारण एक निगोद बसाई । वारहि०॥८॥
इन्द्रिय एक रही चिरमें कब लब्धि उदै क्षय उपशमताई ।
वे अय चार धरी जब इन्द्रिय देह उदै विकलत्रय आई ॥
पंचन आदि किधौं पर्यन्त धरे इन इन्द्रियके त्रस काई । वारहि० ॥९॥
काय धरी पशुकी बहु वार भई जल जन्तुनकी पर्याई ।
जो थल मांहि अकाश रहो चिर होय पखेरू पंख लगाई ॥
मैं जितनी पर्याय धरीं तिनके बरणों कहुं पार न पाई । वारहिं०॥१०॥
नरक मझार लियो अवतार परौ दुख भार न कोई सहाई ।
जो तिलसे सुख काज किये अघते सब नरकनमें सुधि आई ॥
ता तियके तनकी पुतली हमरे हियरा करि लाल भिराई । वारहिं०॥११॥
लाल प्रभा सु महीं जह हैं अरु शर्कर रेत उन्हार बताई ।
पङ्क प्रभा जु धुआवत है तमसी सु प्रभा सु महातम ताई ॥
जोजन लाख जु पोड़स पिण्ड तहां इकही छिनमें गल जाई ॥वारहि०१२॥
जे अघ घात महा दुखदायक मैं विषयारसके फल पाई ।
काटत है जबहीं निरदय तबही सरिता महिं देत बहाई ॥
देवअदेव कुमार जहाँ बिच पूरब वैर बतावत जाई ॥ वारहि० ॥१३॥
ज्यों नरदेह मिली क्रम सों करि गर्भ कुवास महादुखदाई ।
जे नव मास कलेश सहे मलमूत्र अहार महाजय ताई ॥
जे दुख देखि जबैंनिकसो पुनि रोवत बालपनेदुखदाई । वारहिं०॥१४॥
योवन में तन रोग भयो कबहूं विरहानल व्याकुलताई ।
मान विषैं रस भोग चहों उन्मत्त भयो सुख मानत ताही ।

आय गयो क्षणमें विरथापन सो नर भौ इस भाँति गमाई ॥बारहिं०॥
देव भयो सुर लोक विषैं तव मोहि रहो परया डर लाई ।
पाय विभूति बड़े सुरकी पर सम्पति देखत झूरत छाई ॥
माल जवैं मुरझाय रहो थित पूरण जानि तवैं विल-लाई ॥बारहिं०१६॥
जे दुख मैं भुगते भवके तिनके वरणौं कहुं पार न पाई ।
काल अनादिन आदि भयो तहँ मैं दुख भाजन हो अघ माहीं॥
सो दुख जानत हो तुमहीं जबहीं यह भांति धरीपर्यायी ॥बारहिं०१७॥
कर्म अकाज करे हमरे हमको चिरकाल भये दुखदाई ।
मैं न विगाड़ करो इनको बिन कारण पाय भये अरि आई ।
मात पिता तुमहीं जगके तुम छांड़ि फिरादि करौं कह जाई ॥बारहिं०
सो तुम सों सब दुःख कहो प्रभु जानत हो तुम पीर पराई ।
मैं इनको सतसंग कियो दिनहूँ दिन आवत मोहिं बुराई ॥
ज्ञान महानिधि लूट लियौ इन रङ्क कियो यह भांति हराई ॥बारहिं०
मैं प्रभु एक सरूप सहो सब ये इन दुष्टन की कुटलाई ।
पाप सु पुण्य दुहूं निज मारग में हमसो नहिं फांसि लड़ाई ॥
मोहि थकाय दियो जगसे विरहानल देह दहै न बुझाई ॥बारहिं०॥२०॥
ये विनती सुन सेवक की निज मारग में प्रभु लेव लगाई ॥
मैं तुम दास रहो तुमरे संग लाज करो शरणागति आई ॥
मैं कर दास उदास भयो तुमरी गुणमाल सदा उर लाई ॥बारहिं०॥२१॥
देर करो मत श्री करुणानिधि जू पति राखनहार निकाई ।
गोग जुरे क्रमसो प्रभुजी यह न्याय हजूर भयो तुम आई ॥
आन रहो शरणागति हौं तुम्हरी सुनिवे तिहुं लोक बड़ाई ॥ बारहिं०२२॥
मैं प्रभु जी तुम्हरी समको इन अन्तर पाय करो दुसराई ।
न्याय न अन्त करे हमरो न मिले हमको तुम सी ठकुराई ॥
सन्तन राख करो अपने ढिग दुष्टनि देहु निकास बहाई । बारहिं०॥२३॥
दुष्टन की सत्संगति में हमको कछू जान परी न निकाई ।

सेवक साहब की दुविधा न रहे प्रभु जी करिये सु भलाई ॥
फेर नमों सु करों अरजी जसु जाहर जानि परे जगताई ॥बारहिं०॥२४॥
ये विनती प्रभु के शरणागति जे नर चित्त लगाय करेंगे।
जे जगमें अपराध करे अघ ते क्षणमात्र भरे में हरेंगे।
जे गति नीच निवास सदा अवतार सुधो स्वरलोक धरेंगे।
देवीदासकहे क्रम सों पुनि ते भवसागर पार तरेंगे ॥२५॥

शीलमहात्म्य।

जिनराज देव कीजिये मुझ दीन पर करुना। भवि वृन्दको अब दीजिये बस शीलका शरना ॥ टेक ॥ शीलकी धारा में जो स्नान करें हैं। मल कर्मको सो धोय के शिवनार वरें हैं ॥ व्रतराज सो वेताल व्याल काल डरें हैं। उपसर्ग वर्ग घोर कोट कष्ट टरें हैं॥१॥ तप दान ध्यान जाप जपन जोग अचारा। इस शील से सब धर्मके मुंह का है उजारा॥ शिवपन्थ ग्रन्थ मंथ के निर्ग्रन्थ निकारा। विन शील कौन कर सके संसार से पारा॥२॥ इस शीलसे निर्वाण नगरकी है अवादी। त्रेसठ शलाका कौन ये ही शील सवादी॥ सब पूज्य की पदवी में है परधान ये गादी। अठारा सहस्र भेद भने वेः अवादी ॥३॥ इस सील से सीता को हुआ आग से पानी। पुर द्वार खुला चलनिमें भर कूप सों पानी॥ नृप ताप टरा शील से रानी दिया पानी। गङ्गामें ग्राह सों बची इस शीलसे रानी ॥ ४ ॥ इस शील हीसे साँप सुमन माल हुआ है। दुख अंजना का शील से उद्धार हुआ है ॥ यह सिन्धुमें श्रीपालको आधार हुआ है। वप्राका परम शील हीसे यार हुआ है ॥५॥ द्रौपदी का हुआ शीलसे अम्बर का अमारा। जा धातु द्वीप कृष्ण ने सब कष्ट निवारा॥ सब चन्दना सती की व्यथा शीलने टारा।

इस शील से ही शक्ति विशल्या निकारा ॥ ६ ॥ वह कोट शिला शीलसे लक्ष्मणने उठाई । इससे ही नागको नाथा श्रीकृष्णकन्हाई ॥ इस शीलने श्रीपालजी की कोढ़ मिटाई । अरु रैनमञ्जसा को लिया शील बचाई ॥७॥ इस शीलसे रनपाल कु'अरकी कटी वेड़ी । इस शीलसे विष सेठकी नन्दनकी निवेणी ॥ शूलीसे सिंह पीठ हुआ सिंहही सेरी । इस शीलसे कर माल सुमन गलेरी ॥८॥ समन्तभद्रजी ने यही शील सम्हारा । शिवपिण्ड ते जिनचन्दका प्रतिविम्ब निकारा ॥ मुनि मानतुङ्गजीने यही शील सुधारा । तव आनके चक्रेश्वरी सब बात सम्हारा ॥९॥ अकलङ्कदेवजी ने इसी शील से भाई । ताराका हरा मान विजय बौद्धसे पाई ॥ गुरु कुन्द-कुन्दजीने इसी शीलसे जाई । गिरनार पै पाषाण की देवीको बुलाई ॥१०॥ इत्यादि इसी शील की महिमा है घनेरी । विस्तारके कहने में बड़ी होयगी देरी ॥ पल एकमें सब कष्टको यह नष्ट करेरी । इसही से मिले रिद्धि सिद्धि वृद्धि सवेरी ॥११॥ विन शील खता खाते है सब कांछके ढीले । इस शील विना तन्त्र मन्त्र जन्त्र हो कीले ॥ सब देव करें सेव इसी शील से ढीले । इस शील ही से चांहे तो निर्वाण पदी ले ॥१२॥ सम्यक्त सहित शीलको पाले है जो अन्दर । सो शील धर्म होय है कल्याण का मन्दिर ॥ इससे हुये भव पार है कुल कौल और बन्दर । इस शील की महिमा न सकै भाष पुरन्दर ॥ १३ ॥ जिसशील के कहने में थका सहस वदन है । जिस शीलसे भय पाय भगा क्रूर मदन है ॥ सो शील ही भवि वृन्दको कल्याण प्रदन है । दश पैड ही इस पैड से निर्वाण सदन है ॥१४॥

॥ इति शील महात्म्य ॥

आपदाओं का स्वागत ।

पत्थर तुम मुझे बनाओ; दृढ़ता का पाठ पढ़ाओ ।
साहस, सुकर्म्म सिखलाओ; पथ उन्नति का दिखलाओ ॥
हाँ ऐ प्यारी विपदाओ । आती हो, आओ ! आओ !—१
जी भर के मुझे सताना; हरगिज़ तुम बाज़ न आना ।
निज-हृदय कठोर बनाना; मत कहीं द्रवित हो जाना ॥
बस मुझको धीर बनाओ । आती हो, आओ ! आओ !—२
क्यों साहस अपना छोड़ूँ; तुमको लख कर मुँह मोड़ूँ ।
दिल नाहक़ अपना तोड़ूँ; निज धर्म्म-धीरता गोड़ूँ ॥
जितना बन सके सताओ । आती हो, आओ ! आओ !—३
दुष्टों की बुद्धि भ्रमाना; मेरे विरुद्ध उसकाना ।
तुम अवसर जब तक पाना, दुख देने चूक न जाना ॥
पीछे न कहीं पछताओ । आती हो, आओ ! आओ !—४
मैं जी का बड़ा कड़ा हूँ; मत कहना धृष्ट बड़ा हूँ !
स्वागत के लिए खड़ा हूँ; निज हठ पर आज अड़ा हूँ ॥
मुख घूँघट में न छिपाओ । आती हो, आओ ! आओ !—५
क्या गम जो दुःख सहूँगा; मन मारे मौन रहूँगा ।
मैं कभी अधीर न हूँगा; हा ! हन्त ! न कभी कहूँगा ॥
चाहे जितना तड़पाओ । आती हो, आओ ! आओ !—६
तुमसे कुछ अहित न होगा; सित होगा असित न होगा ।
यश-शशि क्या उदित न होगा ? फिर क्या मन मुदित न होगा ?
हाँ हाँ हौसला बढ़ाओ । आती हो, आओ ! आओ—७
जिन जिन के पास गई हो; उनकी मति गई नई हो ।
चिरजीवी हुए जयी हो; तुम उनको सुधा हुई हो ॥
आँखें न मुझे दिखलाओ । आती हो, आओ ! आओ !—८
तुम दो न दया की भिक्षा; है मुझे न इसकी इच्छा ।
थोड़े दिन को हो आई; सुख से हो सुखद रुवाई ।
हो सुमति साथ ही लाई; हो इसी लिये मन भाई ॥

बस दे दो ऐसी शिक्षा, कर लूँ मैं पास परीक्षा॥
कुछ ऐसा गुर बतलाओ। आती हो, आओ! आओ!—९
हाँ ऐसा सबक़ पढ़ाना; दिल दूना रोज़ बढ़ाना।
भ्रम में न मुझे भटकाना; सद्ज्ञान सदैव जताना॥
जीवन की जाँच कराओ। आती हो, आओ! आओ!—१०
तुम अगर न जग में होतीं; सब पड़ी जातियाँ सोतीं।
निज समय स्वर्ण सा खोतीं; जगतीं तब दुखड़ा रोतीं॥
जीवन-रक्षार्थ जगाओ। आती हो, आओ! आओ!—११
तब चरणों की बलिहारी; यह आज सभ्यता प्यारी।
जिसका है सिक्का जारी; हो इसकी सिरजनहारी॥
मुझको भी सुपथ दिखाओ। आती हो, आओ! आओ!—१२
यदि पड़ता विषम न पाला; गरमी का कठिन कसाला।
जल मुसलधार से पाला; ये भवन न बनते आला॥
आओ शिष्टता बढ़ाओ। आती हो, आओ! आओ!—१३
यदि भूख न हमें सताती; क्यों करने खेती पाती।
मेधा विकास क्या पाती, यह समझ कहाँ से आती॥
नित नई सूझ उपजाओ। आती हो, आओ! आओ!—१४
यदि राम न बन को जाते; क्या इतनी कीर्ति कमाते?
क्यों सज्जन फाँसी पाते; यदि तुम्हें न वे अपनाते॥
जगती में सुयश दिलाओ। आती हो, आओ! आओ!—१५
निर्भय हूँ या कि डरा हूँ; डूबा हूँ या कि तरा हूँ।
जीवित हूँ या कि मरा हूँ; खोटा हूँ या कि खरा हूँ॥
कस लो, सुलाखलो ताओ। आती हो, आओ! आओ!—१६
तुम हो पाहुनी हमारी; होगी न मुझे क्यों प्यारी?
प्रिय मित्र, धर्म, धृति, नारी—इनकी परखानेहारी॥
सज्जन, दुर्जन विलगाओ। आती हो, आओ! आओ!—१७
पद-पद्म-स्पर्श कराओ। आती हो, आओ! आओ!—१८

"त्रिपाठ"

विधि का प्राबल्य और दौर्बल्य ।

(आर्या)

जीवन की और धन की आशा जिन के सदा लगी रहती ।
विधि का विधान सारा, उन ही के अर्थ होता है ॥
विधि क्या कर सकता है ? उनका जिनकी निराशता आशा ।
भय-काम-वश न होकर, जग में स्वाधीन रहते जो ॥

मेरी द्रव्य-पूजा ।

कृमि-कुल-कलित नीर है जिसमें मच्छ-कच्छ-मेंडक फिरते ,
हैं मरते औ, वहीं जनमते, प्रभो मलादिक भी करते ।
दूध निकालें लोग छुड़ाकर बच्चे को पीते पीते;
है उच्छिष्ट-अनीतलब्ध, यों योग्य तुम्हारे नहिं दीखे ॥ १
दही घृतादिक भो वैसे हैं कारण उनका दूध यथा;
फूलों को भ्रमरादिक सूँघें वे भी हैं उच्छिष्ट तथा ।
दीपक तो पतंग-कालानल जलते जिनपर कीट सदा;
त्रिभुवनसूर्य ! आपको अथवा दीप-दिखाना नहीं भला ॥ २
फल-मिष्टान्न अनेक यहाँ, पर उनमें ऐसा एक नहीं ।
मल-प्रिया मक्खीने जिसको आकर प्रभुवर ! छुआ नहीं ॥
यों अपवित्र पदार्थ अरुचिकर, तू पवित्र सब गुण-घेरा;
किस विधि पूजूँ क्या हि चढ़ाऊँ, चित्त डोलता है मेरा ॥ ३
औ ' आता है ध्यान ' तुम्हारे क्षुधा- तृषा का लेप नहीं,
नाना रस-युत अन्न-पान का, अतः ' प्रयोजन रहा नहीं ।
नहिं वांछा, न विनोद-भाव, नहि राग-अंश का पता कहीं;
इससे व्यर्थ चढ़ाना होगा, औषधि सम जब रोग नहीं ॥ ४
यदि तुम कहो " रत्न-वस्त्रादिक भूषण क्यों न चढ़ाते हो,
अन्यसदृश, पावन है " ' अर्पण करते क्यों सकुचाते हो । '

तो, तुमने निःसार समझ अब खुशी खुशी उनको त्यागा;
हो वैराग्य-लीन-मति, स्वामिन! इच्छा का तोड़ा तागा ॥ ५
तब क्या तुम्हें चढ़ाऊँ वे ही, करूँ प्रार्थना 'ग्रहण करो?'
होगी यह तो प्रकट अज्ञता तुव स्वरूप की, सोच करो।
मुझे धृष्टता दीखे अपनी और अश्रद्धा बहुत बड़ी,
हेय तथा संत्यक्त वस्तु यदि तुम्हें चढ़ाऊँ घड़ी घड़ी ॥ ६
इससे 'युगल' हस्त मस्तक पर रखकर नम्रीभूत हुआ।
भक्ति-सहित मैं प्रणमूँ तुम को बार बार, गुण-लीन हुआ।
संस्तुति शक्ति-समान करूँ औ, सावधान हो नित तेरी।
काय-वचन की यह परिणत हो अहो द्रव्य-पूजा * मेरी ॥ ७
भाव—भरी इस पूजा से ही होगा आराधन तेरा,
होगा तब सामीप्य प्राप्त औ तभी मिटेगा जग फेरा।
तुझमें मुझमें भेद रहेगा नहिं स्वरूपसे तब कोई,
ज्ञानानंद-कला † प्रकटेगी थी अनादि से जो खोई ॥ ८

---

* श्रीअमितगति आचार्य ने इसी को पुरातन द्रव्य-पूजा प्राचीनों द्वारा अनुष्ठित द्रव्य-पूजा बतलाया है। आप लिखते हैं:-

'वचो विग्रहसंकोचो द्रव्यपूजा निगद्यते ।
तत्रमानससंकोचः भावपूजा पुरातनैः ॥'—उपासकाचार ।

अर्थात्-काय और वचन को अन्य व्यापारों से हटाकर परमात्मा के प्रति हाथ जोड़ने शिरोनति करने, स्तुति पढ़ने आदिद्वारा एकाग्र करने का नाम 'द्रव्य-पूजा,' और मन की नाना विकल्पजनित व्यग्रता को दूर करके उसे ध्यानादिद्वारा परमात्मामें लीन करने का नाम 'भाव-पूजा' है। ऐसा पुरातन आचार्यों ने—अंगपूर्वादि के पाठियों ने—प्रतिपादन किया है।

† ज्ञान और आनन्द की वह विभूति ।

भारत का आमद खर्च ।

ग्यारह पाई फी कस जब कि हिन्दुस्तान कमाई है ।
क्या क्या खर्च होता है इसमें सुनिये कान लगाई है ॥ टेक ॥

फैल्ट सातकी कमीज़ दो की नकटाई आठ आने को ।
सात का चश्मा सात आने को कालर टाई लगाने को ॥
कम से कम चहिये है चौदह वास्केट कोट बनाने को ।
लास्ट दरजे पतलून पाँच का गेलिस बारह आने को ॥
दो रुपया महवारा इनकी लगने लगी धुलाई है ॥ ग्यारह० ॥१॥

चौदह से कम लगे न यारो वैस्टून बाव मंगाने में ।
दो रुपये से कम नहीं लगते फैंसी बैंत उडाने में ॥
डासन का फुलबूट बीस का है मशहूर जमाने में ।
बुर्स और पालिस की शीशी मिलती पन्द्रह आने में ॥
ब्रटिश की ज़ुर्राबों की कीमत दश आना ठहराई है ॥ ग्या० ॥

तीस की सैकिंडहैन्ड साइकिल यह भी आजकल का फैशन ।
एक कदम भी चल नहिं सकते पैदल मिस्टर इन्डीयन ।
सवा रुपये का घर में सिलीपर रखना पड़ता मजबूरन ॥
गलती हो तो कीजै माफ मैं बतलाता हूं तख़मीनन ।
दो आना रोज़ाना उन से लेता बुध्घू नाई है ॥ ग्यारह० ॥ ३ ॥

कंघा साबुन तेल सेपटीपिन तुमको गिनवाऊं क्या ।
पन्द्रह आने से कम कीमत इनकी और लगाऊं क्या ॥
सिगरेट का इस क़दर खर्च है मैं तुमको समझाऊं क्या ।
थर्डक्लास का खर्च तो यह है फर्स्टक्लास बतलाऊं क्या ॥
इस फिजूल खर्ची ने नाहक हम से भीख मंगाई है । ग्यारह० ४॥

भक्त भावना ।

कुल-कुबेर के कनक कोष की, है न तनिक भी मुझको चाह ।
है न कामना औरों की सुख,-सम्पति पर हो डाह्न डाह ॥
नहीं चाहिये अश्व अनोखे, भव्य भवन बहु भोग विलास ।
हो न भले ही मेरे घर में, "विद्युत" का वह प्रखर प्रकाश ॥
देह दमकती हो दामिनि सी, है न लालसा ऐसी लेश ।
मुक्ता मणि की आभा वाले, नहीं चाहिए मुझको वेष ॥
नहीं चाहता, चुभें न मेरे, चिंता के अति तीक्ष्ण त्रिशूल ।
या कि कल्पना के पलनों में, रहूँ झूलता जग को भूल ॥
कहें न चाहें मिल जन मुझको, परम प्रतापी प्रतिभावान ।
प्रेम भरीं पुष्पों की माला, करें न मेरा गौरव मान ॥
कोरी करतल ध्वनि से मेरा, हो न ध्वनित गुणगरिमा गान ।
निर्जन वन में होवे चाहे, यह जीवन प्रदीप अवसान ॥
मन मंदिर में ज्योति तुम्हारी, प्रभा-पुञ्ज की हो द्युतिपूर्ण ।
नाथ! करो मेरा नित ही बस, तम-अज्ञान हृदय का चूर्ण ॥
सदा विलोकूँ निज नयनों से, तेरा मंजु मनोहर रूप ।
चरण कमल चापूँ पुलकित हो, रहे भावना वही अनूप ॥

मेरी भूल ।

भूल मेरी यह हुई जो मैं ने दुर्जन को सज्जन समझा ।
विष को समझा शांति सुधारस, नीम वृक्ष चन्दन समझा ॥
रिपु को मित्र, बुरे को अच्छा, मूरख को मुनिजन समझा ।
कृतघ्नीको विश्वासी और काफिर को ब्राह्मण समझा ॥
दुष्ट और निर्दई पुरुष को दयावान भविजन समझा ।
चोर को समझा साधु, छली कपटी को संत सुजन समझा ॥

ढाक पुष्प को कमल पुष्प, वन निर्जन नन्दन वन, समझा ।
भूल मेरी यह हुई जो मैंने दुर्जन को सज्जन समझा ॥ १
दुर्योधन को धर्म युधिष्ठिर, रावण को लक्ष्मन समझा ।
कंस को समझा परमहंस, दुःशासन को अर्जुन समझा ॥
जयचन्द को राणा प्रताप, औरङ्ग को सुत सखन समझा ।
गणिका को सतशील धारिणी पतीव्रता कामिन समझा ॥
कांच खंड को रत्न अमोलक, पीतल को कंचन समझा ।
भूल मेरी यह हुई जो मैंने दुर्जन को सज्जन समझा ॥ २
अज को गज, गर्दभ को घोड़ा, स्वान को वनराजन समझा ।
काग को समझा राजहंस, और नाग को हार चन्दन समझा ॥
द्वेष घृणा को प्रेम प्रीत, अरु झूठ को सत्य वचन समझा ।
ताप तप्त को, शील सुन्दर मन्द सुगन्ध पवन समझा ॥
तिमिर को समझा परम उजाला, कटु को मिष्ट भोजन समझा ।
भूल मेरी यह हुई जो मैंने, दुर्जन को सज्जन समझा ॥ ३
मरनहार को अमर समझकर, मरने को जीवन समझा ।
मोह मदिरा कर पान, भुला गुण ज्ञान, न अपनापन समझा ॥
जो समझा सो उलटा समझा, कुछ से कुछ लक्षन समझा ।
इसी समझ में जन्म गँवाना, अब जब निकट मरन समझा ॥
तब कुछ आई समझ मुझे मैं अपना मूरखपन समझा ।
भूल मेरी यह हुई जो मैंने दुर्जन को सज्जन समझा ॥ ४
गुरुदेव की हुई कृपा तब मैं सम्यक्दर्शन समझा ।
हुआ ज्ञान का हृदय उजाला, चारित का पालन समझा ॥
मोह जाल जंजाल अहितकर, विषयों को दुश्मन समझा ।
राग द्वेष का त्याग, शुद्ध वैराग का मैं वर्णन समझा ॥
अमर आतम, परमातम, 'ज्योति' लख उसे तरनतारन समझा ।
मिटी भूल भव भव की, अब मैं अपने को धन धन समझा ॥ ५

बारहभावना।
(पं० गिरिधर शर्मा कृत)

अथिर भावना।

देह गेह सजने में लगे क्या हो गिरिधर, देह गेह जोबन अनित्य सब मानिये। पीपल के पान सम कुंजर के कान सम, बादल की छांह सम इन्हें चल जानिये॥ बिजली की चमकसी पानी के बुदबुदसी, इन्द्र के धनुषसी ये सम्पति प्रमानिये। दया, दान, धर्म में लगा के भलीभांति, ठानिये परोपकार सुख मन आनिये॥ १॥

अशरण भावना।

राजा महाराजा चक्रवर्ती सेठ साहूकार, सुर नर किन्नर सकल गिन जाइये। कोई भी समर्थ नहिं किसी को बचाने को, आसरा इन्हीं से फिर किसतरा पाइये॥ तारण तरण एक गुरुके चरण सोहैं, उनकी शरण गह ज्ञान मन लाइये। गाइये गुणानुवाद गिरिधर ईश्वर के, भय को नसाइये और आनँद मनाइये॥ २॥

संसार भावना।

नाना जीव बार बार जनम जनम मरें, नये नये धरें देह जाँच कर लीजिये। जग है असार यहाँ कोई वस्तु सार नहीं, दुःख भरी गतियां हैं चारो देख लीजिये॥ गिरिधर चित्त में न दोष कहीं घुस बैठें, इससे सदा ही सावधान रह जीजिये। सब की भलाई कर रखिये चरित्र शुद्ध; पीजिये सु ज्ञानामृत आतम ध्यान कीजिये॥ ३॥

एकत्व भावना।

आये हैं अकेले और जायँगे अकेले सब, भोगेंगे अकेले सुख दुःख भी अकेले ही। माता, पिता, भाई, बन्धु, सुत,

दारा, परिवार, किसी का न कोई साथी सब हैं अकेले ही ॥ गिरिधर छोड़कर दुविधा न सोचकर, तत्त्व छान बैठके एकान्त में अकेले ही। कल्पना है नाम रूप झूठे राव रंक भूप, अद्वितीय चिदानन्द तू तो है अकेले ही ॥ ४ ॥

अन्यत्व भावना ।

घर बार धन धान्य दौलत खजाने माल, भूषण वसन बड़े बड़े ठाठ न्यारे हैं। न्यारे न्यारे अवयव शिर धड़ पाँव न्यारे, जीभ त्वचा आँख नाक कान आदि न्यारे हैं ॥ मन न्यारा चित न्यारा चित्त के विकार न्यारे, न्यारा है अहंकार सकल कर्म न्यारे हैं। गिरिधर शुद्ध बुद्ध तूतो एक चेतन है, जग में है और जो जो तासे सारे न्यारे हैं ॥ ५ ॥

अशुचि भावना ।

गिरिधर मल मल साबू खूब न्हाये धोये, कीमती लगाय तेल बार बार बाल में। केवड़ा गुलाब वेला मोतियाँ के सूंघे इत्र, खाये खूब माल ताल पड़े खोटी चाल में। पहने वसन नीके निरख निरख काँच, गर्व कर देह का न सोचा किसी काल में। देह अपवित्र महा हाड़ मांस रक्त भरा, थैला मलमूत्र का बँधा है नसजाल में ॥ ६ ॥

आश्रव भावना ।

मोह की प्रबलता से कषायों की तीव्रता से, विषयों में प्राणी मात्र देखो फँस जाते हैं। यहां फँसे वहां फँसे यहां पिटे वहां कुटे, इसे मारा उसे ठोका पाप यों कमाते हैं ॥ पड़ते परन्तु जैसे जैसे हैं कषाय मन्द, वैसे वैसे उत्तम प्रकृति रच पाते हैं। गिरिधर बुरे भले मन वच काय योग, जैसे रहें सदा वैसे कर्म बन आते हैं ॥ ७ ॥

संवर भावना।

तोड़ डाल भ्रम जाल, मोह से विरत हो जा, कर न प्रमाद कभी छोड़ दे कषाय तू। दूर हो विचार बात करने से विषयों की, माथे पड़ी सारी सह मत उकताय तू॥ मन रोक वाणी रोक रोक सब इन्द्रियों को, गिरिधर सत्य मानकर ये उपाय तू। बधेंगे न कर्म नये निरपेक्ष होके सदा, कर्तव्य पालन कर खूब ज्यों सुहाय तू॥ ८॥

निर्जरा भावना।

इससे न बात करो इसे यहां न आने दो, इस को सताओ मारो क्योंकि दोषवान है। कपटी कलंकी क्रूर पापी अपराधी नीच, चोर डाकू; गंठकटा कुकर्मी की खान है। रखके विचार ऐसे लोग जो सतावें तोभी, सहले विपत्तियों को माने ऋण-दान है। गिरिधर धर्म पाले किसी से न बांधे वैर, तपसे नसावे कर्म वही ज्ञानवान है॥ ६॥

लोक भावना।

बांकी कर कोन्हियों को जरा पांव दूरे रख, आदमी को खड़ाकर गिरिधर ध्यान धर। चतुर्दश राजू लोक ऐसा ही है नराकार, उसमें भरे हैं द्रव्य छहों सभी स्थान पर॥ एके-न्द्रिय द्वीन्द्रिय त्रिन्द्रिय चतुरिन्द्रिय त्यों, पञ्चेन्द्रिय संज्ञ्य-संज्ञी पर्याप्तापर्याप्त कर। भरे ही पड़े हैं जीव पर सब चेतन हैं स्वानुभव करें त्यों त्यों पावें मोक्ष धाम वर॥ १०॥

बोधिदुर्लभ भावना।

एक एक श्वास में अठारह अठारह बार, मर मर धरें देह जगजीव जानलो। बड़ी ही कठिनता से निकले निगोदसे तो, अगणित बार भ्रमे भव भव मानलो॥ दुर्लभ मनुष्य भव

सर्वोत्तम कुलधर्म, पाये हो गिरिधर तो सत्य तत्व छानलो । होकर प्रमाद वश काल क्षेप करो मत, सबकी भलाई करो निजको पिछानलो ॥ ११ ॥

धर्म भावना ।

बाहरी दिखावटों को रहने न देता कहीं, सारे दोष दूर कर सुख उपजाता है । काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, माया, मिथ्या, तृष्णा, मद, मान, मल सबको नसाता है ॥ तन मन वाणी को बनाता है विशुद्ध और, पतित न होने देता ज्ञान प्रकटाता है । गिरिधर धर्म प्रेम एक सत्य जगबीच, परमात्मतत्व में जो सहज मिलाता है ॥ १२ ॥

सामायिक ।

हो सत्त्वपै सखिपना, मुद हो गुणी पै । माध्यस्थ भाव मम होय विरोधियोंपै ॥ दुःखार्तपै अयि दयाधन हो दया ही । हों नाथ कोमल सदा परिणाम मेरे ॥ १ ॥

धारूं क्षमा सुमृदुता ऋजुता सदा मैं । त्यों सत्य, शौच, प्रिय संयम भी न त्यागूं ॥ छोड़ूं नहीं तप, अकिंचन, ब्रह्मचर्य, है रत्नराशि दशलक्षण धर्म मेरा ॥ २ ॥

मैं देवपूजन करूं, गुरुभक्तिसाधूं । स्वाध्याय में रच सुसंयम आदरूं मैं ॥ धारूं प्रभो तप, निरंतर दान दूं मैं । षट्कर्म ये नितकरूं जबलौं गृही हूं ॥ ३ ॥

पाऊं महासुख प्रभो, दुख वा उठाऊं । सोऊं पलंग पर, भूपर ही पड़ूं वा ॥ सोहे तथापि समता अति उच्च मेरी । सामायिक प्रवल हो मम नाथ ऐसा ॥ ४ ॥

चाहे रहूं भवनमें, वनमें रहूं, या-प्रासाद में बस रहूं अथवा कुटीमें ॥ सोहे तथापि समता अतिउच्च मेरी-सामायिक प्रवल हो मम नाथ ऐसा ॥ ५ ॥

सुस्वाद व्यंजन सहस्र प्रकारके हों। आहार हो विरस, या वह भी मिलेना ॥ सोहे तथापि समता अति उच्च मेरी—सामायिक प्रबल हो मम नाथ ऐसा ॥ ६ ॥

सिंहासन प्रचुररत्नजड़ा प्रभो हो—किंवा कठोरतर पत्थर बैठनेको ॥ सोहे तथापि समता अतिउच्च मेरी—सामायिक प्रबल हो मम नाथ ऐसा ॥ ७ ॥

चाहे चलूं मखमली पग पांवड़ों पै—या तै करूं विकट कंटकपूर्णपंथा ॥ सोहे तथापि समता अतिउच्च मेरी—सामायिक प्रबल हो मम नाथ ऐसा ॥ ८ ॥

सैलून हो, विविध मोटर गाड़ियां हो। हो बग्घियां, न न पद्‌भी कुछ साथ दें या ॥ सोहे तथापि समता अतिउच्च मेरी—सामायिक प्रबल हो मम नाथ ऐसा ॥ ६ ॥

मेरी करें भुवनके सब भूप सेवा। या मैं करूं भुवनके जन की सुसेवा ॥ सोहे तथापि समता अतिउच्च मेरी—सामायिक प्रबल हो मम नाथ ऐसा ॥ १० ॥

श्रीदेवदेव बहु इष्ट वियोग होवे। किंवा अनिष्टकर योग महान होवे, सोहे तथापि समता अतिउच्च मेरी—सामायिक प्रबल हो मम नाथ ऐसा ॥ ११ ॥

सामायिकस्तवनको जन जो पढ़ेंगे। संसार के सुख-दुखोदधिको तिरेंगे; होंगे कभी न चलमानस धर्मधारी, श्रीशप्रतापवश सिद्धि उन्हें वरेगी ॥ १२ ॥

आलोचना।

हैं दोष, हैं गुण, महेश मनुष्य हूं मैं। है पापपुण्यमय मानव देह मेरा ॥ जो न १थ दोष वृतके मुझसे हुए हों;—कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं ॥ १ ॥

मैंने प्रभो स्वपरका हित ना विचारा। अज्ञान मोह वश दुर्गुण चित्त धारा॥ पूरा किया न जगदीश्वर काम प्यारा, कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं॥ २॥

जिव्हा रही न वसमें, रसभी न छोड़ा। मोड़ा न नेक मुख दुर्दम वृत्तियोंसे॥ नाना अनर्थ कर अर्थ समर्थ, जोड़ा। कीजै क्षमा कर कृपा भागवान, याचूं॥ ३॥

हे नाथ ध्यान धरके तुझको न ध्याया। स्वाध्यायका मन लगा न मजा उड़ाया॥ पाया प्रमोद विकथा कर देव मैंने। कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं॥ ४॥

मैंने प्रमादवश दुर्गुणभी किये हैं। गार्हस्थ्य कार्य जतना विन होगये हैं॥ हां लोकके हृदयभी मुझसे दुखे हैं। कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं॥ ५॥

'आराधना मन लगाकर की न तेरी। देती रही जगतमें चलवृत्ति फेरी॥ ऐसी हुई प्रभु भयंकर भूल मेरी, कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं॥ ६॥

बांधे प्रभो सुकृतके बहुधा नियाणे। नाना प्रकार रस-हास-विलास माणे॥ जाणे न कर्म रिपु, ना तुमको पिछाणे। कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं॥ ७॥

'अध्यात्मका रस पिया छक खूब मैंने। संसार का हित किया भरपूर मैंने॥ आलोचना इसतरा करते बनी ना। कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं॥ ८॥

'षटकायजीव करुणा करते न हारा। मारा कषाय, मनमें न प्रमाद धारा॥ आलोचना इसतरा करते बनी ना। कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं॥ ९॥

संसार का हित महेश महा करे तू। है ये प्रसिद्ध अमनस्क मुनीन्द्र है तू॥ तोभी तुझे न अपना मन दे सका मैं। कीजै क्षमा कर कृपा भगवान, याचूं॥ १०॥

गंभीर ध्यान धरके भगवान का जो। आलोचना पढ़ करे निज शुद्धि देही॥ हो जातिरत्न वह कीर्ति अनन्य पावे। सद्भव्य सिद्धिवर पत्तन को बसावे॥ ११॥

श्रीवीरस्तव।

श्रीमन्, महावीर, विभो, मुनीन्द्रो, देवाधिदेवेश्वर, ज्ञानसिन्धो॥
स्वामिन्, तुम्हारे पदपद्मका हो-प्रेमी सदा ही यह चित्त मेरा॥१॥
स्वामिन् किसीका न बुरा विचारूँ। सन्मार्गपै मैं चलते न हारूँ॥
तत्वार्थ श्रद्धान सदैव धारूँ। दो शक्ति, हो उत्तम शील मेरा॥२॥
सदा भलाई सबकी करूँ मैं। सामर्थ्य पा जीव दया धरूँ मैं॥
संसार से क्लेश सभी हरूँ मैं। हो; ज्ञान,चारित्र,विशुद्ध मेरा॥३॥
स्वामिन् तुम्हारी यह शांत मुद्रा-किसके लगाती हिय में न मुद्रा॥
कहे उसे क्या यह बुद्धि क्षुद्रा। स्वीकारिये नाथ प्रणाम मेरा॥४॥
प्रभो तुम्हीं हो निष्कटोपकारी। प्रभो तुम्हीं हो भवदुःखहारी॥
प्रभो तुम्हीं हो शुचि पंथचारी-हो नाथ साष्टांग प्रणाम मेरा॥५॥
जो भव्य पूजा करते तुम्हारी-होती उन्हीं की गति उच्च प्यारी॥
प्रसिद्धि है 'दादुर फूल' वारी, सम्पूर्ण है निश्चय नाथ मेरा॥६॥
मेरी प्रभो दर्शन शुद्धि होवे। सद्भावनापूर्ण समृद्धि होवे॥
पांचों व्रतोंकी शुभ सिद्धि होवे। सद्बुद्धि पे हो अधिकार मेरा॥७
आया नहीं गोतम विज्ञ जौलों-खिरी न वाणी तव दिव्य तौलों॥
पीयूष से पात्र भरा सतौलों-मैं पात्र होऊं अभिलाष मेरा॥८॥
प्रभो तुम्हें ही दिनरात ध्याऊं। सदा तुम्हारे गुणगान गाऊं॥
प्रभावना खूब करूं कराऊं। कल्याण होवे सब भांति मेरा॥९॥
श्रीवीरके मारग पे चलें जो। श्रीवीर पूजा मनसे करें जो॥
सद्भव्य वीरस्तव को पढ़ें जो। वे लब्धियां पा सुखपूर्ण होवें॥१०

श्रीशान्तिनाथस्तव।

हे शान्तिनाथ, जगपूज्य प्रभो, दयालो, देवेन्द्रविश्वसुत, शुद्धसुवर्णदेह
तेरे मनोरम पदद्वयमें रचो ये-सद्भावभक्तिपरिपूरित चित्तमेरा॥१॥

कैसी मनोज्ञ, रमणीय, सुशान्त, तेरी—
ध्यानस्थ मूर्ति भगवन् यह सोचती है,
संसारतापहरणार्थ मनो स्वयं ही—
श्रीः शान्तिकी सकल आकर ही खड़ी हो, ॥ २ ॥

तेरे प्रभो वचनकी विमल प्रभा से
अज्ञान अन्धतम है किसका न जाता?
विद्युच्छटा अनुपम स्थिर शक्तिवाली
जो छा रहे, तम कहां फिर है दिखाता? ॥ ३ ॥

हे नाथ दर्शन किये तव शान्ति आवे,
आवे न पास दुखदारिद, क्लेश जावे,
छावे महा जगतमें यश, रत्न पावे,
धावे सुमार्ग पर, ठोकर भी न खावे ॥ ४ ॥

आकाशचुम्बन करे भगवान तेरा—
प्रासाद सुन्दर, ध्वजा उड़ती वहां, सोः—
'जो आत्मसिद्धि करके जग जीतते हैं
उनका प्रभाव यह है' बतला रही है ॥ ५ ॥

आनन्द-मंगल सदा उस ठौर होवे,
आरोग्य-सौख्य-धन-धान्य समृद्धि होवे,
विद्वेषभाव सबका सब दूर होवे,
होवे जहां भजन-पूजन नित्य तेरा ॥ ६ ॥

हे शान्तिनाथ भगवान तुझे नमूं मैं,
देवाधिदेव जगदीश तुझे नमूं मैं,
त्रैलोक्य-शान्तिकर देव तुझे नमूं मैं,
स्वामिन् नमूं, जिन नमूं, भगवन् नमूं मैं ॥ ७ ॥

श्री मुनि शान्तिसागर जी [दक्षिण]।

श्री भगवान पार्श्वनाथ।

तू बुद्ध, तू जिन, मुनीन्द्र, विभू स्वयंभू,
तू राम, कृष्ण, जगदीश, दयालु, दाता,
अल्ला, रहीम, रहमान, खुदा, करीम,
तू गाड, तू अहुरमज्द, महेश, मौला ॥ ८ ॥
है ज्ञानदर्पण महोज्वल नाथ तेरा,
आश्चर्यकारक महा जिसमें पड़े हैं—
त्रैलोक्य के सकल भाव त्रिकाल के भी;
होवे भविष्य उसमें अति उच्च मेरा ॥ ९ ॥
जो शुद्ध बुद्ध कर निर्मलवृत्तियों को—
श्रीशान्तिनाथ प्रभु के स्तव को पढ़ेंगे,
होंगे सभी विमलकीर्ति महासुखी वे,
संसार को अतुल शान्तिभरा करेंगे ॥ १० ॥

श्रीपार्श्वनाथस्तव ।

हे पार्श्वनाथ, परमेश, महोपदेशी,
हे अश्वसेनसुत, श्यामलशालिदेह,
वामाङ्गजात, [illegible], लोकवन्धो,
तेरे सदाचरणही मम आसरा है ॥ १ ॥
संसार का तरण तारण तू कहाया,
तेरा किये स्मरण हर्ष न कौन पाया,
पाया सुभक्ति तव जो वह मोक्ष पाया,
तेरे सदाचरण ही मम आसरा है ॥ २ ॥
तूने सहे कमठके उपसर्ग भारी,
तूने अनन्त जग के उपकार कीन्हें,
आदर्श, भव्यजनका भगवान है तू,
तेरे सदाचरण ही मम आसरा है ॥ ३ ॥

तूने कुमारपनसे. सब योग साधा,
भाई सदा सकल जीवनकी भलाई,
तत्त्वार्थ का मरम मानवको बताया,
तेरे सदाचरण ही मम आसरा है ॥ ४ ॥
निर्व्याजबन्धु जगनायक तू जगों का,
तेरी करे न किसका हित दिव्यवाणी,
तेरा प्रभाव किसके हिय पै पड़े ना,
तेरे सदाचरण ही मम आसरा है ॥ ५ ॥

बारूद आग लगने पर ज्यों उड़े, त्यों,
नानाभवोद्भव महागिरि पाप के भी
देवेन्द्र दर्शन किये तव नष्ट होते;
तेरे सदाचरण ही मम आसरा है ॥ ३ ॥

'जो साम्यभाव धर जीव दया प्रचारे—
हैं क्रूर जन्तुगण भी उनके हितैषी,
ये बात नाथ अहिछत्रं बता रहा है,
तेरे सदाचरण ही मम आसरा है; ॥ ७ ॥
तू वीतराग भगवान, मुनीन्द्र है तू,
इष्टोपदेश-कर तू, जगपूज्य है तू,
मेरा 'नमोऽस्तु' भगवन् तुझको हमेशा,
तेरे सदाचरण ही मम आसरा है ॥ ८ ॥

हो देश में सब जगै सुखशांति पूरी,
हिंसा प्रवृत्ति जग से उठजाय सारी,
पावे प्रमोद सब राष्ट्र कुटुम्ब मेरा,
कल्याण तू कर सदा भगवन् नमस्ते ॥ ६ ॥
जो भव्य शुद्ध बनके स्तवको पढ़ेगा,

कल्याणभाव जगका हिय में धरेगा,
सामान्य हो सकलका हित वो करेगा,
संसार के कुपथ सागर को तिरेगा ॥ १० ॥

प्रार्थना ।

नाथ आपको हम नमते हैं, हाथ जोड़ पैरों पड़ते हैं।
आप जानते हैं सब स्वामी, घट घट के हैं अन्तर्यामी ॥ १ ॥
हम मानव हैं सद्गुण पावें, सारे दुर्गुण दूर हटावें।
कायरता के पास न जावें, वीरपने को लाड़ लड़ावें ॥ २ ॥
निज कर्तव्य कदापि न तज दें, सदा सहारा दीनों को दें।
लोक लोक में जीवन भर दें, मुरदारों को चेतन कर दें ॥ ३ ॥
विद्या ठोर ठोर फैलावें, गहरे ज्ञान भेद प्रगटावें।
भारतगौरव जग पर छावें, सारे जग में जयी कहावें ॥ ४ ॥
आलस में नहिं पड़े रहें हम; नहीं खुशामद कहीं करें हम।
जिस शाखा पर आश्रय पावें, काट उसे नीचे न गिरावें ॥ ५ ॥
सजधज कर हम अकड़ न जावें, आपसमें हम यश न नसावें।
संशय में पड़ मति न गुमावें, आसमान में उड़ें सुहावें ॥ ६ ॥
नहीं लालचों में फँस जावें, नहीं किसी से भय हम खावें।
सुदृढ़ रहें निज धर्म निभावें, रह स्वाधीन सदा सुख पावें ॥७॥
स्वामी हम में वह बल आवे, देख जिसे जग अचरज पावे।
सिंह चाटने पग लग जावे, विजयदुंदुभी देव बजावें ॥ ८ ॥

अहिंसा ।

मचा संग्राम है जग में, अहिंसा और हिंसा का।
बजेगा जीत का डंका, अहिंसा का;—न, हिंसा का ॥१॥
हजारों वार हों तो हों, चलेंगे सीना फैलाये।
उड़ावेंगे जगत भरमें, विमल झंडा अहिंसा का ॥ २ ॥

डरें क्या अस्त्रशस्त्रों से, छुवे क्या अस्त्रशस्त्रों को ।
हमारा राष्ट्रही जब है, स्वयंसेवक अहिंसा का ॥ ३ ॥
बिना जीते महारणके, न जीते-जी टलेंगे हम ।
तजेंगे त्यों न तिलभर को, कभी रस्ता अहिंसा का ॥ ४ ॥
भलें पालेसियां चल चल, हमें कोई भुलावे दें ।
भुलावों में न आवेंगे, दिखा विक्रम अहिंसा का ॥ ५ ॥
न हम नापाक खूनों से, रगेंगे पाक हाथों को ।
हमारा खून होतो हो, विजय होगा अहिंसा का ॥ ६ ॥
कभी धीरज न छोड़ेंगे, जहां में शांति भर देंगे ।
सिखावेंगे सबक सब को, अहिंसा का अहिंसा का ॥ ७ ॥
हमारे दुश्मने जानी भी, होंगे दोस्त कल आके ।
कहेंगे सर झुकाके यों, बतादो गुर अहिंसाका ॥ ८ ॥
तमन्ना है, न दुनियां में, निशां भी हो गुलामी का ।
सभी आजाद हों कोमें, बजे डंका अहिंसा का ॥ ९ ॥
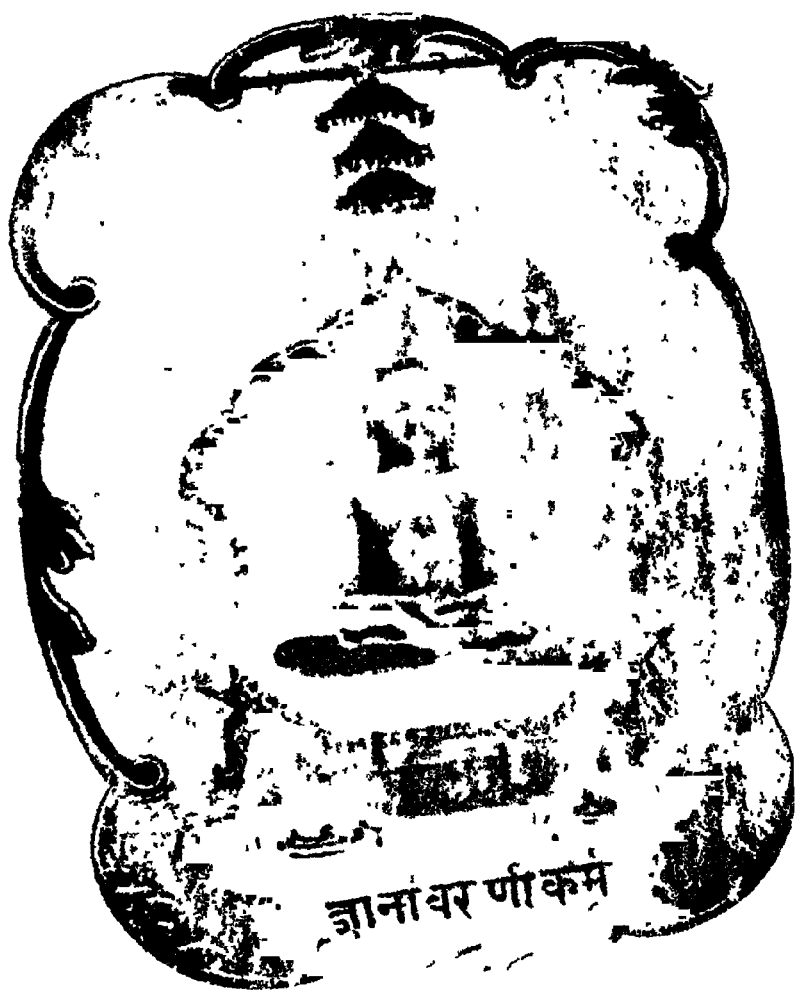
ज्ञानावरणी कर्म

दर्शनावरणी कर्म

ॐ

श्रीजिनाय नमः

बड़ा जैन-ग्रन्थ-संग्रह

णमोकार मन्त्र ।

गाथा ।

णमो अरहंताणं । णमो सिद्धाणं । णमो आयरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं । णमो लोए सव्वसाहूणं ।

इस णमोकार मंत्र में पांच पद, पैंतीस अक्षर और अंठावन मात्रा हैं।

णमोकार मंत्र का माहात्म्य ।

एसो पंच णमोयारो, सव्वपावप्पणासणो ।

मंगलाणम् च सव्वेसिं, पढ़मं होय मंगलम् ॥

अर्थ—यह पंच नमस्कार मंत्र सब पापों का नाश करने वाला है और सब मंगलों में पहला मंगल है ।

पञ्च परमेष्ठियों के नाम ।

अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु ।

ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा । ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।

नोट—अ सि आ उ सा नाम पञ्च परमेष्ठी का है ।

ॐ में पंच परमेष्ठी के नाम गर्भित हैं ।

ह्रीं में २४ तीर्थंकरों के नाम गर्भित हैं ।

वर्तमान

क्रम	नाम तीर्थंकर	चिह्न	जन्म-स्थान	जन्म-तिथि
१	ऋषभदेव	बैल का	अयोध्या	चैत्र वदी ९
२	अजितनाथ	हाथी का	,,	माघ सुदी १०
३	संभवनाथ	घोड़े का	श्रावस्ती	कार्तिक सुदी १५
४	अभिनन्दननाथ	वन्दर का	अयोध्या	माघ सुदी १२
५	सुमतिनाथ	चकवे का	,,	चैत्र सुदी ११
६	पद्मप्रभु	कमल का	कौशाम्बी	कार्तिक सुदी १३
७	सुपार्श्वनाथ	सांथिये का	काशी	ज्येष्ठ सुदी १२
८	चन्द्रप्रभ	अर्द्धचन्द्रका	चन्द्रपुरी	पौष वदी ११
९	पुष्पदन्त	नाकू का	काकन्दी	मार्गशिर सुदी १
१०	शीतलनाथ	कल्पवृक्ष का	भद्रिकापुरी	माघ वदी १२
११	श्रेयांसनाथ	गैंड़े का	सिंहपुरी	फागुन वदी ११
१२	वासुपूज्य	भैंसे का	चंपापुरी	फागुन वदी १४

श्रीवख्तावर-कृत विधान में क्रम नं० ८ और ९ की निर्वाण-तिथि

चौबीसी।

आयु	निर्वाणतिथि	पिता का नाम	मा का नाम	काय ऊँची
८४लाखपूर्व	माघ वदी १४	नाभि राजा	मरुदेवी	५०० धनुष
७२लाखपूर्व	चैत्र सुदी ५	जितशत्रु	विजयादेवी	४५० ,,
६० ,,	चैत्र सुदी ६	जितारी	सेना	४०० ,,
५० ,,	वैसाख सुदी ६	संवर	सिद्धार्था	३५० ,,
४० ,,	चैत्र सुदी ११	मेघप्रभ	सुमंगला	३०० ,,
३० ,,	फागुन वदी ४	धारण	सुसीमा	२५० ,,
२० ,,	फागुन वदी ७	सुप्रतिष्ठ	पृथ्वी	२०० ,,
१० ,,	फागुन सुदी ७	महासेन	लक्ष्मणा	१५० ,,
२ ,,	कार्तिक सुदी२	सुग्रीव	रामा	१०० ,,
१ ,,	आसोज सुदी८	दृढ़रथ	सुनन्दा	९० ,,
८४ ,, वर्ष	श्रावण सुदी१५	विष्णु	विष्णुश्री	८० ,,
७२ ,, ,,	भादवांसुदी१४	वासुपूज्य	विजया	७० ,,

क्रमशः माघ वदी ७ और आश्विन सुदी ८ है।

वर्तमान

क्रम	नाम तीर्थंकर	चिह्न	जन्म-स्थान	जन्म-तिथि
१३	विमलनाथ	सुअर का	कपिला	माघ सुदी ४
१४	अनंतनाथ	सेही का	अयोध्या	ज्येष्ठ वदी १२
१५	धर्मनाथ	वज्रदण्डका	रत्नपुरी	माघ सुदी १३
१६	शान्तिनाथ	हिरण का	हस्तनागपुर	ज्येष्ठ वदी १४
१७	कुन्थुनाथ	बकरे का	,,	वैसाख सुदी १
१८	अरनाथ	मच्छी का	,,	मार्गशिर सुदी १४
१९	मल्लिनाथ	कलश का	मिथलापुरी	मार्गशिर सुदी ११
२०	मुनिसुव्रतनाथ	कछवे का	राजग्रही	वैसाख वदी १०
२१	नमिनाथ	कमल का	मिथिलापुरी	आषाढ़ वदी १०
२२	नेमिनाथ	शंख का	सौरीपुर	श्रावण सुदी ६
२३	पार्श्वनाथ	सर्प का	काशीपुरी,	पौष वदी ११
२४	महावीर	शेर का	कुन्दनपुर	चैत्र सुदी १३

श्रीरामचन्द्र-कृत विधान में क्रम नं० १३ की जन्म-तिथि माघ और आषाढ़ सुदी ७ है।

चौबीसी।

आयु	निर्वाणतिथि	पिता का नाम	मा का नाम	काय ऊँची
६०लाखवर्ष	आषाढ़ वदी ६	कृतवर्मा	सुरम्या	६० धनुष
३० ,,	चैत वदी ४	सिंहसेन	सर्वयशा	५० ,,
१० ,,	ज्येष्ठ सुदी ४	भानु	सुव्रता	४५ ,,
१ ,,	ज्येष्ठ वदी १४	विश्वसेन	ऐरा	४० ,,
९५हजारवर्ष	वैसाख सुदी १	सूर्य्य	श्रीदेवी	३५ ,,
८४ ,,	चैत्र सुदी ११	सुदर्शन	मित्रा	३० ,,
५५ ,,	फागुनसुदी ५	कुम्भ	रक्षिता	२५ ,,
३० ,,	फागुनवदी१२	सुमित्र	पद्मावती	२० ,,
१० ,,	वैसाखवदी १४	विजय	वप्रा	१५ ,,
१ ,,	आषाढ़सुदी ८	समुद्रविजय	शिवादेवी	१० ,,
१०० वर्ष	श्रावण सुदी ७	अश्वसेन	वामा	९ हाथ
७२ ,,	कातिकवदी३०	सिद्धार्थ	प्रियकारिणी (त्रिशला)	७ ,,

सुदी १४ और नं० १८ और २२ की निर्वाण-तिथि क्रमशः चैत्र वदी ३०

चौबीस तीर्थंकरों के शरीर का वर्ण।

पद्मप्रभ और वासुपूज्य का लाल वर्ण, सुपार्श्वनाथ और पार्श्वनाथ का हरा वर्ण, चन्द्रप्रभ और पुष्पदन्त का श्वेत वर्ण, मुनि-सुव्रत और नेमिनाथ का श्याम वर्ण, बाकी के १६ तीर्थंकरों का कंचन वर्ण समान पीत वर्ण हुआ है।

चौबीस तीर्थंकरों के निर्वाण-क्षेत्र।

ऋषभदेव का कैलाश, वासुपूज्य चंपापुरी का वन, नेमिनाथ का गिरनार, वर्द्धमान का पावापुरी, बाकी के २० तीर्थङ्करों का सम्मेदशिखर है।

पाँच तीर्थंकर बालब्रह्मचारी।

१ वासुपूज्य, २ मल्लिनाथ, ३ नेमिनाथ, ४ पार्श्वनाथ और ५ वर्द्धमान।

नोट—ये बालब्रह्मचारी हुए हैं। इन्होंने विवाह नहीं किया और राज्य भी नहीं किया, कुमार अवस्था में ही दीक्षा ले ली।

तीन तीर्थंकर तीन पदवीधारी।

१ शान्तिनाथ, २ कुंथुनाथ और ३ अरनाथ

नोट—यह ३ तीर्थंकर चक्रवर्ती और कामदेव भी हुए।

महाविदेहक्षेत्र के २० विद्यमान तीर्थंकर।

१ सीमन्धर, २ युगमंधर, ३ बाहु, ४ सुबाहु, ५ सुजात, ६ स्वयंप्रभ, ७ वृषभानन, ८ अनन्तवीर्य, ९ सूरप्रभ,

१० विशालकीर्ति, ११ वज्रधर, १२ चन्द्रानन, १३ चन्द्रबाहु, १४ भुजंगम, १५ ईश्वर, १६ नेमप्रभ (नमि), १७ वीरसेन, १८ महाभद्र, १९ देवयश, २० अजितवीर्य।

चौबीस अतीत तीर्थङ्कर।

१ श्रीनिर्वाण, २ सागर, ३ महासाधु, ४ विमलप्रभ, ५ श्रीधर, ६ सुदत्त, ७ अमलप्रभ, ८ उद्धर, ९ अंगिर, १० सन्मति, ११ सिंधुनाथ, १२ कुसुमांजलि, १३ शिवगण, १४ उत्साह, १५ ज्ञानेश्वर, १६ परमेश्वर, १७ विमलेश्वर, १८ यशोधर, १९ कृष्णमति, २० ज्ञानमति, २१ शुद्धमति, २२ श्रीभद्र, २३ अतिक्रान्त, २४ शान्ति।

चौबीस अनागत तीर्थंकर।

१ श्री महापद्म, २ सुरदेव, ३ सुपार्श्व, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वात्मभूत, ६ श्रीदेव, ७ कुलपुत्रदेव, ८ उदंकदेव, ९ प्रोष्ठिल-देव, १० जयकीर्ति, ११ मुनिसुव्रत, १२ अरह (अमम), १३ निष्पाप, १४ निःकषाय, १५ विपुल, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्त, १८ समाधिगुप्त, १९ स्वयंभू, २० अनिवृत्त, २१ जयनाथ, २२ श्रीविमल, २३ देवपाल, २४ अनन्तवीर्य।

बारह चक्रवर्ती।

१ भरतचक्री, २ सगरचक्री, ३ मघवाचक्री, ४ सनत्कु-मारचक्री, ५ शान्तिनाथचक्री (तीर्थंकर), ६ कुन्थुनाथचक्री, (ती-र्थङ्कर) ७ अरनाथचक्री (तीर्थंकर), ८ सभूमचक्री, ९ पद्मचक्री वा महापद्म, १० हरिषेणचक्री, ११ जयचक्री, १२ ब्रह्मदत्तचक्री।

नव नारायण ।

१ त्रिपृष्ठ, २ द्विपृष्ठ, ३ स्वयंभू, ४ पुरुषोत्तम, ५ पुरुष-सिंह, ६ पुण्डरीक, ७ दत्त, ८ लक्ष्मण, ९ कृष्ण ।

नव प्रतिनारायण ।

१ अश्वग्रीव, २ तारक, ३ मेरक, ४ मधु (मधुकैटभ), ५ निशुम्भ, ६ बली, ७ प्रह्लाद, ८ रावण, ९ जरासन्ध ।

नव बलभद्र ।

१ अचल, २ विजय, ३ भद्र, ४ सुप्रभ, ५ सुदर्शन, ६ आनंद, ७ नंदन (नंद), ८ पद्म (रामचन्द्र), ९ राम (बलभद्र) ।

नोट—२४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रति नारायण, ९ बलभद्र, ये मिलकर ६३ शलाका के पुरुष कहलाते हैं ।

नव नारद ।

१ भीम, २ महाभीम, ३ रुद्र, ४ महारुद्र, ५ काल, ६ महाकाल, ७ दुर्मुख, ८ नरकमुख, ९ अधोमुख ।

ग्यारह रुद्र ।

१ भीमबली, २ जितशत्रु, ३ रुद्र, ४ विश्वानल, ५ सुप्रतिष्ठ, ६ अचल, ७ पुण्डरीक, ८ अजितधर, ९ जितनाभि, १० पीठ, ११ सात्यकी ।

चौबीस कामदेव।

१ बाहुबली, २ अमिततेज, ३ श्रीधर, ४ दशभद्र, ५ प्रसेनजित, ६ चन्द्रवर्ण, ७ अग्निमुक्ति, ८ सनत्कुमार (चक्रवर्ती), ६ वत्सराज, १० कनकप्रभ, ११ सेघवर्ण, १२ शान्तिनाथ, (तीर्थङ्कर) १३ कुन्थुनाथ (तीर्थंकर), १४ अरनाथ (तीर्थंकर), १५ विजयराज, १६ श्रीचन्द्र, १७ राजानल, १८ हनुमान, १९ बलराजा २० वसुदेव, २१ प्रद्युम्न, २२ नागकुमार, २३ श्रीपाल, २४ जंबूस्वामी।

चौदह कुलकर।

१ प्रतिश्रुति, २ सन्मति, ३ क्षेमंकर, ४ क्षेमंधर, ५ सीमंकर, ६ सीमंधर, ७ विमलवाहन, ८ चक्षुष्मान, ६ यशस्वी १० अभिचन्द्र, ११ चंद्राभ, १२ मरुदेव, १३ प्रसेनजित, १४ नाभि राजा।

नोट—इस प्रकार ५८ तो ये और ६३ शलाका पुरुष इनमें चौबीस तीर्थङ्करों के ४८ माता-पिता मिलाकर कुल १६९ पुण्य पुरुष कहलाते हैं। अर्थात् जितने पुण्यवान् पुरुष हुए हैं उनमें इनकी गणना मुख्य है।

बारह प्रसिद्ध पुरुषों के नाम।

१ नाभि, २ श्रेयांस, ३ बाहुबली, ४ भरत, ५ रामचन्द्र, ६ हनुमान, ७ सीता, ८ रावण, ९ कृष्ण, १० महादेव, ११ भीम, १२ पार्श्वनाथ।

नोट—कुलकरों में नाभिराजा, दान देने में श्रेयांस राजा, तप करने में बाहुबली जो एक साल तक कायोत्सर्ग खड़े रहे। भाव की शुद्धता में भरत, चक्रवर्ती को दीक्षा लेते ही केवल ज्ञान हुआ। बलदेवों में रामचन्द्र, कामदेवों में हनुमान, सतियों में सीता, मानियों में रावण, नारायणों में कृष्ण, रुद्रों में महादेव, बलवानों में भीम, तीर्थंकरों में पार्श्वनाथ, ये पुरुष जगत् में बहुत प्रसिद्ध हुए हैं ।

दूसरे सिद्धक्षेत्रों के नाम ।

१ मांगीतुंगी, २ मुक्तागिरि (मेढ़गिरि), ३ सिद्धवरकूट, ४ पावागिरि (चेलना नदी के पास), ५ शेत्रुञ्जय, ६ बड़वानी, ७ सोनागिरि, ८ नैनागिरि (नैनानन्द), ९ दौनागिरि, १० तारंगा, ११ कुन्थुगिरि, १२ गजपंथ, १३ राजग्रही, १४ गुणावा, १५ पटना, १६ कोटिशिला ।

चौदह गुणस्थान ।

१ मिथ्यात्व, २ सासादन, ३ मिश्र, ४ अविरत सम्यक्त्व, ५ देशव्रत, ६ प्रमत्तविरत, ७ अप्रमत्तविरत, ८ अपूर्व करण, ९ अनिवृत्तिकरण, १० सूक्ष्म सांपराय, ११ उपशान्त कषाय वा उपशान्त मोह, १२ क्षीण कषाय वा क्षीण मोह, १३ सयोगकेवली, १४ अयोगकेवली ।

श्रावक के २१ उत्तर गुण ।

१ लज्जावन्त, २ दयावन्त, ३ प्रसन्नता, ४ प्रतीतिवन्त, ५ परदोषाच्छादन, ६ परोपकारी, ७ सौम्य दृष्टि, ८ गुणग्राही,

९ श्रेष्ठ पक्षी १० मिष्टवादी, ११ दीर्घविचारी, १२ दानवन्त, १३ शीलवन्त, १४ कृतज्ञ, १५ तत्वज्ञ, १६ धर्मज्ञ, १७ मिथ्यात्व-रहित, १८ सन्तोषवन्त, १९ स्याद्वादभाषी, २० अभक्ष-त्यागी, २१ षट्कर्म-प्रवीण ।

श्रावक की ५३ क्रियायें ।

८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, १ समताभाव, ११ प्रतिमा, ४ दान, ३ रत्नत्रय, १ जल-छाणन-क्रिया, १ रात्रि-भोजन-त्याग और दिन में अन्नादिक भोजन सोधकर खाना अर्थात् छानबीन कर देख-भाल कर खाना ।

श्रावक के ८ मूलगुण—५ उदम्बर । ३ मकार ।

१२ व्रत—५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत ।

५ अणुव्रत—१ अहिंसाअणुव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ परस्त्री त्याग अणुव्रत, ४ अचौर्य (चोरी-त्याग अणुव्रत), ५ परिग्रह-प्रमाण अणुव्रत ।

३ गुण व्रत—१ दिग व्रत, २ देशव्रत, ३ अनर्थ दंड-त्याग

४ शिक्षाव्रत—१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ अतिथि-संविभाग, ४ भोगोपभोग परिमाण ।

१२ तप— आचार्य के ३६ गुणों में लिखे हैं । इनके भी वही नाम हैं । ज्यादे इतना है कि मुनियों के महान् व्रत होते हैं । श्रावकों के अणुव्रत अर्थात् कम परीषहवाले ।

११ प्रतिमा—१ दर्शनप्रतिमा, २ व्रत, ३ सामायिक, ४ प्रोषधोपवास, ५ सचित्तत्याग, ६ रात्रिभुक्ति-त्याग, ७ ब्रह्म-

चर्य, ८ आरम्भ-त्याग, ९ परिग्रह-त्याग, १० अनुमति-त्याग, ११ उद्दिष्ट-त्याग।

४ दान—आहारदान, औषधदान, शास्त्रदान और अभय-दान। यह ४ दान श्रावक को करने योग्य हैं।

३ रत्नत्रय—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र।

यह तीन रत्न श्रावक के धारने योग्य हैं। इनका खुलासा अर्थ जैन-बाल-गुटके के दूसरे भाग में सम्यक्त के वर्णन में लिखा है। इनका नाम रत्न इस कारण से है कि जैसे सुवर्णादिक सर्व धन में रत्न उत्तम अर्थात् वेश कीमत होता है। इसी प्रकार कुल नियम, व्रत, तप में यह तीन सर्व में उत्तम हैं। जैसे कि विना अंक विन्दियाँ किसी काम को नहीं इसी प्रकार बगैर इन तीनों के सारे व्रत नियम कुछ भी फलदायक नहीं हैं। सर्व नियम, व्रत मानिन्द विन्दी (शून्य) के हैं। यह तीनों मानिन्द शुरू के अङ्क के हैं। इसलिये इन तीनों को रत्न माना है।

दातार के २१ गुण—९ नवधाभक्ति, ७ गुण और ५ आभूषण।

यह २१ गुण दातार के हैं। अर्थात् पात्र को दान देनेवाले दातामें यह २१ गुण होने चाहिए।

दातार की नवधाभक्ति—पात्र को देख बुलाना, उच्चासन पर बैठाना, चरण धोना, चरणोदक मस्तक पर चढ़ाना, पूजा करना, मन शुद्ध रखना, वचन विनय-रूप बोलना, शरीर शुद्ध रखना और शुद्ध आहार देना।

यह नव प्रकार की भक्ति दातार है। अर्थात् दातार कहिए दान देनेवाले को यह नव प्रकार की नवधाभक्ति करनी चाहिए।

दातार के सातगुण—१ श्रद्धावान् होना, २ शक्तिवान होना, ३ अलोभी होना, ४ दयावान् होना, ५ भक्तिवान् होना, ६ क्षमावान् होना और ७ विवेक वान् होना।

दातार में यह सात गुण होते हैं। अर्थात् जिसमें यह सात गुण हों वह सच्चा दातार है।

दातार के पांच भूषण—१ आनन्दपूर्वक देना, २ आदर-पूर्वक देना, ३ प्रिय वचन कहकर देना, ४ निर्मल भाव रखना, ५ जन्म सफल मानना।

दाता के पाँच दूषण—१ विलम्ब से देना, २ विमुख होकर देना, ३ दुर्वचन कहके देना, ४ निरादर करके देना, ५ देकर पछताना।

यह दाता के पाँच दूषण हैं। अर्थात् दातार में यह पांच बातें नहीं होनी चाहिए।

ग्यारह प्रतिमाओं का सामान्य स्वरूप।

दोहा।

प्रणम पंच परमेष्ठि पद, जिन आगम अनुसार।
श्रावक-प्रतिमा एकादश कहुँ भविजन हितकार॥ १॥

सवैया-श्रद्धा कर व्रत पाले, सामायिक दोष टाले, पौसो माँड सचित को त्यागे, लों घटायकें। रात्रिभुक्ति परिहरै,

ब्रह्मचर्य नित धरै, आरम्भ को त्याग करैं, मन वच काय कैं॥ परिग्रह काज टारैं, अध अनुमत छारैं, स्वनिमित कृत टारैं, असत वनायकैं। सब एकादश येह प्रतिमा जु शर्म्म गेह, धारैं देश-वृत्ति उर हरष वढायकैं॥

दर्शन प्रतिमा स्वरूप—अष्ट मूल गुण संग्रह करैं, विशुन अभक्ष्य सबै परिहरै, पुन अष्टाङ्ग शुद्ध सम्यक्त, धरहिं प्रतिज्ञा दरशन रक्त॥ १॥

व्रत प्रतिमा स्वरूप—अणुव्रतपन अतिचार विहीन, धारह जो पुन गुणव्रत तीन, शिक्षाव्रत संजुत सोय, व्रत प्रतिमा धर श्रावक होय॥ २॥

सामायिक प्रतिमा स्वरूप—गीतकाछुन्द-सब जियन मैं सम-भाव धर शुभ, भावना संयम महीं। दुर्ध्यान आरत रौद्र तजकर त्रिविध काल प्रमाणहीं॥ परमेष्ठि पन जिन वचन, जिन वृष विंव जिन जिनग्रह तनी। वन्दन त्रिकाल करह सुजानहु भव्य सामायिक धनी॥ ३॥

प्रोषध प्रतिमा स्वरूप—पद्धरी छंद—वर मध्यम जघन्य त्रिविध धरेय, प्रोषध विधि युत निज वल प्रमेह। प्रति मास चार पर्वी मझार, जानहु सो प्रोषध नियम धार॥ ४॥

सचित्त त्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई—जो परिहरै हरीं सब चीज। पत्र प्रवाल कंद फल वीज॥ अरु अप्रासुक जल भी सोय। सचित्त त्याग प्रतिमा धर होय॥ ५॥

रात्रिभुक्ति-त्याग प्रतिमा स्वरूप—अडिल्ल छंद-मन वच तन कृत कारित अनुमोदै सही, नवविध मैथुन दिवस मांहि जो वर्जही। अरु चतुर्विध आहार निशा माहीं तजै, रात्रिभुक्ति परित्याग प्रतिमा सो सजै॥ ६॥

ब्रह्मचर्य प्रतिमा स्वरूप—चौपाई—पूर्व उक्त मैथुन नव भेद, सर्व प्रकार तजै निरखेय। नारि कथादिक भी परिहरै, ब्रह्मचर्य प्रतिमा सो धरै ॥ ७ ॥

आरम्भ त्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई--जो कछु अल्प बहुत अघ काज। ग्रह संबंधी सो सब त्याज ॥ निरारंभ ह्वै वृष रत रहै, सो जिय अष्टमी प्रतिमा है ॥ ८ ॥

परिग्रह त्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई—वस्त्रमात्र रख परिग्रह अन्य। त्याग करै जो व्रतसंपन्न ॥ तामे पुनः, मूर्च्छा परहरै, नवमी प्रतिमा सो भवि धरै ॥ ९ ॥

अनुमत त्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई-जो प्रमाण अघमय उपदेश। देय नहीं पर को लवलेश ॥ अरु तसुं अनुमोदन भी तजै। सोही दशमी प्रतिमा सजै ॥ १० ॥

उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा स्वरूप---चौपाई-ग्यारह थान भेद हैं दोय। इक छुल्लक इक ऐलक सोय। खंड वस्त्र धर प्रथम सुजान। युतकोपीनहि दुतिय प्रछान ॥ ११ ॥

ए गृह त्याग मुनिन ढिंग रहै। वा मठ, मंदिर में निवस हैं ॥ उत्तर उदंड उचित आहार। करहिं शुद्ध अंत्रायन वार ॥

दोहा—इम सब प्रतिमा एक दश, दौल देशव्रत थान।
ग्रह अनुक्रम मूल सह, पालें भवि सुखदान ॥

श्रावक के सत्रह नियम।

१ भोजन, २ अचित्त वस्तु, ३ गृह, ४ संग्राम, ५ दिशा-गमन, ६ औषधिविलेपन, ७ तांबूल, ८ पुष्पसुगंध, ९ नाच, १० गीतश्रवण, ११ स्नान, १२ ब्रह्मचर्य, १३ आभूषण, १४ वस्त्र, १५ शय्या, १६ औषधिखाणी, १७ घोड़ा-बैलादिक की सवारी।

नोट—इनमें से हर रोज जिस जिसकी जरूरत हो उसका प्रमाण रखे कि आज यह करूँगा । बाकी का प्रतिदिन त्याग किया करे ।

सप्त व्यसन का त्याग ।

१ जुआ, २ मांस, ३ मदिरा, ४ गणिका (रंडी), ५ शिकार, ६ चोरी, ७ पर-स्त्री ।

बाईस अभक्ष्य का त्याग ।

पांच उदुम्बर—

१ उम्बदर (गूलर), २ कटूम्बर, ३ बड़फल, ४ पीपलफल, ५ पाकरफल (पिलखनफल) ।

तीन मकार—

१ मांस, २ मधु, ३ मदिरा ।

नोट—इन तीनों को तीन मकार इस कारण से कहते हैं कि इन तीनों नामों के शुरू में 'म' है ।

बाकी चौदह यह हैं—

१ ओला, २ विदल, ३ रात्रि-भोजन, ४ बहुबीजा, ५ बैंगन, ६ अचार, ७ बिना जाने फल (अनजान), ८ कन्दमूल, ९ माटी, १० विष, ११ तुच्छफल, १२ तुषार (बरफ), १३ चलितरस, १४ माखन ।

नोट—५ उदुम्बर, ३ मकार, १४ दूसरे बाईस अभक्ष्य कहाते हैं ।

श्रावक के नित्य षट् कर्म।

षट् नाम छै का है। १ देवपूजा, २ गुरुसेवा, ३स्वाध्याय, ४ संयम, ५ तप, ६ दान। यह छै कर्म श्रावक के नित्य करने के हैं।

सामायिक भाषा पाठ।

[पं० महाचंद्रजी-कृत]

अथ प्रथम प्रतिक्रमण कर्म।

काल अनंत भ्रम्यो जग में सहिया दुख भारी।
जन्ममरण नित किये पाप को ह्वै अधिकारी॥
कोड़ि भवांतर माहिं मिलन दुर्लभ सामायक।
धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुखदायक॥ १॥

हे सर्वज्ञ जिनेश किये जे पाप जु मैं अब।
ते सब मनवचकाय योग की गुप्ति बिना लभ॥
आप समीप हजूर माँहि मैं खड़ो खड़ो सब।
दोष कहूं सो सुनो करो नठ दुःख देहिं जब॥ २॥

क्रोध मान मद लोभ मोह माया-वशि प्रानी।
दुःख-सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी॥
बिना प्रयोजन एकेंद्रिय बि ति चउपंचेंद्रिय।
आप प्रसादहिं मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय॥ ३॥

आपस में इक ठोर थापि करि जे दुख दीने।
पेलि दिये पग तलैं दावि करि प्राण हरीने॥
आप जगत के जीव जिते तिन सबके नायक।
अरज करौं मैं सुनो दोष मेटो दुखदायक॥ ४॥
अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय।
तिनके जे अपराध भये ते क्षिमा क्षिमा किय।
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमों दयानिधि।
यह पडिकोणो कियो आदि षट्कर्म मांहि विधि॥ ५॥

अथ द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म।

जो प्रमाद-वशि होय विराधे जीव घनेरे।
तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे॥
सो सब झूठो होय जगतपति के परसादै॥
जा प्रसाद तैं मिलै सर्वसुख दुःख न लाधै॥ ६॥
मैं पापी निर्लज्ज दया करि हीन महाशठ।
किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ॥
निंदूं हूँ मैं वारवार निज जिय को गरहूं।
सब विधि धर्म उपाय पाय फिर पापहि करहूँ॥ ७॥
दुर्लभ है नर-जन्म तथा श्रावक-कुल भारी।
सतसंगति संयोग धर्म जिन श्रद्धा धारी॥
जिनवचनामृतधार समावर्तै जिनवानी।
तौहू जीव संहारे धिक् धिक् धिक् हम जानी॥ ८॥
इंद्रिय लम्पट होय खोय निज ज्ञान जमा सब।
अज्ञानी जिम करै तिसी विधि हिंसक ह्वै अब॥

गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले।
ते सब दोष किये निन्दूं अब मन वच तोले॥९॥
आलोचन-विधि थकी दोष लागे जु घनेरे।
ते सब दोष विनाश होउ तुम तैं जिन मेरे॥
बार बार इस भाँति मोह मद दोष कुटिलता।
ईर्षादिकतैं भये निंदिये जे भयभीता॥१०॥

अथ तृतीय सामायिक कर्म।

सब जीवन में मेरे समता भाव जग्यो है।
सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है॥
आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छाँड़ि करिहूं सामायक।
संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक॥११॥
पृथिवि जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति।
पंचहि थावरमांहि तथा त्रस जीव बसैं जित॥
बे इंद्रिय तिय चउ पंचेंद्रिय माँहि जीव सब।
तिन तैं क्षमा कराऊं मुझपर क्षमा करो अब॥१२॥
इस अवसर में मेरे सब सम कंचन अरु तृण।
महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहि समगण॥
जामन मरण समान जानि हम समता कीनी।
सामायिक का काल जितै यह भाव नवीनी॥१३॥
मेरो है इक आतम तामें ममत जु कीनौ।
और सबै मम भिन्न जानि समतारस भीनौ॥
मात पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सबै यह।
मोतैं न्यारे जानि जथारथ रूप कर्यो गह॥१४॥

मैं अनादि जग-जाल माँहि फँसि रूप न जाण्यो।
एकेंद्रिय दे आदि जंतु को प्राण हराण्यो॥
ते अब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी।
भव भव को अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी॥१५॥

अथ चतुर्थ स्तवन कर्म।

नमूं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीत कर्म कों।
संभव भव दुःखहरणकरण अभिनन्द शर्म कों॥
सुमति सुमतिदातार तार भवसिन्धु पारकर।
पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर॥१६॥
श्रीसुपार्श्व कृतपास नाश भव जास शुद्ध कर।
श्रीचंद्रप्रभ चंद्रकांति सम देह कांति धर॥
पुष्पदंत दमि दोषकोश भवि पोष रोषहर।
शीतल शीतल करन हरन भव ताप दोषहर॥१७॥
श्रेयरूप जिन श्रेय धेय नित सेय भव्यजन।
वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिक भव भय हन॥
विमल विमल मति देन अन्त गत हैं अनन्त जिन।
धर्म शर्म शिवकरन शांति जिन शांति विधायिन॥१८॥
कुन्थु कुन्थु मुखजीवपाल अरनाथ जाल हर।
मल्लि मल्लसम मोहमल्ल मारण प्रचार धर॥
मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुर संघहि नमि जिन।
नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ माँहि ज्ञान धन॥ १९॥
पार्श्वनाथ जिन पार्श्वउपलसम मोक्षरमापति।
वर्द्धमान जिन नमूं वमूं भवदुःख कर्मकृत॥
या विधि मैं जिन संघरूप चउवीस संख्यधर।
स्तऊं नमूं हूं वार वार वंदूं शिव सुखकर॥ २०॥

अथ पंचम वंदना कर्म।

वंदूं मैं जिनवीर धीर महावीर सु सन्मति।
बर्द्धमान अतिवीर वंदिहौं मनवचतनकृत॥
त्रिशलातनुज महेश धीश विद्यापति वंदूं।
वन्दूं नितप्रति कनकरूपतनु पाप निकंदूं॥ २१॥
सिद्धारथ नृपनंद द्वन्द दुख-दोष मिटावन।
दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन॥
कुंडलपुर करि जन्म जगतजित आनँदकारन।
वर्ष बहत्तरि आयु पाय सब ही दुख टारन॥ २२॥
सप्त हस्त तनु तुंग भंग कृत जन्म मरण भय।
बालब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय॥
दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन।
आप बसे शिवमाहिं ताहि वंदौं मनवचतन॥ २३॥
जाके बंदन थकी दोप दुख दूरहि जावै।
जाके बंदन थकी मुक्ति तिय सन्मुख आवै॥
जाके बंदन थकी वंद्य होवैं सुरगन के।
ऐसे वीर जिनेश बंदिहूं क्रमयुग तिनके॥ २४॥
सामायिक षट् कर्म माहिं वंदन यह पंचम।
वंदे वीर जिनेंद्र इंद्रशतवंद्य वंद्य मम॥
जन्म-मरण भय हरो करो अघ शांति शांतिमय।
मैं अघकोश सुपोष दोष को दोष विनाशय॥ २५॥

अथ षष्टम कायोत्सर्ग कर्म।

कायोत्सर्ग विधान करूं अंतिम सुखदाई।
कायत्यजन मय होय काय सबको दुखदाई॥

पूरब दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं ।
जिन-गृह वंदन करूं हरूं भव पाप-तिमिर मैं ॥ २६ ॥
शिरोनती मैं करूं नमूं मस्तक कर धरि कैं ।
आवर्त्तादिक क्रिया करूं मन वच मद हरि कैं ॥
तीन लोक जिन भवन माहिं जिन हैं जु अकृत्रिम ।
कृत्रिम हैं द्वयअर्द्धद्वीपमाहीं वंदौं जिम ॥ २७ ॥
आठकोड़िपरि छप्पन लाख जु सहस सत्याणु ।
च्यारि शतकपरि असी एक जिनमंदिर जाणूं ॥
व्यंतर ज्योतिषमाहिं संख्यरहिते जिनमंदिर ।
जिन-गृह बंदन करूं हरहु मम पाप संघकर ॥ २८ ॥
सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक ।
सामायिक सम नाहिं और कोउ मैत्रीदायक ॥
श्रावक अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुणथानक ।
यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥२६॥
जे भवि आतम काज करण उद्यम के धारी ।
ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी ॥
राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब ।
बुध महाचंद्र विलाय जाय तातैं कीयो अब ॥३०॥

इति सामायिक भाषा पाठ समाप्त ।

श्रीअमितगति आचार्य विरचित
(सामायिक पाठ संस्कृत) ।

सत्त्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव ॥१॥

शरीरतः कर्त्तुमनन्तशक्तिं, विभिन्नमात्मानमपास्तदोषम् ।
जिनेन्द्र कोषादिव खङ्गयष्टिं, तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ॥२॥
दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे, योगे वियोगे भवने वने वा ।
निराकृताशेषममत्वबुद्धेः, समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ॥३॥
मुनीश लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निशाताविव बिम्बताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ४॥
एकेन्द्रियाद्या यदि देव देहिनः, प्रमादतः संचारता इतस्ततः ।
क्षता विभिन्ना मलिता निपीड़िता, तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा॥५
विमुक्तमार्गप्रतिकूलवर्त्तिना, मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया ।
चारित्रशुद्धेर्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥६॥
विनिन्दनालोचनगर्हणैरहं, मनोवचःकायकषायनिर्मितम् ।
निहन्मि पापं भवदुःखकारणं भिषग्विषं मन्त्रगुणैरिवाखिलम्॥७॥
अतिक्रमं यं विमतेर्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं सुचरित्रकर्म्मणः ।
व्यधादनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥८
क्षतिं मनःशुद्धिविधेरतिक्रमं, व्यतिक्रमं शीलव्रतेर्विलंघनम् ।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्त्तनं, वदन्त्यनाचारमिहातिशक्तिताम् ॥९॥
यदर्थमात्रापदवाक्यहीनं, मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् ।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवलबोधलब्धिः ॥१०॥
बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने, त्वां वंद्यमानस्य ममास्तु देवि॥११॥
यः स्मर्य्यते सर्व्वमुनीन्द्रवृन्दैः, यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः ।
यो गीयते वेद पुराणशास्त्रैः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१२॥
यो दर्शनज्ञानसुखस्वभावः, समस्तसंसारविकारबाह्यः ।
समाधिगम्यः परमात्मसंज्ञः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१३॥

विषूदते यो भवदुःखजालम्, निरीक्षते यो जगदन्तरालम् ।
योऽन्तर्गतो योगिनिरीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१४॥
विमुक्तिमार्गप्रतिपादको यो, यो जन्ममृत्युव्यसनाद्व्यतीतः ।
त्रिलोकलोकी विकलोऽकलङ्कः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१५॥
क्रोडीकृताशेषशरीरिवर्गाः, रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः ।
निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१६॥
यो व्यापको विश्वजनीनवृत्तेः, सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबन्धः ।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१७॥
न स्पृश्यते कर्मकलङ्कदोषैः, यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः ।
निरञ्जनं नित्यमनेकमेकं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥१८॥
विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुवनावभासी ।
स्वात्मस्थितं बोधमयप्रकाशं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥१९॥
विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् ।
शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥२०॥
येन क्षता मन्मथमानमूर्च्छा, विषादनिद्राभयशोकचिन्ता ।
क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपञ्च, स्तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥२१॥
न संस्तरोऽश्मा न तृणम् न मेदिनी, विधानतो नो फलको विनिर्मितम् ।
यतो निरस्ताक्षकषायविद्विषः, सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥२२
न संस्तरो भद्रसमाधिसाधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनम् ।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं, विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम्
न सन्ति बाह्या मम केचनार्थाः, भवामि तेषां न कदाचनाहम् ।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्त्यै
आत्मानमात्मन्यविलोकमानस्त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः ।
एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र, स्थितोऽपि साधुर्लभते समाधिम् ॥२५॥

एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा, विनिर्मलः साधिगमस्वभावः।
बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ताः, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः॥२६॥
यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः।
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः, कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये॥२७॥
संयोगतो दुःखमनेकभेदं यतोऽश्नुते जन्म वने शरीरी।
ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो, यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम्॥२८॥
सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं, संसारकान्तारनिपातहेतुम्।
विविक्तमात्मानमवेक्ष्यमाणो, निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे॥२९॥
स्वयं कृतम् कर्म यदात्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा॥३०॥
निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोपि कस्यापि ददाति किंचन॥
विचारयन्नेवमनन्यमानसः, परो ददातीति विमुच्य शेमुषीम्॥३१॥
यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः, सर्वविविक्तो भृशमनवद्यः।
शश्वदधीते मनसि लभन्ते, मुक्तिनिकेतं विभववरं ते॥३२॥
इति द्वात्रिंशतावृत्तैः, परमात्मानमीक्षते।
योऽनन्यगतचेतस्को, यात्यसौ पदमव्ययम्॥३३॥

दर्शन-पाठ।

अनादिनिधन महामन्त्र।

गाथा।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥ १॥

श्री मन्दिरजी की वेदी गृह में प्रवेश करते ही "जय जय जय. निःसहि, निःसहि निःसहि" इस प्रकार उच्चारण करके णमोकार मन्त्र का ९ बार पाठ करे। तत्पश्चात्—

चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं। सिद्ध मंगलं। साहू मंगलं। केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ॥१॥ चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंत लोगुत्तमा। सिद्ध लोगुत्तमा। साहू लोगुत्तमा। केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ॥ २ ॥ चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंत सरणं पव्वज्जामि। सिद्ध सरणं पव्वज्जामि। साहू सरणं पव्वज्जामि। केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॥ ॐ ह्रौं ह्रौं स्वाहा ॥

यहां पर चौबीस तीर्थंकरों के नाम लेना चाहिए। उन्हें पृष्ठ बार में देखिए।

काल सम्बन्धिचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमोनमः।
अद्य मे सफले जन्म नेत्रे च सफले मम।
त्वामद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षयसम्पदः ॥ १ ॥
अद्य संसार गम्भीर पारावारः सुदुस्तरः।
सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥
अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते।
स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥३॥
अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम्।
संसारार्णवतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥४॥
अद्य कर्माष्टकज्वालं विधूतं संकषायकम्।
दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥५॥

अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे शुभाश्चैकादशस्थिताः।
नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥
अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः।
सुखसङ्गं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७॥
अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम्।
सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥
अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञानदिवाकरः।
उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥
अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः।
भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥
चिन्दानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने।
परमात्मप्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥ ११ ॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्य भावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १२ ॥
न हि त्राता न हि त्राता न हि त्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ १३ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥ १४ ॥
जिनधर्मविनिर्मुक्तम् मा भवन् चक्रवर्त्यपि।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासितम् ॥ १५ ॥

उक्त पाठ बोलकर साष्टांग नमस्कार करना चाहिए। नमस्कार के पश्चात् पूजन के लिये चांवल चढ़ाना हो वो नीचे लिखा श्लोक तथा मंत्र पढ़कर चढ़ावे।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन्सुभक्त्या।
दीर्घाक्षताङ्गैर्धवलाक्षतौघैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥१

ॐ ह्रीं अक्षयपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षतान् निर्वपामि।

यदि पुष्पों से पूजन करना हो तो नीचे लिखा श्लोक और मंत्र पढ़कर चढ़ावे.

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान् वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान्।
कुन्दारविन्दप्रमुखैः प्रसूनैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥२॥
ॐ ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय देवशास्त्रगुरुभ्यः पुष्पं फलं निर्वपामि ॥

यदि किसीको लौंग, बादाम, इलायची वा कोई प्रासुक हरा फल चढ़ाना हो, तो नीचे लिखा श्लोक और मंत्र पढ़कर चढ़ावे,

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसाऽप्यगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान्
फलैरलं मोक्षफलाभिसारैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥३
ॐ ह्रीं मोक्षफलप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्यः फलं निर्वपामि ॥

यदि किसीको अर्घ चढ़ाना हो तो नीचे लिखा श्लोक व मंत्र बोलकर चढ़ाना चाहिए.

सद्वारिगन्धाक्षतपुष्पजातैर् नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोग्यान् जिनेन्द्रसिद्धान्त यतीन् यजेऽहम् ॥४
ॐ ह्रीं अनर्घ्यपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घं समर्पयामि ॥

उपर्युक्त चार प्रकार के द्रव्यों में से जो द्रव्य हो, उसी द्रव्य का श्लोक व मंत्र पढ़कर वह द्रव्य चढ़ाना चाहिए। तत्पश्चात् नीचे लिखी स्तुति पढ़ना चाहिए।

दौलतराम कृत-स्तुति।

दोहा।

सकल-ज्ञेय-ज्ञायक तदपि, निजानंद रसलीन।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरि रज रहस विहीन॥

पद्धरि छन्द।

जय वीतराग विज्ञानपूर। जय मोह तिमिर को हरन सूर॥
जय ज्ञान अनंतानंतधार। दृगसुख वीरज मंडित अपार॥१॥
जय परमशांति मुद्रासमेत। भविजनको निज अनुभूतिहेत॥
भवि भागनवश जोगेवशाय। तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय॥२॥
तुम गुणचिंतत निजपर विवेक। प्रगटै विघटैं आपद अनेक॥
तुम जगभूषण दूषणवियुक्त। सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त॥३॥
अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप। परमात्म परमपावन अनूप॥
शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन। स्वाभाविकपरिणतिमय अछीन॥४॥
अष्टादशदोषविमुक्त धीर। सुचतुष्टयमय राजत गंभीर॥
मुनि गणधरादि सेवत महंत। नव केवललब्धिरमा धरंत॥५॥
तुम शासन सेय अमेय जीव। शिव गये जाहिं जैहैं सदीव॥
भवसागर में दुख क्षारवारि। तारन को और न आप टारि॥६॥
यह लखि निज दुखगदहरण काज। तुमही निमित्तकारण इलाज॥
जानें, तातैं मैं शरण आय। उचरों निज दुख जो चिर लहाय॥७॥
मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप। अपनाये विधिफल पुण्य पाप।
निजको परको करता पिछान। परमें अनिष्टता इष्ट ठान॥८॥
आकुलित भयो अज्ञानधारि। ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि॥
तनपरिणति में आपो चितार। कबहूं न अनुभवो स्वपदसार॥९॥

तुमको विन जाने जो कलेश। पाये सो तुम जानत जिनेश॥
पशुनारकनर सुरगतिमँझार। भव धर धर मरयो अनंतवार१०॥
अब काललब्धि बलतैं दयाल। तुव दर्शन पाय भयो खुशाल॥
मन शांतभयो मिटसकल द्वंद। चाख्योस्वातमरस दुखनिकंद११॥
तातैं अब ऐसी करहु नाथ। बिछुरै न कभी तुव चरण साथ॥
तुन गुणगणको नहिं छेव देव। जगतारन को तुअविरदएव १२॥
आतम के अहित विषय कषाय। इनमें मेरी परिणति न जाय।
मैं रहूं आपमैं आप लीन। सो करो होहुँ ज्यों निजाधीन॥१३॥
मेरे न चाह कुछ और ईश। रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश॥
मुझ कारज के कारन सुआप। शिव करहु हरहु ममभोहताप१४॥
शशि शांतकरन तपहरन हेत। स्वयमेव तथा तुव कुशल देत॥
पीवत पियूष ज्यों रोगजाय। त्यों तुम अनुभव तैं भवनसाय१५॥
त्रिभुवन तिहुंकाल मँझार कोय। नहितुमबिन निजसुखदायहोय
मोउर यह निश्चय भयोआज।दुख जलधिउतारन तुमजिहाज१६॥

दोहा।

तुम गुण गणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार।
दौल स्वल्पमति किमि कहै, नमूं त्रियोग संहार॥

इति दौलतराम कृत स्तुति।

श्रीदर्शन पच्चीसी।

तुम निरखत मुझको मिली मेरी संपति आज।
कहा चक्रवति सम्पदा कहा स्वर्ग साम्राज ॥ १ ॥
तुम बंदत जिनदेवजी नित नव मंगल होय।
विघ्न कोटि ततछण टरें लहहिं सुयश सब लोय ॥ २ ॥

तुम जाने बिन नाथजी एक स्वांस के मांहि ॥
जन्म-मरण ठारह किये साता पाई नाहिं ॥ ३ ॥
आन देव पूजत लहे दुःख नरक के बीच।
भूख प्यास पशु गत सही करो निरादर नीच ॥ ४ ॥
नाम उचारत सुख लहे दर्शन से अघ जाय।
पूजत पावे देव पद ऐसे हैं जिनराय ॥ ५ ॥
वंदत हूं जिनराज मैं धर उर समता भाव।
तन धन जन जग जाल से धर विरागता भाव ॥ ६ ॥
सुनो अरज हे नाथजी त्रिभुवन के आधार।
दुष्ट कर्म का नाश कर वेगि करो उद्धार ॥ ७ ॥
याचत हूं मैं आपसे मेरे जिय के मांहि।
राग द्वेष की कल्पना क्यों हू उपजे नांहि ॥ ८ ॥
अति अद्भुत प्रभुता लखी वीतरागता मांहि।
विमुख होंहि ते दुख लहैं सन्मुख सुखी लखाहिं ॥ ९ ॥
कलमल कोटिक न रहें निरखत ही जिन देव।
ज्यों रवि ऊगत जगत में हरै तिमर स्वयमेव ॥ १० ॥
परमाणू पुद्गल तणी परमातम संयोग।
भई पूज्य सब लोक में हरे जन्म का रोग ॥ ११ ॥
कोटि जन्म में कर्म जो बांधे हते अनंत।
ते तुम छवि अविलोकितें छिन में हो हैं अंत ॥ १२ ॥
आन नृपति किरपा करे तब कछु दे धन धान।
तुम प्रभु अपने भक्त को कर लो आप समान ॥ १३ ॥
यंत्र मंत्र मणि औषधी विषहर राखत प्राण।
त्यों जिन छवि सब भ्रम हरे करै सर्व प्रधान ॥ १४ ॥

त्रिभुवन पति हो ताहि तैं छत्र विराजे तीन।
अमरा नाग नरेश पद रहे चरण आधीन ॥ १५ ॥
सब निरखत भव आपने तुव भामंडल बीच।
भ्रम मेटे समता गहे नाहिं लहे गति नीच ॥ १६ ॥
दोई ओर ढोरत अमर चौसठ चमर सफेद।
निरखत ही भव को हरे भव अनेक को खेद ॥ १७ ॥
तरु अशोक तुव हरत है भवि जीवन का शोक।
आकुलता कुल मेटि के करै निराकुल लोक ॥ १८ ॥
अंतर बाहिर परिग्रह त्यागी सकल समाज।
सिंहासन पर रहत हैं अंतरीक्ष जिनराज ॥ १९ ॥
जीत भई रिपु मोह तैं यश सूचत है तास।
देव दुंदुभि के सदा बाजे बजैं अकास ॥ २० ॥
बिन अक्षर इच्छा रहित रुचिर दिव्य ध्वनि होय।
सुर नर पशु समझें सबै संशय रहे न कोय ॥ २१ ॥
बरसत सुर तरु के कुसुम गुंजत अलि चहुं ओर।
फैलत सुयश सुवासना हरषत भवि सब ठौर ॥ २२ ॥
समुंद बाघ अरु रोग अहि अर्गल बंधु सग्राम।
विघ्न विषम सबही टरैं सुमरत ही जिन नाम ॥ २३ ॥
श्रीपाल चंडाल पुनि अंजन भील कुमार।
हाथी हरि अहि सब तरे आज हमारी बार ॥ २४ ॥
बुध जन यह विनती करै हाथ जोड़ शिर नाय।
जब लों शिव नहिं रहै तुव भक्ति हृदय अधिकाय ॥२५॥

शान्तिनाथाष्टक-स्तोत्र ।

नाना विचित्रंभव दुःखं रासी, नाना विचित्रं मोहान् पांशी । पापामि दोपानिहरंति देवा, इह जन्म शरणे श्री शान्तिनाथं ॥ १ ॥ संसार मध्ये मिथ्यात्व चिंता, मिथ्यात्व मध्ये कर्मानि वद्धा । ते वन्ध छेदन्ति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ २ ॥ कामस्य क्रोधस्य माया त्रिलोभं, चतुः कषाय इह जन्म वन्धम् । ते बन्ध छेदन्ति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ ३ ॥ जातस्य मरणं अवृतस्य वचनं वसंति जीवा बहु दुःख जन्म । ते वंध छेदन्ति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ ४ ॥ चारित्र हीने नर जन्म मध्ये; सम्यक्त रत्नं प्रतिपाल यंति । ते जीव सीदन्ति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ ५ ॥ कृतु वाक्यहीने कठिनस्य चिन्ता, परजीव हिंसा मनसोच वंधा । ते वंध छेदंति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं॥६॥ परद्रव्य चोरी परदार सेवा, हिंसादि कक्षा अनुवन्ध वेधं । ते वध छेदंति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथं ॥ ७ पुत्रानि मित्रानि कलत्र बंधं, इह वध मध्ये बहु जीव बंधं । ते वंध छेदंति देवाधि देवा, इह जन्म शरणे श्रीशान्तिनाथम् ॥८

जपति पढ़ति नित्यं शान्तिनाथा विशुद्ध'
स्तवन मधु गिरायां, पापतापाप हारं
शिव सुख निधि पोतं, सर्व सत्वानुकंपं ।
कृत मुनि गुणभद्रं, सर्व कार्या सुनित्यं ॥

इति शान्तिनाथ स्तोत्र

महावीराष्टक स्तोत्र ।

कविवर भागचन्दजी कृत ।

शिखरनी छन्द ।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः ।
समं भान्ति ध्रौव्यं व्यय जनिलसन्तोऽन्तरहिताः
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिवयो
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥
अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पंदरहितम्
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि
स्फुटं मूर्त्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥२॥
नमन्नाकेन्द्राली मुकुट मणिभाजाल जटिल
लसत्पादाम्भोज द्वयमिह यदीयं तनुभृतां
भवज्वालाशान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥३॥
यदर्च्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः
लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा ?
महावीर स्वामी नयनपथ गामी भवतु मे (नः) ॥४॥
कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो
विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिर
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥५॥
यदीया वाग्गङ्गा विविधनयकल्लोलविमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति

इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥६॥
अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः
स्फुरन्नित्यानन्द प्रशम पद राज्याय स जिनः
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥७॥
महामोहातङ्कप्रशमनपरा कस्मिकभिषग्
निरापेक्षो बन्धुर्विदित महिमा मङ्गलकरः
शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥८॥
महावीराष्टकं स्तोत्रं । भक्त्या भागेन्दुना कृतम् ।
यः पठेच्छृणु याच्चापि स । याति परमां गतिम् ॥९॥
इति महावीराष्टक स्तोत्रं समाप्तम्

प्रातःकाल की स्तुति ।

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर भविजन की अब पूरो आस ।
ज्ञानभानु का उदय करो मम मिथ्यातम का हो अब नाश ॥१॥
जीवों की हम करुणा पालें झूठ वचन नहिं कहें कदा ॥
परधन कबहुं न हरहूं स्वामी ब्रह्मचर्यव्रत रहे सदा ॥२॥
तृष्णा लोभ बढ़े न हमारा तोष सुधा निधि पिया करें ।
श्रीजिन धर्म हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करें ॥३॥
दूर भगावें बुरी रीतियां सुखद रीतिका करें प्रचार ॥
मेल मिलाप बढ़ावें हम सब धर्मोन्नतिका करें प्रचार ॥४॥
सुखदुःख में हम समता धारें रहें अचल जिमि सदा अटल ॥
न्याय मार्ग को लेश न त्यागें वृद्धि करें निज आतमबल ॥५॥

अष्टकर्म जो दुःख देत हैं तिनके क्षय का करें उपाय ॥
नाम आपका जपैं निरंतर विघ्न रोग सब ही टर जाय ॥६॥
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा ॥
विद्या की हो उन्नति हम में धर्म ज्ञान हू बढ़े सदा ॥ ७ ॥
हाथ जोड़कर शीस नवावें तुमको भविजन खड़े खड़े ॥
यह सब पूरो आस हमारी चरण शरण में आन पड़े ॥ ८ ॥

इति प्रातःकाल स्तुति समाप्त

समाधि मरण ।

कवि द्यानतराय-कृत ।

चाल योगीरासा ।

गौतम स्वामी वन्दों नामी मरण समाधि भला है ।
मैं कब पाऊँ निशदिन ध्याऊँ गाऊँ वचन कला है ॥
देव धरम गुरु प्रीति महा दृढ़ सात व्यसन नहिं जाने ।
त्यागि बाईस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठाने ॥१॥
चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न विराधे ।
वनिज करे पर-द्रव्य हरे नहिं छहों करम इमि साधे ॥
पूजा शास्त्र गुरुन की सेवा संयम तप चहुं दानी ।
पर उपकारी अल्प अहारी सामयिक विधि ज्ञानी ॥२॥
जाप जपे तिहुँ योग धरे दृढ़ तनकी ममता टारे ।
अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारे ॥
आग लगै अरु नाव डुबे जब धर्म विघन ही आवे ।
चार प्रकार अहार त्यागि के मंत्र सु मन में ध्यावे ॥३॥
रोग असाध्य जहाँ बहु देखे कारण और निहारे ।
बात बड़ी है जो बनि आवे भार भवन को डारे ॥

जो न बने तो घर में रह करि सबसों होय निराला ।
मात पिता सुत त्रिय को सोंपे निज परिग्रह अहिकाला ॥४॥
कछु चैत्यालय कछु श्रावक जन कछु दुखिया धन देई ॥
क्षमा क्षमा सब ही सों कहि के मन की शल्य हनेई ॥
शत्रुन सों मिलि निज कर जोरे मैं बहु करी बुराई ।
तुम से प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो भाई ॥५॥
धन धरती जो मुख सो मांगे सो सब दे संतोषे ।
छहों कायके प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषे ॥
ऊँच नीच घर बैठ जगह इक कछु भोजन कछु पेले ।
दूधा धारी क्रम क्रम तजि के छाछ अहार पहेले ॥६॥
छाछ त्यागिके पानी राखे पानी तजि संथारा ।
भूमि मांहि थिर आसन मांडे साधर्मी ढिग प्यारा ॥
जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवानी पढ़िये ।
यों कहि मौन लियो संन्यासी पंच परम पद गहिये ॥७॥
चौ आराधन मन में ध्यावे बारह भावन भावे ।
दशलक्षण मन धर्म विचारै रत्नत्रय मन ल्यावे ॥
पैंतिस सोलह षट् पन चौ दुई इक वरन विचारै ।
कांया तेरी दुख की ढेरी ज्ञानमयी तू सारै ॥८॥
अजर अमर निज गुण सों पूरे परमानन्द सुभावे ।
आनँद कन्द चिदानँद साहब तीन जगतपति ध्यावे ॥
क्षुधा तृषादिक होइ परीषह सहै भाव सम राखै ।
अतीचार पांचो सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखै ॥९॥
हाड मांस सब सूखि जाय जब धरम लीन तन त्यागे ।
अद्भुत पुण्य उपाय स्वर्ग में सेज उठे ज्यों जागे ॥
तहँ तें आवे शिवपद पावे विलसे सुक्ख अनन्तो ।
'द्यानत' यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥१०॥

भूधरदासजी-कृत बारह भावना ।

दोहा ।

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार ।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार ॥ १ ॥
दलबल देई देवता, मात पिता परिवार ।
मरती बिरियां जीव को, कोई न राखन हार ॥२॥
दाम विना निरधन दुखी, तृष्णा वश धनवान ।
कहूं न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ॥३॥
आप अकेला अवतरै, मरै अकेला होय ।
यों कबहूं या जीव को, साथी सगा न कोय ॥४॥
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपनो कोय ।
घर संपति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय ॥५॥
दिपै चाम चादर मढ़ी, हाड़ पींजरा देह ।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिनगेह ॥६॥

सोरठा ।

मोह नींद के जोर, जगवासी घूमैं सदा ।
कर्म चोर चहुँ ओर, सरवस लूटैं सुधि नहीं ॥७॥
सतगुरु देय जगाय, मोह नींद जब उपशमै ।
तब कुछ बनै उपाय, कर्मचोर आवत रुकैं ॥८॥

दोहा ।

ज्ञान-दीप तप तेल भर, घर शोधै भ्रम छोर ।
या विधि बिन निकसैं नहीं, पैठे पूरब चोर ॥ ९ ॥
पंच महाव्रत संचरन, समिति पंच परकार ।
प्रबल पंच इंद्रियविजय, धार निर्जरा सार ॥१०॥

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादितैं, भरमत हैं विन ज्ञान ॥११॥
जाचे सुरतरु देय सुख, चिंतत चिंता रैन।
विन जाँचे विन चिंतये, धर्म सकल सुख दैन ॥१०॥
धन कन कंचन राजसुख, सबहि सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक, जथारथ ज्ञान ॥१२॥

इति बारह भावना

सायंकाल की स्तुति।

हे सर्वज्ञ ज्योतिमय गुणमणि बालक जन पर करहु दया।
कुमति निशा अंधयारी कारी सत्य-ज्ञान रवि छिपा दिया ॥१॥
क्रोध मान अरु माया तृष्णा यह बट मार फिरैं चहुँ ओर।
लूट रहे जग जीवन को यह देख अविद्या तम का जोर ॥ २ ॥
मारग हमको सूझे नांहीं ज्ञान विना सब अंध भये।
घट में आप विराजो स्वामी बालक जन सब खड़े नये ॥ ३ ॥
सत्पथ दर्शक जन-मन हर्षक घट घट अंतर्यामी हो।
श्रीजिनधर्म हमारा प्यारा तिसके तुम ही स्वामी हो ॥ ४ ॥
घोर विपत में आन पड़ा हूं मेरा बेड़ा पार करो।
शिक्षा का हो घर २ आदर शिल्प-कला संचार करो ॥ ५ ॥
मेल मिलाप बढ़ावें हम सब द्वेष भाव हो घटाघटी।
नांहि सतावें किसी जीव को प्रीत क्षीर की गटागटी ॥ ६ ॥
मातपिता अरु गुरूजन की हम सेवा निशदिन किया करें।
स्वारथ तजकर सुख दें पर को आशिश सबकी लिया करें ॥७॥
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा।
विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हू बढ़े सदा ॥ ८ ॥

दोऊ कर जोड़ें बालक ठाड़े करें प्रार्थना सुनिये नाथ।
सुख से बीते रैन हमारी जिन मत का हो शीघ्र प्रभात॥ ९॥
मात पिता की आज्ञा पालें गुरु की भक्ति धरें उर में।
रहें सदा हम कर्तव तत्पर उन्नति कर दें पुर पुर में॥ १०॥

प्रभाती।

(१)

वन्दों जिनदेव सदा चरण कमल तेरे। जा प्रसाद सकल कर्म छूटत अघ मेरे॥ टेक॥ ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन केरे। सुमति पद्मश्री श्रीसुपार्श्व चन्दा प्रभू तेरे॥ १॥ पुष्पदन्त शीतल श्रेयांस गुण घनेरे। वासपूज्य विमल अनन्त धर्म जग उजेरे॥ २॥ शान्ति कुंथ अरह मल्ल मुनिसुव्रत केरे। नमि नेमि पार्श्व प्रभू महावीर मेरे॥ ३॥ लेत नाम अष्टजाम छूटत भाव केरे। जन्म पाय यादौराय चरनन के चेरे॥ ४॥

(२)

ताण्डव सुरपति ने जहांहर्ष भावधारी॥ टेक॥ रुन्ड रुन्ड रुन्ड नूपुर ध्वनि ठुमकि २ पैजनि पग भुनि भुनि भुनि किन छवि लागत अति प्यारी॥ १॥ अननन्न सार दानि सननननन किन्नरान घघघघघ गंधर्व सर्व देत तहां तारी॥ २॥ पं पं पं पग झपटि फं फं फं फननननन वं वं मृदङ्ग बाजे वीना ध्वनि सारी॥ ३॥ अदददद विद्याधर दि दि दि दि दि देव सकल दास भवानी ज्यों कहैं जिन चरणन बलिहारी॥ ४॥

(३)

अद्‌भुत महिमा अपार सुनियत प्रभू तेरी ॥ टेक ॥ भव दधि गहिरो अपार कैसे के लगों पार डूवत हों माझधार बांह गहो मेरी ॥ १ ॥ आरत मोहे लगो ध्यान जप तप नहिं होत ज्ञान यातें करुणा निधान फिकर मो घनेरी ॥ २ ॥ प्रभू जी हूजे दयाल विनती यह सुनो हाल कर्म के सुकरें जाल मिटे जगत फेरी ॥ ३ ॥ विघन सघन वेग टरें मेरे सब काज सरें द्यानुराय अर्ज करें सुनो नाथ मेरी ॥ ४ ॥

स्तोत्र द्यानतराय-कृत ।

[भुजंग प्रिया छन्द]

नरेन्द्रं फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीशं । शतेन्द्रं सु पूज भजें नाय शीसं ॥ मुनीन्द्रं गणेद्रं नमें जोड़ हाथं । नमो देव देवं सदा पार्श्वनाथं ॥ १ ॥ गजेंद्रं मृगेन्द्रं गहो तू छुड़ावे । महा आग से नाग ते तू बचावे ॥ महा वीर ते युद्ध में तू जितावे । महा रोग ते वन्ध ते तू खुलावे ॥ २॥ दुखी दुःखकर्त्ता सुखी सुक्खकर्त्ता । सदा सेवकों को महानन्द भर्त्ता ॥ हरे यक्ष राक्षस्स भूतं पिशाचं । विषं डाकनी विघ्न के भय अवाचं ॥३॥ दरिद्रीन को द्रव्य के दान दीने । अपुत्रीन को ते भले पुत्र कीने ॥ महा सकटों से निकाले विधाता । सवे सम्पदा सर्व को देहि दाता ॥ ४ ॥ महा चोर का वज्र का भय निवारे । महा पवन के पुंज ते तू उवारे ॥ महा क्रोध की अग्नि को मेघ धारा । महा लोभ शैलेश को वज्र मारा ॥ ५ ॥ महा मोह अंधेर को ज्ञान भानुं । महा कर्म कान्तार को दो प्रधानं ॥

किये नाग नागिन अधः लोक स्वामी। हरो मान तू दैत्य को हो अकामी ॥ ६ ॥ तुम्हीं कल्पवृक्ष तुही कामधेनु। तुही दिव्य चिन्तामणी नाग एवं ॥ पशू नर्क के दुःख से तू छुडावे। महा स्वर्ग में मुक्ति में तू बसावे ॥ ७ ॥ करें लोह को हेम पाषाण नामी। रटे नाम सो क्यों न हो मोक्षगामी ॥ करे सेव ताकी करे देव सेवा। सुने वयन सोही लहै ज्ञान मेवा ॥ ८ ॥ जपे जाप ताको नहीं पाप लागे। धरे ध्यान ता के सबे दोष भाजे ॥ विना तोह जाने धरे भव घनेरे। तुम्हारी कृपा से सरें काज मेरे ॥ ९ ॥

दोहा—गणधर इन्द्र न कर सके तुम विनती भगवान।
द्यानत प्रीत निहार के कीजे आप समान ॥१०॥

वैराग्य भावना।

दोहा।

बीज राख फल भोगवे, ज्यों किसान जगमाहिं।
त्यों चक्री सुख में मगन, धर्म विसारै नाहिं ॥

योगीरासा वा नरेन्द्र छन्द।

इस विधि राज्य करै नर नायक, भोगे पुण्य विशाल। सुख सागर में मग्न निरन्तर, जात न जानो काल ॥ एक दिवस शुभ कर्म योग से, क्षेमंकर मुनि वंदे। देखे श्री गुरु के पद पंकज, लोचन अलि आनंदे ॥ १ ॥ तीन प्रदक्षिणा दे शिर नायो, कर पूजा थुति कीनी। साधु समीप विनय

कर बैठो चरणों में इंग दीनी॥ गुरु उपदेशो धर्मशिरोमणि, सुन राजा वैरागो। राज्य रमा वनतादिक जो रस, सो सब नीरस लागो॥ २॥ मुनि सूरज कथनो किरणावलि, लगत भर्म बुधि भागो। भव तन भोग स्वरूप विचारो, परम धर्म अनुरागो॥ या संसार महा वन भीतर, भर्मत छोर न आवे। जन्मन मरन जरादो दाहे, जीव महा दुख पावे॥ ३॥ कबहूं कि जाय नर्क पद भुंजे, छेदन भेदन भारी। कबहूं कि पशु पर्याय धरे तहां, वध बन्धन भयकारी। सुरगति में पर सम्पति देखे, राग उदय दुख होई। मानुष योनि अनेक विपति भय, सर्व सुखी नहीं कोई॥ ४॥ कोई इष्ट वियोगी बिलखे, कोई अनिष्ट संयोगी। कोई दीन दरिद्री दीखे, कोई तनका रोगी॥ किसही घर कलिहारी नारी, के बैरी सम भाई। किसही के दुख बाहर दीखे, किसही उर दुचिंताई॥ ५॥ कोई पुत्र विना नित झूरै, होइ मरैं तब रोवैं। खोटी संतति से दुःख उपजे, क्यों प्राणी सुख सोवै॥ पुण्य उदय जिनके तिनको भी, नहीं सदा सुख साता। यह जग वास यथारथ दीखे, सबही हैं दुःख दाता॥ ६॥ जो संसार विषैं सुख होतो, तीर्थंकर क्यों त्यागैं। काहे को शिव साधन करते, संयम से अनुरागैं॥ देह अपावन अथिर घिनावनी, इसमें सार न कोई। सागर के जल से शुचि कीजे, तोभी शुद्ध न होई॥ ७॥ सप्त कुधातु भरी मल मूत्र से, चर्म लपेटी सोहै। अन्तर देखत या सम जग में, और अपावन को है॥ नव मल द्वार स्रवैं निशि बासर नाम लिये घिन आवे। व्याधि उपाधि अनेक जहां तहां, कौन सुधी सुख पावे॥ ८॥ पोषत तो दुख दोष करे अति, सोषत सुख उपजावे। दुर्जन देह स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावे॥ राचन योग्य स्वरूप

न याको, विरचन योग्य सही है । यह तन पाय महा तप कीजे, इस में सार यही है ॥ ९ ॥ भोग बुरे भव रोग बढ़ावैं, वैरी हैं जग जीके । वे रस होय विपाक समय अति, सेवत लागैं नीके ॥ वज्र अग्नि विषधर से हैं वे, हैं अधिके दुःखदाई । धर्मरत्न को चोर प्रबल अति दुर्गति पन्थ सहाई ॥ १० ॥ मोह उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जाने । ज्यों कोई जन खाय धतूरा, सो जब कंचन माने ॥ ज्यों ज्यों भोग संयोग मनोहर, मन वांछित जन पावे । तृष्णा नागिन त्यों त्यों फुंके लहर लोभ विष लावे ॥ ११ ॥ मैं चक्री पद पाय निरन्तर, भोगे भोग घनेरे । तोभी तनक भये ना पूरण, भोग मनोरथ मेरे ॥ राज समाज महा अघ कारण, वैर बढ़ावन हारा । वेश्या सम लक्ष्मी अति चचल इसका कौन पत्यारा ॥१२ मोह महा रिपु वैर विचारे, जग जीव संकट डारे । घर कारागृह वनिता वेड़ी, परजन हैं रखवारे ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप, ये जिय को हितकारी । ये ही सार असार और सब, यह चक्री जीय धारी ॥ १२ ॥ छोड़े चौदह रत्न नवोनिधि, और छोड़े संग साथी । कोटि अठारह घोड़े छोड़े, चौरासी लख हाथी ॥ इत्यादिक सम्पति बहुतेरी, जीर्ण तृणावत् त्यागी । नीति विचार नियोगी सुत को, राज्य दिया बड़ भागी ॥१४॥ होय निस्सल्य अनेक नृपति संग, भूषण वशन उतारे । श्रीगुरु चरण धरो जिन मुद्रा, पंच महा व्रत धारे ॥ धन्य यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धन्य वीर्य गुण धारी । ऐसी सम्पति छोड़ बसे वन, तिन पद धोक हमारी ॥ १५ ॥

परिग्रह पोट उतार सब, लीनो चारित्र पंथ ।
निज स्वभाव में थिर भये, वज्रनाभि निर्ग्रंथ ॥

समाधिमरण भाषा

(पं० सूरचन्दजी रचित)

वन्दों श्रीअर्हन्त परम गुरु, जो सबको सुखदाई।
इसजगमें दुख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई।
अब मैं अरज करूं नित तुमसे, कर समाधि उरमांहीं।
अन्तसमयमें यह वर माँगूं, सो दीजे जगराई ॥ १ ॥
भव भवमें तन धार नये मैं, भव भव शुभ सँग पायो।
भव भवमें नृप ऋद्धि लई मैं, मात पिता सुत थायो॥
भव भवमें तन पुरुष तनो धर, नारीहूं तन लीनो।
भव भवमें मैं भयो नपुंसक, आतमगुण नहिं चीनो ॥२॥
भव भवमें सुरपदवी पाई, ताके सुख अति भोगे।
भव भवमें गति नरकतनी धर, दुख पायो विधयोगे॥
भव भवमें तिर्यञ्च योनि धर, पायो दुख अति भारी।
भव भवमें साधर्मी जनको, संग मिलो हितकारी ॥ ३ ॥
भव भवमें जिनपूजन कीनी, दान सुपात्रहि दीनो।
भव भवमें मैं समवसरणमें, देखो जिनगुण भीनो॥
एती वस्तु मिली भव भवमें, सम्यक् गुण नहिं पायो।
ना समाधियुत मरण करा मैं, ताते जग भरमायो॥ ४॥
काल अनादि भयो जग भ्रमते, सदा कुमरणहि कीनो।
एक वारहू सम्यकयुत मैं, निज आतम नहिं चीनो॥
जो निजपरको ज्ञान होय तो, मरण समय दुखदाई।
देह विनाशी मैं निजभाशी, जोति स्वरूप सदाई॥ ५ ॥
विषय कषायनमें वश होकर, देह आपनो जानो।
कर मिथ्याशरधान हिये बिच, आतम नाहिं पिछानो॥

यों कलेश हिय धार मरणकर, चारों गति भरमायो।
सम्यकदर्शन ज्ञान तीन ये, हिरदेमें नहिं लायो ॥ ६ ॥
अब या अरज करूं प्रभु सुनिये, मरणसमय यह मांगो।
रोग जनित पीड़ा मत होऊ, अरु कषाय मत जागो ॥
ये मुझ मरणसमय दुखदाता, इन हर साता कीजे।
जो समाधियुत मरणहोय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजे॥७॥
यह तन सात कुधात मई है, देखत ही घिन आवे।
चर्म लपेटी ऊपर सोहै, भीतर विष्ठा पावे ॥
अति दुर्गंध अपावन सो यह, मूरख प्रीति बढ़ावे।
देह विनाशी यह अविनाशी, नित्यस्वरूप कहावे ॥८॥
यह तन जीर्ण कुटीसम मेरो, यातैं प्रीति न कीजे।
नूतन महल मिले फिर हमको, यामें क्या मुझ छीजे ॥
मृत्यु होनसे हानि कौन है, याको भय मत लावो।
समता से जो देह तजोगे, तो शुभ तन तुम पावो ॥९॥
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसर के माहीं।
जीरण तनसे देत नयो यह, या सम साऊ नाहीं ॥
या सेती तुम मृत्युसमय नर, उत्सव अतिही कीजे।
क्लेशभावको त्याग सयाने, समताभाव धरीजे ॥ १० ॥
जो तुम पूरव पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई।
मृत्युमित्र बिन कौन दिखावै, स्वर्ग सम्पदा भाई ॥
राग द्वेषको छोड़ सयाने, सात व्यसन दुखदाई।
अन्त समय में समता धारो, पर भव पन्थ सहाई ॥११॥
कर्म महा दुठ वैरी मेरो तासेती दुख पावे।
तन पिंजरे में बंध कियो मुझ, जासों कौन छुड़ावे ॥
भूख तृषा दुख आदि अनेकन, इस ही तनमें गाढ़े।
मृत्युराज अब आप दयाकर तन पिंजर से काढ़े ॥१२॥

नाना वस्त्राभूषण मैंने, इस तन को पहराये।
गंध सुगन्धित अतर लगाये, षटरस अशन कराये॥
रात दिना मैं दास होयकर, सेव करी तन केरी।
सो तन मेरे काम न आयो, भूल रहो निधि मेरी॥१३॥
मृत्युराय को शरण पाय तन, नूतन ऐसो पाऊं।
जामें सम्यक्रतन तीन लहि, आठो कर्म खपाऊं॥
देखो तन सम और कृतघ्नी, नांहि सुना जग मांही।
मृत्यु समय में येही परिजन सबही हैं दुखदाई॥१४॥
यह सब मोह बढ़ावनहारे जियको दुरगति दाता।
इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता॥
मृत्यु कल्पद्रुम पाय सयाने, मांगो इच्छा जेती।
समता धरकर मृत्यु करो तो, पावो संपति तेती॥१५॥
चौ आराधन सहित प्राण तज तौ ये पदवी पावो।
हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्ग मुकति में जावो॥
मृत्युकल्पद्रुम सम नहिं दाता, तीनों लोक मंझारे।
ताको पाय कलेश करो, मत जन्म जवाहरहारे॥१६॥
इस तनमें क्या राचे जियरा, दिन दिन जीरण हो है।
तेज कांति बल नित्य घटत है, यासम अथिर सु कोहै॥
पांचों इन्द्री शिथल भइ तब, स्वास शुद्ध नहिं आवे।
तापर भी ममता नहिं छोड़े समता उर नहिं लावे॥१७॥
मृत्युराज उपकारी जिय को, तनसे तोहि छुड़ावे।
नातर या तन बंदीग्रह में, पड़ा पड़ा बिललावे॥
पुद्गल के परमाणू मिलके, पिंडरूप तन भासी।
यही मूरती में अमूरती, ज्ञानजोति गुणवासी॥१८॥
रोग शोक आदिक जो वेदन, ते सब पुद्गल लारे।
मैं तो चेतन व्याधि बिना नित, हैं सो भाव हमारे॥

या तन से इस क्षेत्र संबंधी, कारण आन बनो है।
खानपान दे याको पोषो, अब समभाव ठनो है ॥१९॥
मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान बिन, यह तन अपनो जानो॥
इंद्री भोग गिने सुख मैंने, आपो नाहिं पिछानो॥
तन विनशनतें नाश जानि निज, यह अयान दुखदाई।
कुटुम आदिको अपनो जानो, भूल अनादी छाई॥ २०॥
अब निज भेद यथारथ समझो, मैं हूं ज्योतिस्वरूपो।
उपजे विनशे सो यह पुद्गल, जानो याको रूपो॥
इष्टनिष्ट जेते सुखदुख हैं, सो सब पुद्गल सागे।
मैं जब अपनो रूप विचारो, तब वे सब दुख भागे॥२१॥
बिन समता तन नन्त धरे मैं, तिनमें ये दुख पायो।
शस्त्रघाततें नन्त बार मर, नाना योनि भ्रमायो॥
बार नन्तही अग्निमाहिं जर, मूवो सुमति न लायो।
सिंह व्याघ्र अहि नन्तबार मुझ, नाना दुःख दिखायो॥२२॥
बिन समाधि ये दुःख लहे मैं, अब उर समता आई।
मृत्युराजको भय नहिं मानो, देवै तन सुख दाई॥
यातैं जबलग मृत्यु न आवे, तबलग जप तप कीजे।
जप तप बिन इस जगके माहीं, कोई भी ना सीजे॥२३॥
स्वर्ग संपदा तपसे पावे, तपसे कर्म नशावे।
तपहीसे शिवकामिनिपति ह्वै, यासे तप चित लावे।
अब मैं जानी समता बिन मुझ, कोऊ नाहिं सहाई॥
मात पिता सुत बान्धव तिरिया ये सब हैं दुखदाई॥२४॥
मृत्यु समयमें मोह करें ये, तातैं आरत हो है॥
आरत तैं गति नीची पावे, यों लख मोह तजो है॥
और परिग्रह जेते जगमें, तिनसे प्रीति न कीजे॥
परभवमें ये संग न चालैं, नाहक आरत कीजे॥ २५॥

जे जे वस्तु लसत हैं तुझ पर, तिनसे नेह निवारो।
परगतिमें ये साथ न चालें, ऐसो भाव विचारो॥
जो परभवमें संग चलें तुझ, तिनसे प्रीति सु कीजे।
पंच पाप तज समता धारो, दान चार विध दीजे॥२६॥
दशलक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकम्पा चित लावो।
षोडश कारण नित्य चिन्तवो, द्वादश भावना भावो॥
चारों परवी प्रोषध कीजे, अशन रातिको त्यागो।
समता धर दुरभाव निवारो, संयमसूं अनुरागो॥२७॥
अन्तसमयमें ये शुभ भावहि, होवें आनि सहाई।
स्वर्ग मोक्षफल तेहि दिखावें, ऋद्धि देंय अधिकाई॥
खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उरमें समता लाके।
जासेती गति चार दूर कर, बसो मोक्षपुर जाके॥२८॥
मन थिरता करके तुम चिंतो, चौ आराधन भाई।
येही तोकों सुखकी दाता, और हितू को नाई॥
आगे बहु मुनिराज भये हैं तिन गहि थिरता भारी।
बहु उपसर्ग सहे शुभ भावन, आराधन उर धारी॥२९॥
तिनमें कछु इक नाम कहूं मैं सो सुन जिय! चित लाके।
भावसहित अनुमोदे तासें, दुर्गति होय न जाके॥
अरु समता निज उरमें आवै, भाव अधीरज जावे।
यों निश दिन जो उन मुनिवरको, ध्यान हिये विचलावे॥३०॥
धन्य धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसी धीरज धारी।
एक श्यालनी युगबच्चायुत, पांव भख्यो दुखकारी॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव वारी॥३१॥
धन्य धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्रीने तन खायो।
तो भी श्रीमुनि नेक डिगे नहिं, आतमसों हित लायो॥

यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारो।
तौ तुमरें जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव वारी ॥ ३२ ॥
देखो गजमुनिके सिर ऊपर विप्र अगिनि बहु वारी।
शीस जले जिम लकड़ी तिनको, तौ भी नाहिं चिगारी।
यह उपसर्ग सहे धर थिरता, आराधन चित धारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव वारी ॥३३॥
सनतकुमार मुनी के तनमें, कुष्ठ वेदना व्यापी।
छिन्न छिन्न तन तासो हूवो, तब चिन्तौ गुण आपी ॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारो।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव वारो॥३४॥
श्रेणिकसुत गंगा में डूबो, तब जिननाम चितारे।
धर संलेखना परिग्रह छांड़ो, शुद्ध भाव उर धारे॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव वारी ॥३५॥
समंतभद्र मुनिवरके तनमें, क्षुधा वेदना आई।
ता दुखमें मुनि नेक न डिगियो, चिन्तो निजगुण भाई॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ३६ ॥
ललितघटादिक तीस दोय मुनि, कौशांबीतट जानो।
नदीमें मुनि बहकर मूवे, सो दुख उन नहिं मानो॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारो।
तौ तुमरें जिय कौन दुख है? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ३७ ॥
धर्मघोष मुनि चंपानगरी, बाह्य ध्यान धर ठाढ़ो।
एक मासकी कर मर्यादा, तृषा दुःख सह गाढ़ो॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव वारी॥ ३८ ॥

श्रीदतमुनिको पूर्व जन्मको, वैरी देव सु आके।
विक्रिय कर दुख शीत तनोसो, सहो साध मन लाके॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव वारी॥ ३९॥
वृषभसेन मुनि उष्ण शिलापर, ध्यान धरो मन लाई।
सूर्यघाम अरु उष्ण पवन की, वेदन सहि अधिकाई॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव वारी॥ ४०॥
अभयघोष मुनि काकंदीपुर, महा वेदना पाई।
वैरी चंडने सब तन छेदो, दुख दीनो अधिकाई॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव वारी॥ ४१॥
विद्युतचरने बहु दुख पायो, तौभी धीर न त्यागी।
शुभभावनसे प्राण तजे निज, धन्य चौर बड़भागी॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव वारी॥ ४२॥
पुत्र चिलाती नामा मुनिको, वैरीने तन घातो।
मोटे मोटे कीट पड़े तन, तापर निज गुण रातो।
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव वारी॥ ४३॥
दण्डक नामा मुनिकी देही, बाणन कर अरि भेदी।
तापर नेक डिगे नहिं वे मुनि, कर्म महा रिपु छेदी॥
यह उपसर्ग सहो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव वारी॥ ४४॥
अभिनन्दन मुनि आदि पांचसै, घानी पेलि जु मारे।
तौ भी श्रीमुनि समता धारी पूरब कर्म विचारे॥

यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४५ ॥
चाणक मुनि गोघरके मांही, मूंद अगिनि परिज्वालो।
श्रीगुरु उर समभाव धार के, अपनो रूप सम्हालो॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४६ ॥
सात शतक मुनिवरने पायो, हथनापुरमें जानो।
बलिब्राह्मणकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहिं मानो॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी॥
तो तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४७ ॥
लोहमयी आभूषण गड़के, तांते कर पहराये।
पांचों पाडव मुनिके तनमें, तौ भी नाहिं चिगाये॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव वारी ॥ ४८ ॥
और अनेक भये इस जगमें, समता रसके स्वादी।
वेही हमको हो सुखदाता, हरहैं टेव प्रमादी॥
सम्यकदर्शन ज्ञान चरण तप ये, आराधन चारों।
येही मोको सुखके दाता, इन्हें सदा उर धारों॥ ४९ ॥
यो समाधि उरमांही लावो, अपनो हित जो चाहो।
तज ममता अरु आठों मदको, जोतिस्वरूपी ध्यावो॥
जो कोई निज करत पयानो, ग्रामांतर के काजे।
सो भी शकुन विचारै नीके, शुभ शुभ कारण साजे॥ ५० ॥
मात पितादिक सर्व कुटुमसों, नीके शकुन बनावें।
हलदी धनिया पुंगी अक्षत, दूध दही फल लावें॥
एक ग्रामके कारण एते, करै शुभाशुभ सारे।
जब परगतिको करत पयानो, तब नहिं सोचे प्यारे॥ ५१ ॥

सर्व कुटम जब रोवन लगे, तोहि रुलावें सारे।
ये अपशकुन करें सुन तोकूँ, तूं यों क्यों न विचारे॥
अब परगति के चालत विरियां, धर्मध्यान उर आनो।
चारों आराधन आराधो, मोह तनो दुखदानो॥५२॥
है निश्शल्य तजो दुविधा, आतमराम सुध्यावो।
जब परगतिको करहु पयानो, परम तत्व उर लावो॥
मोह जालको काट पियारे! अपनो रूप विचारो।
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो यों उर निश्चय धारो॥५३॥

दोहा छंद।

मृत्युमहोत्सव पाठको, पढ़ो सुनो बुधिवान।
सरधा धर नित सुख लहो; सूरचन्द शिवथान॥५४॥
पंच उभय नव एक नभ, सम्वत सो सुखदाय।
आश्विन श्यामा सप्तमी, कहो पाठ मनलाय॥५५॥

इति समाधिमरण।

जिनवाणी-स्तुति।

वीर हिमांचल ते निकसी गुरु गौतम के मुख कुंड ढरी है।
मोह महातम भेद चली जग की जड़ता तप दूर करी है॥
ज्ञान पयोनिधि माँहि रली, बहु भंग तरंगनि सों उछरी है।
ता शुचि शारद गंग नदी प्रति मैं अँजुली कर शीस धरी है॥१
या जग मंदिर में अनिवार अज्ञान अँधेर छयो अति भारी।
श्रीजिनकी धुनि दीप शिखा सम जो नहिं होय प्रकाशनहारी॥
तो किस भाँति पदारथ पांति कहां लहते रहते अविचारी।
या विधि संत कहें धनि है धनि हैं जिन वैन बड़े उपकारी॥२

नामावली स्तोत्र ।

जय जिनन्द सुख कंद नमस्ते । जय जिनंद जिन फंद नमस्ते ॥
जय जिनंद वरबोध नमस्ते । जय जिनंद जित क्रोध नमस्ते१॥
पाह ताप हर इन्दु नमस्ते । अर्हं वरन जुत बिन्दु नमस्ते ॥
शिष्टाचार विशिष्ट नमस्ते । इष्ट मिष्ट उत्कृष्ट नमस्ते ॥२॥
पर्म धर्म वर शर्म नमस्ते । मर्म भर्म घन घर्म नमस्ते ॥
दृगविशाल वर भाल नमस्ते । हृद दयाल गुनमाल नमस्ते ॥३॥
शुद्धबुद्ध अविरुद्ध नमस्ते । रिद्धिसिद्धि वर वृद्ध नमस्ते ॥
वीतराग विज्ञान नमस्ते । चिद्विलास धृत ध्यान नमस्ते॥४॥
स्वच्छ गुणांबुधि रत्न नमस्ते । सत्व हितंकर यत्न नमस्ते ॥
कुनयकरी मृगराज नमस्ते । मिथ्या खग वर बाज नमस्ते ॥५॥
भव्य भवोदधि तार नमस्ते । शर्मामृत सित सार नमस्ते ॥
दरश ज्ञान सुखवीर्य नमस्ते । चतुरानन धर धीर्य नमस्ते ॥६॥
हरिहर ब्रह्मा बिष्णु नमस्ते । मोह मर्द मनु जिष्णु नमस्ते ॥
महा दान महभोग नमस्ते । महा ज्ञान मह जोग नमस्ते ॥७॥
महा उग्र तप सूर नमस्ते । महा मौन गुण भूरि नमस्ते ॥
धरम चक्रि वृष केतु नमस्ते । भवसमुद्र शत सेतु नमस्ते ॥८॥
विद्याईश मुनीश नमस्ते । इन्द्रादिक नुत शीस नमस्ते ॥
जय रतनत्रय राय नमस्ते । सकल जीव सुखदाय नमस्ते॥९॥
अशरण शरण सहाय नमस्ते । भव्य सुपन्थ लगाय नमस्ते ॥
निराकार साकार नमस्ते । एकानेक अधार नमस्ते ॥१०॥
लोकालोक विलोक नमस्ते । त्रिधा सर्व गुण थोक नमस्ते ॥
सल्ल दल्ल दल मल्ल नमस्ते । कल्ल मल्ल जित छल्ल नमस्ते ११॥
भुक्ति मुक्ति दातार नमस्ते । उक्ति सुक्ति श्रृंगार नमस्ते ॥
गुण अनंत भगवन्त नमस्ते । जै जै जै जयवन्त नमस्ते॥१२

मेरी—भावना

पं० जुगलकिशोर मुख्तार-कृत ।

जिसने रागद्वेषकामादिक, जीते, सब जग जान लिया—
सब जीवों को मोक्षमार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया।
बुद्ध, वीर जिन, हरि, हर, ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो—
भक्तिभाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो ॥१
विषयों की आशा नहिं जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं—
निज-परके हित-साधन में जो, निश-दिन तत्पर रहते हैं।
स्वार्थत्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के दुखसमूह को हरते हैं ॥२
रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
उनहीं जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे।
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहिं कहा करूँ।
पर-धन-वनिता पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ ॥३
अहंकार का भाव न रक्खूं नहीं किसी पर क्रोध करूँ।
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्षा-भाव धरूँ।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूँ—
बने जहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूँ ॥४
मैत्रीभाव जगत में मेरा सब जीवों से नित्य रहे।
दीन-दुखी जीवों पर मेरे उरसे करुणास्रोत बहे।
दुर्जन-क्रूर कुमार्ग रतों पर, क्षोभ नहीं मुझ को आवे।
साम्यभाव रक्खूं मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥५
गुणीजनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहां तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे।

होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥ ६
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,।
लाखों वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावे।
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे।
तो भी न्यायमार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावे॥ ७॥
होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावे।
पर्वत-नदी-श्मशान-भयानक अटवी से नहिं भय खावे।
रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन, दृढ़तर बन जावे।
इष्टवियोग-अनिष्टयोग में सहनशीलता दिखलावे ॥ ८ ॥
सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
वैरि-पाप-अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे।
घर घर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हो जावें।
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज जन्म-फल सब पावें ॥९॥
ईति-भीति व्यापे नहिं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करे।
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे।
परम अहिंसा-धर्म जगत में, फैल सर्वहित किया करे॥ १० ॥
फैले प्रेम परस्पर जग में मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय-कटुक-कठोर शब्द नहिं कोई मुख से कहा करे।
बनकर सब 'युग-वीर' हृदय से देशोन्नति रत रहा करें।
वस्तु-स्वरूप विचार खुशी से सब दुख संकट सहा करें ॥११॥

इष्ट छत्तीसी।

अर्थात्

पंच परमेष्ठी के १४३ मूल गुण।

सोरठा।

प्रणमूं श्रीअरहंत, दयाकथित जिनधर्मको।
गुरु निरग्रंथ महन्त, अवर न मानूं सर्वथा॥ १॥
विन गुण की पहिचान, जानैं वस्तु समानता।
तातैं परम वखान, परमेष्ठी के गुण कहूं॥ २॥
रागद्वेषयुत देव—मानै हिंसाधर्म पुनि।
सग्रंथगुरु की सेव, सो मिथ्याती जग भ्रमै॥ ३॥

अरहंत के ४६ मूल गुण।

दोहा।

चौतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ।
अनन्त चतुष्टय गुणसहित, छीयालीसों पाठ॥ ४॥

अर्थ—३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, ४ अनन्त चतुष्टय ये अरहंत के ४६ मूलगुण होते हैं। अब इनका भिन्न भिन्न वर्णन करते हैं—

जन्म के १० अतिशय।

अतिशय रूप सुगंध तन, नाहिं पसेव निहार।
प्रियहित वचन अतुल्य बल, रुधिर श्वेत आकार॥

लच्छण सहसरु आठ तन, समचतुष्कसंठान ।
वज्रवृषभनाराच जुत, ये अजमत दश जान ॥ ६ ॥

अर्थ—१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, ३ पसेवरहित शरीर, ४ मलमूत्ररहित शरीर, ५ हित-मितप्रियवचन बोलना, ६ अतुल्यबल, ७ दुग्धवत् श्वेत रुधिर, ८ शरीर में एक हज़ार आठ लक्षण, ९ समचतुरस्रसंस्थान, १० वज्रवृषभनाराचसंहनन । ये दश अतिशय अरहंत भगवान के जन्म से ही उत्पन्न होते हैं ॥ ६ ॥

केवल ज्ञान के १० अतिशय ।

योजन शत इकमें सुभिक्ष, गगनगमन मुख चार ।
नहिं अदया उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार ॥
सब विद्या ईसुरपनों, नाहिं बढ़ें नखकेश ।
अनिमिषदृग छायारहित, दश केवलके वेश ॥ ८ ॥

अर्थ—१ एकसौ योजन में सुभिक्षता, अर्थात् जिस स्थान में केवली हों उनसे चारों तरफ सौ सौ कोशमें सुकाल होता है, २ आकाश में गमन, ३ चार मुखों का दीखना, ४ हिंसाका अभाव, ५ उपसर्गरहित, ६ कवल (ग्रास) वर्जित आहार, ७ समस्त विद्याओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका नहीं बढ़ना, ९ नेत्रोंकी पलकें नहीं झपकना, १० छाया रहित । ये १० अतिशय केवलज्ञान उत्पन्न होने से प्रगट होते हैं ॥ ८ ॥

देव-कृत १४ अतिशय ।

देव रचित हैं चार दश, अर्द्धमागधी भाष ।
आपसमांहीं मित्रता निर्मल दिश आकाश ॥९॥

होत फूल फल ऋतु सबै, पृथिवी कांच समान ।
चरणकमलतल कमल है, नभतें जय जय बान ॥१०॥
मंद सुगंध बयार पुनि, गंधोदक की वृष्टि ।
भूमि विषै कंटक नहीं, हर्षमयी सब सृष्टि ॥११॥
धर्मचक्र आगे चलै, पुनि वसु मंगल सार ।
अतिशय श्री अरहंत के, ये चौंतीस प्रकार ॥१२॥

अर्थ—१ भगवान् की अर्द्धमागधी भाषा का होना, २ समस्त जीवों में मित्रता का होना, ३ दिशाओं का निर्मल होना, ४ आकाश का निर्मल होना, ५ सब ऋतु के फल पुष्प धान्यादिक का एकही समय फलना, ६ एक योजन तक की पृथिवी का दर्पणवत् निर्मल होना, ७ चलते समय भगवान् के चरण कमल के तले सुवर्ण कमल का होना, ८ आकाश में जय जय ध्वनि का होना, ९ मंद सुगंधित पवन का चलना, १० सुगन्धमय जल की वृष्टि होना, ११ पवनकुमार देवों के द्वारा भूमिका कण्टकरहित होना, १२ समस्त जीवों का आनन्दमयहोना, १३ भगवान के आगे धर्म चक्र का चलना, १४ छत्र, चमर, ध्वजा, घंटादि अष्टमंगल द्रव्योंका साथ रहना। इस प्रकार सब मिलाकर ३४ अतिशय अरहंत भगवानके होते हैं ॥ १२ ॥

अष्ट प्रातिहार्य ।

तरु अशोक के निकट में सिंहासन छविदार ।
तीन छत्र सिर पर लसैं, भामंडल पिछवार ॥१३॥
दिव्यध्वनि मुख तें खिरै, पुष्पवृष्टि सुर होयं ।
ढारैं चौसठि चमर जख, बाजैं दुंदुभि जोय ॥१४॥

अर्थ—१ अशोकवृक्ष का होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भगवान के सिर पर तीन छत्र का फिरना, ४ भगवान के पीछे भामंडल का होना, ५ भगवान के मुखसे दिव्यध्वनि का होना, ६ देवों के द्वारा पुष्पवृष्टि का होना, ७ यक्षदेवों द्वारा चौसठ चँवरों का ढुरना, ८ दुंदुभि बाजों का बजना। ये आठ प्रातिहार्य हैं।

अनन्त चतुष्टय।

ज्ञान अनंत अनंत सुख, दरस अनंत प्रमान।
बल अनंत अरहंत सो इष्टदेव पहिचान॥१५॥

अर्थ—१ अनन्तदर्शन, २ अनन्तज्ञान, ३ अनन्त सुख, ४ अनन्तवीर्य। जिसमें इतने गुण हों, वह अरहन्त परमेष्ठी है।

अष्टादश दोषवर्जन।

जनम जरा तिरषा क्षुधा, विस्मय आरत खेद।
रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिंता स्वेद॥१६॥
राग द्वेष अरु मरण जुत, ये अष्टादश दोष।
नाहिं होत अरहन्त के, सो छविलायक मोष॥१७॥

अर्थ—१ जन्म, २ जरा, ३ तृषा, ४ क्षुधा, ५ आश्चर्य, ६ अरति (पीड़ा), ७ खेद (दुख), ८ रोग, ९ शोक, १० मद, ११ मोह, १२, भय, १३ निद्रा, १४ चिन्ता, १५ पसीना, १६ राग, १७ द्वेष, १८ मरण, ये १८ दोष अरहन्त भगवान में नहीं होते॥१७॥

सिद्धों के ८ गुण।

सोरठा।

समकित दरसन ज्ञान, अगुरु लघू अवगाहना।
सूच्छम वीरजवान निराबाध गुन सिद्ध के ॥१८॥

अर्थ—१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघुत्व, ५ अवगाहनत्व, ६ सूक्ष्मत्व, ७ अनन्तवीर्य, ८ अव्याबाधत्व, ये सिद्धों के ८ मूल गुण होते हैं ॥१८॥

आचार्य के ३६ गुण।

दोहा।

द्वादश तप दश धर्मजुत, पालें पंचाचार।
षट् आवशिकत्रिगुप्ति गुन, आचारज पद सार ॥

अर्थ—तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुप्ति ३ ये आचार्य महाराज के ३६ मूल गुण होते हैं। अब इनको भिन्न २ कहते हैं ॥१९॥

द्वादश तप।

अनशन ऊनोदर करैं, व्रत संख्या रस छोर।
विविक्त शयन आसन धरैं, कायक्लेश सुठोर ॥२०॥
प्रायश्चित्त धर विनयजुत, वैयाव्रत स्वाध्याय।
पुनि, उपसर्ग विचार कै, धरैं ध्यान मन लाय ॥२१॥

अर्थ—१ अनशन, २ ऊनोदर, ३ व्रतपरिसंख्यान, ४ रसपरित्याग, ५ विविक्तशय्यासन, ६ कायक्लेश, ७ प्रायश्चित

लेना, ८ पाँच प्रकार विनय करना, ९ वैयाव्रत करना, १० स्वाध्याय करना, ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोड़ना), और १२ ध्यान करना, ये बारह प्रकारके तप है॥ २१॥

दश धर्म।

छिमा मारदव आरजव, सत्यवचन चित पाग।
संजम तप त्यागी सरव, आकिंचन तियत्याग॥

अर्थ—१ उत्तमक्षमा, २ मार्दव, ३ आर्जव, ४ सत्य, ५ शौच, ६ संयम, ७ तप, ८ त्याग, ९ आकिंचन्य, १० ब्रह्मचर्य्य ये दश प्रकारके धर्म हैं॥ २२॥

आवश्यक।

समता धर वंदन करैं, नाना थुती बनाय।
प्रतिक्रमण स्वाध्यायजुत, कायोत्सर्ग लगाय॥

अर्थ—१ समता (समस्त जीवोंसे समता भाव रखना), २ वन्दना, ३ स्तुति (पञ्चपरमेष्ठीकी स्तुति) करना, ४ प्रतिक्रमण (लगे हुए दोषोंपर पश्चात्ताप) करना, ५ स्वाध्याय, और ६ कायोत्सर्ग (ध्यान) करना ये छह आवश्यक हैं॥ २३॥

पंचाचार और तीन गुप्ति।

दर्शन ज्ञान चरित्र तप, वीरज पंचाचार।
गोपै मनवचकायको, गिन छतीस गुन सार॥

अर्थ---१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चरित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्य्याचार। १ मनोगुप्ति—मनको वशमें करना, २ वचनगुप्ति—वचनको वशमें करना, ३ कायगुप्ति—शरीरको वशमें करना, इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं ॥ २४ ॥

उपाध्याय के २५ गुण।

दोहा।

चौदह पूरबको धरैं, ग्यारह अंग सुजान।
उपाध्याय पच्चीस गुण, पढ़ैं पढ़ावैं ज्ञान ॥ २५ ॥

अर्थ—११ अंग १४ पूर्वको आप पढ़ैं और अन्यको पढ़ावें ये ही उपाध्यायके २५ गुण हैं ॥ २५ ॥

ग्यारह अंग।

प्रथमहि आचारांग गनि, दूजो सूत्रकृतांग।
ठाणअंग तीजो सुभग, चौथो समवायांग ॥ २६ ॥
व्याख्याप्रज्ञप्ति पंचमो, ज्ञातृकथा षट आन।
पुनि उपासकाध्ययन है, अन्तःकृत दशठान ॥
अनुत्तरणउत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान।
बहुरि प्रश्नव्याकरणजुत, ग्यारह अंग प्रमान ॥

अर्थ—१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग, ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग, ८ अन्तःकृतदशांग, ९ अनुत्तरोत्पादकदशांग, १० प्रश्नव्याकरणांग, ११ विपाकसूत्रांग, ये ग्यारह अंग हैं ॥ २७ ॥

चौदह पूर्व।

उत्पादपूर्व अग्रायणी, तीजो वीरजवाद।
अस्ति नास्ति परवाद पुनि, पंचम ज्ञानप्रवाद॥
छट्टो कर्मप्रवाद है, सतप्रवाद पहिचान।
अष्टम आत्मप्रवाद पुनि, नवमों प्रत्याख्यान॥ ३०॥
विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महंत।
प्राणवाद क्रिया बहुल, लोकबिंदु है अंत॥ ३१॥

अर्थ—१उत्पादपूर्व, अग्रायिणी पूर्व, ३ वीर्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व, ५ ज्ञान प्रवादपूर्व, ६ कर्म प्रवादपूर्व, ७ सत्प्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व, १० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियाविशालपूर्व, १४ लोकबिन्दुपूर्व ये १४ पूर्व हैं॥ ३१॥

सर्वसाधु के २८ मूल गुण।

पंचमहाव्रत।

हिंसा अनृत तसकरी, अब्रह्म परिग्रह पाय।
मनवचतनतैं त्यागवो, पंचमहाव्रत थाय॥ ३२॥

अर्थ—१ अहिंसामहाव्रत, सत्यमहाव्रत, ३ अचौर्यमहाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत, ये पांच महाव्रत हैं।

पांच समिति।

ईर्या भाषा एषणा, पुनि क्षेपन आदान।
प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पांचों समिति विधान॥

अर्थ—१ ईर्य्यासमिति, २ भाषासमिति, ३ एषणासमिति ४ आदाननिक्षेपणसमिति, ५ प्रतिष्ठापनासमिति, ये पांच समिति हैं ॥ ३ ॥

पांच इन्द्रियोंका दमन।

सपरस रसना नासिका, नयन श्रोत्रका रोध।
षटआवशि मंजनतजन, शयन भूमिको शोध ॥३४॥

अर्थ—१ स्पर्शन (त्वक्), २ रसना, ३ घ्राण, ४ चक्षु, और ५ श्रोत्र। इन पांच इन्द्रियों का वश करना सो इन्द्रिय-दमन है (छह आवश्यक आचार्य्यके गुणों में देखो) ॥ ३४ ॥

शेष सात गुण।

वस्त्रत्याग कचलौंच अरु, लघुभोजन इकबार।
दांतन मुख में ना करें, ठाड़े लेहिं अहार ॥ ३५ ॥

अर्थ—१ यावज्जीव स्नानका त्याग, २ शोधकर (देख भाल कर) भूमि पर सोना, ३ वस्त्रत्याग, (दिगम्बर होना) ४ केशों का लौंच करना, ५ एकबार लघुभोजन करना, ६ दन्तधावन नहीं करना, ७ खड़े खड़े आहार लेना, इन सात गुणोंसहित २८ मूल गुण सर्व मुनियों के होते हैं ॥ ३५ ॥

साधर्मी भवि पठनको, इष्टछतीसी ग्रंथ।
अल्पबुद्धि बुधजन रच्यौ, हित मित शिवपुरपंथ ॥

इति पंचपरमेष्ठीके १४३ मूलगुणों का वर्णन समाप्त।

भक्तामर स्तोत्र ।

वसन्ततिलका ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं दलितपापत-
मोवितानम् । सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादावालम्बनं
भवजले पततां जनानाम् ॥ १ ॥ यः संस्तुतः सकलवाङ्मय-
तत्त्वबोधदुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः । स्तोत्रैर्जगत्त्रित-
यचित्तहरैरुदारैः स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥ २ ॥
बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ स्तोतुं समुद्यतमतिर्विग-
तत्रपोऽहम् । बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्बमन्यः क इ-
च्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥ ३ ॥ वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र
शशाङ्ककान्तान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्रं को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं
भुजाभ्याम् ॥ ४ ॥ सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश कर्तुं
स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः । प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो
मृगेन्द्रम् नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥ ५ ॥
अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते
बलान्माम् । यत्कोकिलः किल मधौ मधुरंविराति तच्चाम्रचारु-
कलिकानिकरैकहेतु ॥ ६ ॥ त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् । आक्रान्तलोकमलिनील
मशेषमाशु सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥ ७ ॥ मत्वेति
नाथ तव संस्तवनं मयेद-मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननू-
दबिन्दुः ॥ ८ ॥ आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं त्वत्संक-
थापि जगतां दुरितानि हन्ति । दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव-

पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥ ९ ॥ नात्यद्भुतं भुवनभूष-
णभूत नाथ भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः । तुल्या भवन्ति
भवतो ननु तेन किंवा भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥
दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य
चक्षुः । पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः क्षारं जलं
जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ॥ ११ ॥ यैः शान्तरागरुचिभिः
परमाणुभिस्त्वं निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत । तावन्त एव
खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां यत्ते समानमपरं न हि रूपम-
स्ति ॥ १२ ॥ वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि निःशेषनिर्जित-
जगत्त्रितयोपमानम् । बिम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥ १३ ॥ सम्पूर्णमण्डल-
शशाङ्ककलाकलाप शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति । ये
संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं कस्तान्निवारयति संचरतो
यथेष्टम् ॥ १४ ॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभिर्नीतं
मनागपि मनो न विकारमार्गम् । कल्पान्तकालमरुता चलिता-
चलेन किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥ १५ ॥ निर्धूम-
वर्तिरपवर्जिततैलपूरः कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि । गम्यो
न जातु मरुतां चलिताचलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ
जगत्प्रकाशः ॥ १६ ॥ नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति । नाम्भोधरोदरनिरुद्धमहा-
प्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र लोके ॥ १७ ॥ नित्योदयं
दलितमोहमहान्धकारं गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्तिं विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्क
बिम्बम् ॥१८॥ किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा युष्मन्मुखेन्दु
दलितेषु तमःसु नाथ । निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा त्वयि

विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु । तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्वं नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति । किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥ २१ ॥ स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान् नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता । सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥ २२ ॥ त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस—मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः ॥ २३ ॥ त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यम-संख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् । योगीश्वरं विदित-योगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥ २४ ॥ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशं-करत्वात् । धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानात्व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥ २५ ॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमे-श्वराय तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशोषणाय ॥ २६ ॥ को विस्म योऽत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश । दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षि तोऽसि ॥ २७ ॥ उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपम मलं भवतो नितान्तम् ॥ स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमोवितानं बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥ २८ ॥ सिंहासने मणिमयूखशिखा विचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् । बिम्बम् वियद्विल-सदंशुलतावितानं तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥ २९ ॥ कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते तव वपुः कलधौत–

कान्तम् । उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधार—मुच्चैस्तटं सुरगिरे-रिव शातकौम्भम् ॥ ३० ॥ छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त-मुच्चैःस्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम् । मुक्ताफलप्रकरजाल-विवृद्धशोभं प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥ ३१ ॥ गम्भीर-ताररवपूरितदिग्विभाग--स्त्रैलोक्यलोकशुभ संगमभूतिदक्षः । सद्धर्मराजजयघोषणघोषकः सन् खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥ ३२ ॥ मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजातसन्तानकादिकुसु-मोत्करवृष्टिरुद्धा । गन्धोदबिन्दुशुभमन्दमरुत्प्रपाता दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥ ३३ ॥ शुम्भत्प्रभावलयभूरिवि-भा विभोस्ते लोकत्रयद्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती । प्रोद्यद्दिवा करनिरन्तरभूरिसंख्या दीप्त्याजयत्यपि निशामपि सोमसौम्या ॥ ३४ ॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटु स्त्रिलोक्याः । दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्वभाषास्वभाव-परिणामगुणैःप्रयोज्यः ॥ ३५ ॥ उन्निद्रहेमनवपंकजपुञ्जकान्ती पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ । पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥ ३६ ॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य याहृ-क्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनो-ऽपि ॥ ३७ ॥ श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूलमत्तभ्रमद्भ्रम रनादविवृद्धकोपम् । ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं दृष्ट्वा भयं भवती नो भवदाश्रितानाम् ॥ ३८ ॥ भिन्नेभकुम्भगल-दुज्ज्वलशोणिताक्त मुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः । बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि नाक्रामति क्रमयुगाचलसं-श्रितं ते ॥ ३९ ॥ कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् । विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुख-मापतन्तं त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥ ४० ॥ रक्तेक्षणं

रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम्। आक्रामति क्रमयुगेण निरस्तशङ्कस्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः॥ ४१॥ वल्गत्तुरङ्गगजगर्जितभीमनादमाजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम्। उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति॥ ४२॥ कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाहवेगावतारतरणातुरयोधभीमे। युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते॥ ४३॥ अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपाठीनपीठभयदोल्बणवाडवाग्नौ। रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयानपात्रास्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्व्रजन्ति॥४४ उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः। त्वत्पादपङ्कजरजोमृतदिग्धदेहा मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः॥ ४५॥ आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गा गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः। त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति॥४६॥ मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहिसंग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम्। तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते॥४७॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां भक्त्या मया रुचिरवर्णविचित्रपुष्पाम्। धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः॥ ४८॥

इति श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितमादिनाथस्तोत्रं समाप्तम्।

हिन्दी-भक्तामर।

पंडित गिरिधर शर्मा कृत

हैं भक्त-देव-नत, मौलिमणिप्रभाके। उद्योतकारक, विनाशक पापके हैं॥ आधार जो भवपयोधि पड़े जनोंके, अच्छी तरह नम उन्हीं प्रभुके पदोंको ॥१॥ श्रीआदिनाथ विभु की स्तुति मैं करूंगा। की देवलोकपति ने स्तुति है जिन्होंकी॥ अत्यन्त सुन्दर जगत्त्रय-चित्तहारी। सुस्तोत्रसे, सकल शास्त्र रहस्य पाके ॥२॥ हूं बुद्धिहीन फिर भी बुधपूज्यपाद! तैयार हूं स्तवनको निर्लज्ज होके॥ है और कौन जगमें तज बालको जो लेना चहे सलिलसंस्थित चन्द्र-बिम्ब ॥३॥ होवे बृहस्पतिसमान सुबुद्धि तो भी, है कौन जो गिन सके तव सद्गुणोंको॥ कल्पान्तवायुवश सिन्धु अलंघ्य जो है, है कौन जो तिर सके उसको भुजासे ॥४॥ हूं शक्तिहीन फिर भी करने लगा हूं-तेरी प्रभो! स्तुति, हुआ वश भक्तिके मैं॥ क्या मोह के वश हुआ शिशुको बचाने-है सामना न करता मृग सिंहका भी ॥५॥ हूं अल्पबुद्धि, बुधमानवकी हंसीका-हूं पात्र, भक्ति तव है मुझको बुलाती। जो बोलता मधुर कोकिल है मधूमें, है हेतु आम्रकलिका बस एक उसका॥ ६॥ तेरी किये स्तुति विभो! बहु जन्मके भी होते विनाश सब पाप मनुष्यके हैं॥ भौंरे समान अति श्यामल ज्यों अंधेरा-होता विनाश रविके करसे निशाका॥ ७॥ यों मान की स्तुति शुरू मुझ अल्पधीने-तेरे प्रभाववश नाथ! वही हरेगी-सल्लोकके हृदय को; जलबिन्दु भी तो, मोती समान नलिनी-दलपै सुहाते ॥८॥ निर्दोष दूर तव हो स्तुति का बनाना

तेरी कथा तक हरे जगके अघोंको । हो दूर सूर्य करती उसकी प्रभा ही-अच्छे प्रफुल्लित सरोजनको सरोंमें ॥ ९ ॥ आश्चर्य क्या भुवनरत्न ! भले गुणोंसे--तेरी किये स्तुति वने तुझसे मनुष्य । क्या काम है जगतमें उन मालिकोंका, जो आत्म-तुल्य न करें निज आश्रितोंको ॥१०॥ अत्यन्त सुन्दर विभो ! तुझको विलोक अन्यत्र आंख लगती नहिं मानवोंकी । क्षीराब्धिका मधुर सुन्दर वारि पीके, पीना चहे जलधिका जल कौन खारा ॥११॥ जो शान्तिके सुपरमाणु प्रभो ! तनूमें--तेरे लगे, जगतमें उतने वही थे। सौन्दर्यसार जगदीश्वर ! चित्तहर्ता, तेरे समान इससे नहिं रूप कोई ॥१२॥ तेरा कहां मुख सुरादिक नेत्ररम्य, सर्वोपमान विजयी, जगदीश ! नाथ ! ॥ त्योंही कलंकित कहां वह चन्द्रबिम्ब, जो हो पड़े दिवसमें द्युतिहीन फीका ॥ १३॥ अत्यन्त सुन्दर कलानिधिकी कलासे, तेरे मनोज्ञ गुण नाथ ! फिरें जगोंमें ॥ है आसरा त्रिजगदीश्वरका जिन्होंको, रोके उन्हें त्रिजगमें फिरते न कोई ॥१४॥ देवाङ्गना हर सकीं मनको न तेरे, आश्चर्य नाथ ! इसमें कुछ भी नहीं है। कल्पान्त के पवनसे उड़ते पहाड़, पै मन्दराद्रि हिलता तक है कभी क्या ! ॥१५॥ बत्ती नहीं, नहिं धुआँ, नहिं तैलपूर, भारी हवातक नहीं सकती बुझा है ।। सारे त्रिलोक बिच है करता उजेला, उत्कृष्ट दीपक विभो ! द्युतिकारि तू है ॥१६॥ तू हो न अस्त, तुझको गहता न राहु-पाते प्रकाश, तुझसे जग एक साथ ॥ तेरा प्रभाव रुकता नहिं बादलोंसे—तू सूर्यसे अधिक है महिमानिधान ॥ १७ ॥ मोहान्धकार हरता, रहता उगा ही-जाता न राहु-मुखमें, न छुपे घनोंसे ॥ अच्छे प्रकाशित करें जगको, सुहावे,- अत्यन्त कान्तिधर नाथ ! मुखेन्दु तेरा ॥१८॥ क्या भानुसे दिवसमें, निशिमें शशीसे--तेरे प्रभो

सुमुखसे तम नाश होते ॥ अच्छी तरा पक गया जग बीच धान--है काम क्या जलभरे इन बादलोंसे ॥ १९ ॥ जो ज्ञान निर्मल विभो ! तुझमें सुहाता--भाता नहीं वह कभी परदेवता में । होती मनोहर छटा मणिमध्य जो है, सो कांचमें नहिं, पड़े रवि--बिम्बके भी ॥ २०॥ देखे भले अयि विभो ! परदेवता ही, देखे जिन्हें हृदय मा तुझमें रमे ये ॥ तेरे विलोकन किये फल क्या प्रभो ! जो-कोई रमे न मनमें पर जन्ममें भो ॥२१॥ माएं अनेक जनतीं जगमें सुतोंको--हैं किन्तु वे न तुझसे सुतकी प्रसूता ॥ सारी दिशा धर रहीं रविका उजेला-पै एक पूरब दिशा रविको उगाती ॥२२॥ योगी तुझे परम पूरुष हैं बताते, आदित्यवर्ण मलहीन तमिस्त्रहारी । पाके तुझे जय करें सब मौतको भी-है और ईश्वर नहीं वर मोक्ष-मार्ग ॥२३॥ योगीश, अव्ययं, अचिंत्य, अनङ्गकेतु-ब्रह्मा, असंख्य, परमेश्वर, एक, नाना-ज्ञानस्वरूप, विभु, निर्मल, योगवेत्ता—त्यों आद्य, सन्त तुझको कहते अनन्त ॥ २४ ॥ तू बुद्ध है विबुध-पूजित-बुद्धिवाला-कल्याणकर्तृ वर शंकर भी तुही है ॥ तू मोक्ष-मार्ग-विधि-कारक है विधाता--है व्यक्त नाथ ! पुरुषोत्तम भी तुही है ॥२५॥ त्रैलोक्य-आर्ति-हर नाथ ! तुझे नमूं मैं-हे भूमिके विमल रत्न तुझे नमूं मैं-हे ईश सर्व जगके तुझ को नमूं मैं-मेरे भवोदधि-विनाशि ! तुझे नमूं मैं ॥२६॥ आश्चर्य क्या गुण सभी तुझमें समाये-अन्यत्र क्योंकि न मिली उनको जगा ही । देखा न नाथ ! मुख भी तव स्वप्नमें भी, पा आसरा जगतका सब दोषने तो ॥२७॥ नीचे अशोक-तरुके तन है सुहाता-तेरा विभो ! विमल रूप प्रकाश-कर्ता; फैली हुई किरणका, तमका विनाशी-मानो समीप घनके रवि-बिम्ब ही है ॥२८॥ सिंहासन स्फटिक-रत्न जड़ा उसीमें-भाता विभो !कनककान्त शरीर तेरा ।

ज्यों रत्नपूर्ण-उदयाचल शीशपै जा—फैला स्वकीय किरणें रवि-बिम्ब सोहै ॥ २९ ॥ तेरा सुवर्णसम देह विभो! सुहाता। है, श्वेत कुन्दसम चामरके उड़ेसे ॥ सोहे सुमेरगिरि, कांचन-कांतिधारी। ज्यों चन्द्रकान्तिवर निर्झर के बहेसे ॥३०॥ मोती-मनोहर लगे जिनमें, सुहाते। नीके हिमांशुसम सूरज तापहारी ॥ हैं तीन छत्र शिरपै अति रम्य तेरे। जो तीन लोक परमेश्वरता बताते ॥३१॥ गंभीर नाद भरता दशहो दिशा में। सत्संग की त्रिजग को महिमा बताता ॥ धर्मेश की कर रहा जय घोषणा है। आकाश बीच बजता यश का नगारा ॥ ३२॥ गन्धोद बिन्दुयुतमारुत की गिराई,—मन्दारकादि तरुकी कुसुमावली की—होती मनोरम महा सुरलोक से है—वर्षा, मनो तव लसे वचनावली है ॥ ३३ ॥ त्रैलोक्यकी सब प्रभामय वस्तु जीती। भामण्डल प्रबल है तव नाथ! ऐसा ॥ नाना प्रचण्ड रवितुल्य सुदीप्तिधारी—है जीतता शशि सुशोभित रात को भी ॥३४॥ है स्वर्ग मोक्ष पंथ-दर्शन की सुनेता। सद्धर्मके कथनमें पटु हैं जगोंके ॥ दिव्यध्वनि प्रकट अर्थमयी प्रभो! है,—तेरी; लहे सकल मानव बोध जिससे ॥ ३५ ॥ फूले हुए कनक के नव पद्मके से, शोभायमान नखकी किरणप्रभासे। तूने जहां पग धरे अपनेविभो! है,नीके वहां विबुध पङ्कजकल्पते हैं॥३६॥तेरी विभूति इस भांति विभो! हुई जो। सो धर्मके कथन में न हुई किसीकी। होते प्रकाशित, परन्तु तमिस्र-हर्ता-होता न तेज रवितुल्य कहीं ग्रहोंका ॥ ३७ ॥ दोनों कपोल झरते मदसे सने हैं। गुंजार खूब करती मधुपावली है ॥ ऐसा प्रमत्त गज होकर क्रुद्ध आवे—पावे न किन्तु भय आश्रित लोक तेरे ॥३८॥ नाना करीन्द्रदल-कुंभ-विदारकेकी—पृथ्वी सुरम्य जिसने मंञ्ज मोतियोंसे ॥ ऐसा मृगेंद्र तक चोट करे न उसपै—तेरे

पद्माद्रि जिसका शुभ आसरा है ॥३९॥ झालें उठें बहु उड़ें जलते अंगारे। दावाग्नि जो प्रलय-वह्नि समान भासे। संसार भस्म करने हित पास आवे, त्वत्कीर्तिगान शुभवारि उसे समावे ॥ ४० ॥ रक्ताक्ष, क्रुद्ध, पिककंठ समान काला—फुंकार सर्प फणको कर उच्च धावे ॥ निःशंक हो जन उसे पगसे उलांधे—त्वन्नाम, नागदमनी जिसके हिये हो ॥ ४१ ॥ घोड़े जहां हिनहिने गरजे गजाली—ऐसे महा प्रबल सैन्य धराधिपों को॥ जाते सभी विखर हैं तव नाम गाये—ज्यों अन्धकार उगते रवि के करों से ॥ ४२ ॥ बर्छे लगे बह रहे गजरक्तके हैं—तालाबसे, विकल हैं तरणार्थ योद्धा, जीते न जायँ रिपु, संगर बीच ऐसे-तेरे प्रभो! चरण-सेवक जीतते हैं ॥ ४३ ॥ हैं काल नृत्य करते मकरादि जन्तु—त्यों धाड़वाग्नि अति भीषण सिन्धु में है ॥ तूफान में पड़ गये जिनके जहाज—वे भी प्रभो! स्मरण से तव पार होते ॥ ४४ ॥ अत्यन्त पीड़ित जलोदर भारसे हैं,—है दुर्दशा, तज चुके निजजीविताशा; वे भी लगा तब पदाब्जरजःसुधाको—होते प्रभो! मदन-तुल्य सुरूप देही ॥ ४५ ॥ सारा शरीर जकड़ा दृढ़ सांकलोंसे,—बेड़ी पड़ें छिल गईं जिनकी सुजांघें, त्वन्नाम मंत्र जपते उन्हींके—जल्दी स्वयं झड़ पड़े सब बंधबेड़ी ॥४६॥ जो बुद्धिमान इस सुस्तव को पढ़े हैं,—होके विभीत उनसे भय भाग जाता; दावाग्नि-सिन्धु-अहिका, रण-रोगका, त्यों-पञ्चास्य मत्त गजका, सब बन्धनोंका ॥ ४७ ॥ तेरे मनोज्ञ गुणसे स्तवमालिका ये—गूंथी प्रभो! विविध वर्णसुपुष्प वाली—मैंने सभक्ति; जन कण्ठ धरे इसे जो—सो मानतुंग-सम प्राप्त करे सुलक्ष्मी ॥४८॥ *

*ये पुस्तक पृथक छपी हुई "जैन साहित्य प्रसारक कार्यालय-बम्बई" में भी मिलती है।

आलोचना पाठ।

दोहा।

वंदौं पांचों परम गुरु, चौबीसौं जिनराज।
कहुं शुद्ध आलोचना, शुद्धकरन के काज ॥ १ ॥

सखी छन्द (१४ मात्रा)।

सुनिये जिन अरज हमारी। हम दोष किये अति भारी ॥
तिनकी अब निर्वृतिकाजा। तुम शरन लही जिनराजा ॥ २ ॥
इक बे ते चउ इंद्री वा। मनरहित सहित जे जीवा।
तिनकी नहिं करुना धारी। निरदइ ह्वै घात विचारी ॥ ३ ॥
समरंभ समारंभ आरँभ। मनवचतन कीने प्रारँभ ॥
कृत कारित मोदन करिकैं। क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं ॥ ४ ॥
शत आठ जु इम भेदनतैं। अघ कीने परछेदनतैं।
तिनकी कहुं कोलौं कहानी। तुम जानत केवलज्ञानी ॥ ५ ॥
विपरीत एकांत विनयके। संशय अज्ञान कुनयके ॥
वश होय घोर अघ कीने। वचतैं नहिं जात कहीने ॥ ६ ॥
कुगुरुनकी सेवा कीनी। केवल अदयाकरि भीनी ॥
या विध मिथ्यात भ्रमायो। चहुंगतिमधि दोष उपायो ॥ ७ ॥
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी। परवनितासौं दृगजोरी ॥
आरंभपरिग्रहभीनो। पुन पाप जु याविधि कीनो ॥ ८ ॥
सपरस रसना घ्राननको। चख कान विषय सेवनको ॥
बहु करम किये मनमाने। कछु न्याय अन्याय न जाने ॥ ९ ॥
फल पंच उदंबर खाये। मधु मांस मद्य चित चाहे ॥
नहिं अष्ट मूलगुणधारे। विसन जु सेये दुखकारे ॥ १० ॥
दुइ बीस अभख जिन गाये। सो भी निशदिन भुंजाये ॥
कछु भेदाभेद न पायो। ज्यों त्यों कर उदर भरायो ॥ ११ ॥

अनंतान जु बंधी जानो। प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो॥
संज्वलन चौकड़ी गुनिये। सब भेद जु षोडस सुनिये॥ १२॥
परिहास अरति रति शोग। भय ग्लानि त्रिवेद संजोग॥
पनवीस जु भेद भये इम। इनके वश पाप किये हम॥ १३॥
निद्रावश शयन कराया। सुपनेमधि दोष लगाया॥
फिर जागि विषय वन धायो। नाना विधिविषफल खायो॥१४॥
आहार निहार विहारा। इनमें नहिं जतन विचारा॥
बिन देखा धरा उठाया। बिनशोधा भोजन खाया॥ १५॥
तब ही परमाद सतायो। बहुविध विकलप उपजायो॥
कछु सुधि बुधि नाहिं रही है। मिथ्यामति छाय गई है॥१६॥
मरजादा तुम ढिग लीनी। ताहू मैं दोष जु कीनी॥
भिन भिन अब कैसे कहिये। तुम ज्ञानविषै सब पइये॥ १७॥
हा हा मैं दुष्ट अपराधी। त्रसजीवनराशि विराधी॥
थावरकी जतन न कीनी। उरमें करुणा नहिं लीनी॥ १८॥
पृथिवी बहु खोद कराई। महलादिक जागा चिनाई।
पुन बिन गाल्यो जल ढोल्यो। पंखातै पवन विलोल्यो॥ १९॥
हा हा मैं अदयाचारी। बहु हरितकाय जु विदारी॥
या मधि जीवनिके खंदा। हम खाये धरि आनंदा॥ २०॥
हा हा मैं परमादवसाई। बिन देखेअगनि जलाई॥
तामधि जे जीव जु आये। तेहू परलोक सिधाये॥ २१॥
बीधो अन्न रात्रि पिसायो। ईंधन बिन सोधो जलायो॥
झाडू ले जागां बुहारी। चिंटियादिक जीव विदारी॥ २२॥
जल छानि जीवानी कीनी। सोहू पुनि डारि जु दीनी॥
नहिं जलथानक पहुंचाई। किरिया बिन पाप उपाई॥ २३॥
जल मलमोरिनमें गिरायो। कृमि कुल बहु घात करायो॥
नदियनि बिच चीर धुवाये। कोसनके जीव मराये॥ २४॥

अन्नादिक शोध कराई। तामैं जु जीव निकराई॥
तिनिका नहिं जतन कराया। गलियारै धूप डराया॥ २५॥
पुनि द्रव्य कमावन काज। बहु आरँभ हिंसा साज॥
किये अघ तिसनावश भारी। करुना नहिं रंच विचारी॥२६॥
इत्यादिक पाप अनंता। हम कीने श्री भगवंता॥
संतति चिरकाल उपाई। बानीतैं कहिय न जाई॥ २७॥
ताको जु उदय जब आयो। नानाविध मोहि सतायो॥
फल भुंजत जिय दुख पावै। वचतैं कैसे करि गावै॥ २८॥
तुम जानत केवल ज्ञानी। दुख दूर करो शिवथानी॥
हम तो तुम शरन लही है। जिन तारन विरद सही है॥ २९॥
जो गांवपती इक होवै। सो भी दुखिया दुख खोवै॥
तुम तीन भुवन के स्वामी। दुख मेटो अंतरजामी॥ ३०॥
द्रोपदिको चीर बढ़ायो। सीताप्रति कमल रचायो॥
अंजनसे किये अकामी। दुख मेटो अंतरजामी॥ ३१॥
मेरे अवगुन न चितारो। प्रभु अपनो विरद निहारो॥
सब दोष रहित करि स्वामी। दुख मेटहु अंतरजामी॥ ३२॥
इन्द्रादिक पदवी न चाहूं। विषयनिमैं नाहिं लुभाऊं॥
रागादिक दोष हरीजे। परमातम निजपद दीजे॥ ३३॥

दोहा।

दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोहि।
सब जीवनकै सुख बढ़े, आनंद मंगल होय॥ ३४॥
अनुभव माणिक पारखी, जौहरी आपजिनन्द।
येही वर मोहि दीजिये, चरन सरन आनंद॥ ३५॥

इति आलोचना पाठ समाप्त

निर्वाणकांड भाषा।

कविवर भैया भगवतीदासजी-रचित।

दोहा।

वीतराग वंदौं सदा, भावसहित सिरनाय।
कहूं कांड निर्वाणकी, भाषा सुगम बनाय॥ १

चौपाई १५ मात्रा।

अष्टापदआदीसुरस्वामि। वासुपूज्य चंपापुरि नामि॥ नेमिनाथस्वामी गिरनार। वंदौं भावभगति उरधार॥ २॥ चरम तीर्थंकर चरम शरीर। पावापुरि स्वामी महावीर॥ शिखरसमेद जिनेसुर बीस। भावसहित वंदौं जगदीस॥ ३॥ वरदत्तराय रु इंद मुनिंद। सायरदत्त आदि गुणवृंद॥ नगरतारवर मुनि उठकोडि। वंदौं भावसहित कर जोडि॥ ४॥ श्रीगिरनारशिखर विख्यात। कोडिबहत्तर अरु सौ सात॥ संबु प्रद्युम्न कुमर द्वै भाय। अनिरुध आदि नमूं तसु पाय॥ ५॥ रामचन्द्र के सुत द्वै वीर। लाडनरिंद आदि गुणधीर॥ पांच कोडि मुनि मुक्तिमझार। पावागिरि वंदौं निरधार॥ ६॥ पांडव तीन द्रविड राजान। आठकोडि मुनि मुकति पयान॥ श्रीशत्रुंजयगिरके सीस। भावसहित वंदौं निश दीस॥ ७॥ जे बलभद्र मुकतिमें गये। आठकोडि मुनि औरहिं भये॥ श्रीगजपंथशिखर सुविशाल। तिनके चरण नमूं तिहु काल॥ ८॥ राम हनू सुग्रीव सुडील। गवगवाख्य नील महनील॥ कोडि निन्याणवे मुक्तिपयान। तुंगीगिरि वंदौं धरि ध्यान॥ ९॥ नंग अनंग कुमार सुजान। पंचकोडि अरु अर्धप्रमान मुक्ति गये सोनागिरसीस। ते वंदौं त्रिभुवनपति ईस॥ १०॥

रावणके सुत आदि कुमार । मुक्त गये रेवातट सार ॥ कोडि पंच अरु लाख पचास । ते वंदौं धरि परम हुलास ॥ ११ ॥ रेवानदी सिद्धवरकूट । पश्चिमदिशा देह जहँ छूट ॥ द्वै चक्री दश कामकुमार । ऊठकोड़ि वंदौं भवपार ॥ १२ ॥ बड़वाणी बडनयर सुचंग । दक्षिण दिश गिरिचूल उतंग ॥ इंद्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण । ते वंदौं भवसागरतर्ण ॥ १३ ॥ सुवरणभद्र आदि मुनि चार । पावागिरिवर शिखरमझार ॥ चेलना नदी तीरके पास । मुक्ति गये वंदौं नित तास ॥ १४ ॥ फलहोडी बड़गाम अनूप । पश्चिमदिशा द्रोणगिरिरूप ॥ गुरुदत्तादि मुनी सुर जहाँ । मुक्ति गये वंदौं नित तहाँ ॥ १५ ॥ वाल महाबाल मुनि दोय । नागकुमार मिले त्रय होय ॥ श्रीअष्टापद मुक्तिमझार । ते वंदौं नित सुरतसँभार ॥ १६ ॥ अचलापुरकी दिश ईशान । तहां मेढ़गिरि नाम प्रधान ॥ साढ़ेतीन कोड़ि मुनिराय । तिनके चरन नमूं चित लाय ॥ १७ ॥ वंशस्थल वनके ढिग होय । पश्चिमदिशा कुंथगिरि सोय ॥ कुलभूषण देशभूषण नाम । तिनके चरणनि करूं प्रणाम ॥ १८ ॥ जसरथराजाके सुत कहे । देशकलिंग पांचसौ लहे ॥ कोटि शिला मुनि कोटिप्रमान । वंदन करूं जोर जुगपान ॥ १९ ॥ समवसरण श्रीपार्श्व जिनंद । रेसंदीगिरि नयनानंद ॥ वरदत्तादि पंच ऋषिराज । ते वंदौं नित धरमजिहाज ॥ २० ॥ तीन लोकके तीरथ जहाँ । नितप्रति वंदन कीजे तहाँ ॥ मन वच कायसहित सिरनाय । वंदन करहिं भविक गुणगाय ॥ २१ ॥ संवत सतरहसौ इकताल । अश्विनसुदि दशमी सुविशाल ॥ "भैया" वंदन करहिं त्रिकाल । जयनिर्वाणकांड गुणमाल ॥ २२ ॥

इति निर्वाणकांड भाषा ।

आयुकर्म ९.

निर्वाणकाण्ड गाथा ।

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो । उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥ १ ॥ वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिदा धुदकिलेसा । सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ २ ॥ वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे । आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ३ ॥ णेमिसामि पज्जुण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो । बाहत्तरिकोडीओ उज्जते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥ रामसुवा बेण्णि सुणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ । पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ५ ॥ पंडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ । सेत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ६ ॥ संते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ । गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ७ ॥ रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहणीलो । णवणवदीकोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥८॥ णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया । सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ९ ॥ दहमुहरायस्स सुवा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया । रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १० ॥ रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे । दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥ ११ ॥ वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे । इंदजीदकुंभयणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १२ ॥ पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो । चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १३ ॥ फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे । गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १४ ॥

णायकुमारमुणिंदो वालि महावालि चेव अज्झेया । अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १५ ॥ अचलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे । आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १६ ॥ वंसत्थलवरणियरे पच्छिमभायम्मि कुंथुगिरिसिहरे । कुलदेसभूपणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १७ ॥ जसरहरायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि । कोडिसिलाकोडिमुणि णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १८ ॥ पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच । रिसिंदे गिरिसिहरे णिव्वागया णमो तेसिं ॥ १९ ॥

पंच कल्याणक पाठ ।

स्वर्गीय कविवर पं० रूपचन्दजी पांडे-कृत

गर्भ कल्याणक

पण विवि पंच परम गुरु, गुरु जिन शासनो ।
सकल सिद्धि दातार सु, विघन विनासनो ॥
शारद अरु गुरु गौतम, सुमति प्रकासनो ।
मंगल करहिं चउ-संघ, सुपाप पणासनो ॥

पापै पणासन गुणहि गरुवा, दोष अष्टादश रहे ।
धरि ध्यान कर्म विनाशि केवल, ज्ञान अविचल जिन लहे ॥
प्रभु पंचकल्याणक—विराजत, सकल सुर नर ध्यावहीं ।
त्रैलोक्यनाथ सु देव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ १ ॥

जाके गरभकल्याणक, धनपति आइयो।
अवधिज्ञान—परवान, सु इंद्र पठाइयो॥
रचि नव बारह योजन, नगरि सुहावनी।
कनकरयणमणिमंडित, मंदिर अति बनी॥

अति बनी पोरि पगारि परिखा, सुवन उपवन सोहिए।
नर नारि सुन्दर चतुरभेख सु. देख जनमन मोहिए॥
तहां जनकगृह छह मास प्रथमहिं, रतनधारा बरषियो।
पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा, करहिं सब विधि हरषियो॥२

सुरकुंजरसम कुंजर धवल धुरंधरो।
केहरि केशरशोभित, नखशिखसुंदरो॥

कमलाकलशन्हवन, दोय दाम सुहावनी।
रवि शशि मंडल मधुर, मीन जुग पावनी॥
पावनी कनक घट युगम पूरण, कमलकलित सरोवरो।
कल्लोलमालाकुलित सागर, सिंहपीठ मनोहरो॥
रमणीक अमरविमान फणिपति,—भुवन भुवि छविछाजए।
रुचि रतनराशि दिपंत दहन सु, तेजपुंज विराजए॥ ३॥

ये सखि सोलह सुपने, सूती सयनमें।
देखे माय मनोहर, पच्छिम—रयनमें॥

उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकासियो।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहिं भासियो॥

भासियो फल तिहिं चिंति दंपति, परम आनन्दित भए।
छहमास परि नवमास पुनि तहँ, रयन दिन सुखसुं गए॥
गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ ४॥

श्री जन्म कल्याणक।

मतिश्रुतअवधिविराजित, जिन जब जनमियो।
तिहूंलोक भयो छोभित, सुरगण भरमियो।
कल्पवासिघर घंट, अनाहद बज्जियो।
जोतिषघर हरिनाद, सहज गल गज्जियो॥
गज्जियो सहज हि संख भावन,—भुवन सवद सुहावने।
विंतरनिलय पटु पटहिं वज्जिय, कहत महिमा क्यों वने॥
कंपित सुरासन अवधिवल जिन,—जनम निहचै जानियो।
धनराज तब गजराज माया,—मयी निरमय आनियो॥ ५॥
योजन लाख गयंद, वदन—सौ निरमए।
वदन वदन वसु दन्त, दन्त सर संठए॥
सर सर सौ—पणवीस कमलिनी छाजहीं।
कमलिनि कमलिनि कमल, पचीस विराजहीं॥
राजहीं कमलिनि कमल अठोतर,—सौ मनोहर दल वने।
दल दलहिं अपछर नटहिं नवरस, हावभाव सुहावने॥
मणि कनककंकण वर विचित्र, सु अमरमंडप सोहये।
घन घंट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये॥ ६॥
तिहिं करी हरि चढ़ि आयउ, सुरपरि वारियो।
पुरहिं प्रदच्छना दॆत सु, जिन जयकारियो॥
गुप्त जाय जिन-जननिहिं, सुखनिद्रा रची।
मायामयी शिशु राखि तौ, जिन आन्यो सची॥
आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन त्रिपति न हूजिये।
तव परमहरषितहृदय हरिने, सहस लोचन पूजिये॥
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इंद्र, उछंग धरि प्रभु लीनऊ।
ईशानइन्द्र सु चंदछवि शिर, छत्र प्रभु के दीनऊ॥ ७॥

सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुहि ढारहीं ।
शेष शक्र जयकार, सबद उच्चारहीं ॥
उच्छ्वसहित चतुर्विधि, सुर हरषित भये ।
योजन सहस निन्याणवे, गगन उलंधि गए ॥
लंघि गये सुरगिर जहाँ पांडुक,-वन विचित्र विराजही ।
पांडुकशिला तहाँ अर्द्धचन्द्र समान, मणि छवि छाजही ॥
योजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंची गणी ।
वर अष्ट मंगल कनक कलशनि, सिंहपीठ सुहावनी ॥ ८ ॥

रचि मणिमंडप शोभित, मध्य सिंहासनो ।
थाप्यो पूरव-मुख तहाँ, प्रभु कमलासनो ॥
वाजहिं ताल मृदंग, वेणु वीणा घने ।
दुंदुभिप्रमुख मधुरधुनि, और जु वाजने ॥
वाजने बाजहिं सची सब मिलि, धवल मंगल गावहीं ।
कर करहिं नृत्य सुरांगना सब, देव कौतुक धावहीं ॥
भरि छीरसागर-जल जु हाथहिं, हाथ सुर गिरि ल्यावहीं ।
सौधर्म अरु ऐशानइन्द्र सु, कलश ले प्रभु न्हावहीं ॥ ६ ॥

वदन-उदर-अवगाह, कलशगत जानिये ।
एक चार वसु योजन, मान प्रमानिये ॥
सहस-अठोतर कलशा, प्रभुके सिर ढरै ।
पुनि शृंगारप्रमुख आ, - चार सबै करै ॥
करि प्रगट प्रभु महिमामहोच्छव, आनि पुनि मातहिं दयो ।
धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो ॥
जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।
भन 'रूपचंद्र' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ १० ॥

श्री तप कल्याणक ।

श्रमजलरहित शरीर, सदा सब मलरहित ।
छीर-वरन वर रुधिर, प्रथमआकृति लहित ॥
प्रथम सारसंहनन, सुरूप विराजहीं ।
सहज-सुगंध सुलच्छन,-मंडित छाजहीं ॥
छाजहिं अतुलवल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने ।
दश सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने ॥
आबाल काल त्रिलोकपति मन, रुचिर उचित जु नित नये ।
अमरोपुनीत पुनीत अनुपम सकल भोग विभोगये ॥११॥
भवतन-भोग-विरत्त, कदाचित चिन्तए ।
धन योवन पिय पुत्त, कलत्त अनित्तए ॥
कोइ न शरन मरनदिन; दुख चहुंगति भर्यो ।
सुख दुख एकहि भोगत, जिय विधिवश पर्यो ॥
पर्यो विधि वश आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो ।
तनअशुचिपरतें होय आस्रव, परिहरैतो संवरो ॥
निर्जरा तपबल होय समकित,—विन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो ।
दुर्लभ विवेक विना न कबहूं, परम धरमविषै रम्यो ॥ १२ ॥
ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया ।
लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया ॥
कुसुमांजलि दे चरण, कमल शिरनाइये ।
स्वयंबुद्ध प्रभु थुति करि, तिन समुझाइये ॥
समुझाय प्रभु ते गये निजपद, पुनि महोच्छव हरि कियो ।
रुचिरुचिर चित्र विचित्र शिविका, कर सुनंदन वन लियो ॥
तहँ पंचमूठी लोंच कीनों, प्रथम सिद्धनि नुति करी ।
मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर, सकल परिग्रह परिहरी ॥ १३ ॥

मणिमयभाजन केश, परिट्ठिय सुरपती।
छीर—समुद्र-जल खिपिकरि, गयो अमरावती॥
तप संजमबल प्रभुको, मनपरजय भयो।
मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो॥
गयो कछु तहँ काल तपबल, रिद्धि वसु विधि सिद्धया।
जसु धर्मध्यानबलेन क्षयगय, सप्त प्रकृतिप्रसिद्धिया॥
खिपि सातवेंगुण जतन विन तहँ, तीन प्रकृति जु बुधि बढ़े।
करि करण तीन प्रथम शुकलबल, खिपकश्रेणी प्रभुचढे॥ १४॥
प्रकृति छतीस नवें गुण—थान विनासिया।
दशमें सूच्छमलोभ,—प्रकृति तहँ नासिया॥
शुकल ध्यान पद दूजो, पुनि प्रभु पूरियो।
बारहमें—गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियो॥
चूरियो त्रेसठ प्रकृति इहविधि, घातिया कर्महतणो।
तप कियो ध्यानप्रर्यंत बारह विधि त्रिलोकशिरोमणी॥
निःक्रमण कल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भन 'रुपचंद्र' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ १५॥

श्री ज्ञानकल्याणक।

तेहरमें गुण—थान, संयोगि जिनेसुरो।
अनँतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो।
समवसरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो।
आगम जुगति प्रमाण, गगनतल परिठयो॥
परिठयो चित्रविचित्र मणिमय, सभामंडप सोहये।
तिहिं मध्य बारह बने कोठे, बनक सुरनर मोहये।
मुनि कल्पवासिनि अरजिका पुनि, ज्योति·भौम·भुवन-त्रिया।
पुनि भवन व्यंतर नभग सुर नर, पशुनि कोठे बैठिया॥ १६॥

मध्यप्रदेश तीन, मणिपीठ तहां बने।
गंधकुटी सिंहासन, कमल सुहावने॥
तीन छत्र सिर शोभित, त्रिभुवन मोहए।
अंतरीक्ष कमलासन, प्रभु तन सोहए॥

सोहए चौसठि चमर ढुरत, अशोकतरु तल छाजए।
पुन दिव्यधुनि प्रतिशब्द जुत तहँ, देवदुंदुभि बाजए॥
सुरपुहुपवृष्टि सुप्रभामंडल, कोटि रवि छवि लाजए।
इम अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूत विराजए॥ १७॥

दुइसै योजन मान, सुभिच्छ चहूं दिशी।
गगन गमन अरु प्राणि,-वध नहिं अहनिशी॥
निरुपसर्ग निराहार, सदा जगदीसए।
आनन चार चहूंदिशि, शोभित दीसए॥

दीसे अशेष विशेष विद्या, विभव वर ईसुरपनो।
छायाविवर्जित शुद्ध फटिक, समान तन प्रभुको बनो॥
नहिं नयन पलक पतन कदाचित, केश नख सम छाजहीं।
ये घातियाछ्यजनित अतिशय, दश विचित्र विराजहीं॥ १८॥

सकल अरथमय मागधि, भाषा जानिये।
सकल जीवगत मैत्री,--भाव बखानिये॥
सकल ऋतुज फलफूल, वनस्पति मन हरै।
दर्पणसम मनि अवनि, पवन गति अनुसरै॥

अनुसरै परमानंद सबको, नारि नर जे सेवता।
योजन प्रमाण धरा सुमार्जहिं, जहाँ मारुत देवता॥
पुनि करहिं मेघकुमार गंधो-दक सुवृष्टि सुहावनी।
पदकमलतर सुर खिपहिं, कमल सु, धरणि शशिशोभा बनी॥१९॥

अमल गगन तल अरु दिशि तहँ अनुहारहीं।
चतुरनिकाय देवगण, जय जयकारहीं॥
धर्मचक्र चले आगे, रवि जहँ लाजहीं।
पुनि भृंगार-प्रमुख वसु, मंगल राजहीं॥
राजहीं चौदह चारु अतिशय, देवरचित सुहावने।
जिनराज केवलज्ञानमहिमा, अवर कहत कहा बने॥
तब इंद्र आनि कियौ महोच्छव, सभा शोभित अति बनी।
धर्मोपदेश दियो तहां, उच्छरिय वानी जिनतनी॥ २०॥
क्षुधा तृषा अरु राग द्वेष असुहावने॥
जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने॥
रोग शोक भय विस्मय, अरु निद्रा घणी।
खेद स्वेद मद मोह, अरति चिंता गणी॥
गणीये अठारह दोष तिनकरि, रहित देव निरंजनो।
नव परमकेवललब्धिमंडित, शिवरमणी--मनरंजनो॥
श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भन 'रूपचन्द्र' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ २१॥

श्री निर्वाण कल्याणक

केवलदृष्टि चराचर, देख्यौं जारिसो।
भविजनप्रति उपदेश्यो, जिनवर तारिसो॥
भवभयभीत महा जन, शरणै आइया।
रत्नत्रयलच्छन शिवपंथनि लाइया॥
लाइया पंथ जु भव्य पुनि प्रभु, तृतिय सुकल जू पूरियो।
तजि तेरहौं गुणथान योग अयोगपथपग धारियो॥

पुनि चौदहैं सुकलवल, बहत्तर तेरह हतो।
इमि घाति वसुविधि कर्म पहुंच्यो, समयमें पंचमगतो ॥ २२ ॥
लोकशिखर तनुवात,—वलयमहँ संठियो।
धर्मद्रव्यविन गमन न, जिहिं आगे कियो॥
मयनरहित मूषोदर, अंवर जारिसो।
किमपि हीन निजतनुते, भयौ प्रभु तारिसो॥
तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थ पर्जय क्षणक्षयी।
निश्चयनयेन अनंतगुण विवहार, नय वसु गुणमयी॥
वस्तू स्वभाव विभावविरहित, शुद्ध परणति परिणये।
चिद्रूप परमानंदमंदिर, सिद्ध परमातम भये॥ २३॥
तनुपरमाणू दामिनिपर, सब खिर गये।
रहे शेष नखकेशरूप, जे परिणये॥
तब हरिप्रमुख चतुरविधि, सुरगण शुभ सच्यो।
मायामई नखकेशरहित, जिनतनु रच्यो॥
रचि अगर चंदनप्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो।
पदपतित अगनिकुमारमुकुटानल, सुविधि संस्कारियो॥
निर्वाणकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भन 'रूपचंद्र, सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ २४

मंगल गीत।

मैं मतिहीन भगतिवश, भावन भाइया।
मंगलगीतप्रबंध सु, जिनगुण गाइया॥
जो नर सुनहिं वखानहिं, सुर धरि गावहीं।
मनवांछित फल सो नर, निहचै पावहीं॥

पावहीं अष्टौ सिद्धि नवनिधि, मनप्रतीति जु आनहीं।
भ्रमभाव छूटैं सकल मन के, जिन स्वरूप सो जानहीं॥
पुनि हरहिं पातक टरहि विघन, सु होय मंगल नित नये।
भणि रूपचंद्र त्रिलोकपति जिन-देव चउसंघहिं जये॥ २५॥

छह ढाला।

श्रीयुत पंडित दौलतरामजी कृत.

सोरठा।

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिके॥

प्रथमढाल—चौपाई छन्द १५ मात्रा।

जे त्रिभुवनमें जीव अनन्त। सुख चाहें दुखतें भयवन्त॥
तातें दुखहारी सुखकार। कहैं सीख गुरु करुणाधार॥ १॥
ताहि सुनो भवि मनथिर आन। जो चाहो अपनो कल्यान।
मोह महा मद पियो अनादि। भूल आपको भरमत बादि॥ २॥
तास भ्रमणकी है बहु कथा। पै कछु कहूं कही मुनि यथा॥
काल अनन्त निगोद मँझार। बीतो एकेन्द्री तन धार॥ ३॥
एक श्वासमें अठदशवार। जन्मो मरो भरो दुख भार॥
निकस भूमि जल पावक भयो। पवन प्रत्येक वनस्पति थयो॥४
दुर्लभ लहिये चिन्तामणी। त्यों पर्याय लही त्रस तणी॥
लट पिपील अलि आदि शरीर। धरधर मरो सही बहुपीर॥५॥

कबहूं पंचइन्द्री पशु भयो। मन विन निपट अज्ञानी थयो ॥
सिंहादिक सेनी ह्वै क्रूर। निवल पशू हत खाए भूर ॥ ६ ॥
कबहूं आप भयो बलहीन। सबलनकर खायो अति दीन ॥
छेदन भेदन भूखरु प्यास। भार वहनहिम आतप त्रास ॥ ७ ॥
वध बंधन आदिक दुख घणे। कोटि जीभकर जात न भणे ॥
अतिसंक्लेश भावतें मरो। घोर श्वभ्र सागर में परो ॥ ८ ॥
तहाँ भूमि परसत दुख इसो। बीछू सहस डसे नहिं तिसो ॥
तहाँ राध शोणित वाहिनी। क्रम कुल कलित देह दाहनी ॥९॥
सेमलतरु जुतदल असिपत्र। असि ज्यों देह विदारैं तत्र ॥
मेरुसमान लोह गलिजाय। ऐसी शीत उष्णता थाय ॥ १० ॥
तिल तिल करैं देह के खंड। असुर भिड़ावैं दुष्ट प्रचंड ॥
सिंधु नीरतें प्यास न जाय। तौ पण एक न बूंद लहाय ॥११॥
तीन लोक को नाज जो खाय। मिटै न भूख कणा न लहाय ॥
ये दुख बहु सागरलों सहै। करमयोगतें नरगति लहै ॥ १२ ॥
जननी उदर बसो नवमास, अंग सकुचतैं पाई त्रास ॥
निकसत जे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर ॥१३॥
बालकपन में ज्ञान न लह्यो। तरुण समय तरुणी रति रह्यो ॥
अर्द्ध मृतक सम बूढ़ापनो। कैसे रूप लखै आपनो ॥ १४ ॥
कभी अकाम निर्जरा करे। भवनत्रिक में सुर तन धरै ॥
विषयचाह दावानल दह्यो। मरत विलाप करत दुःखसह्यो ॥१५॥
जो विमानवासी हू थाय। सम्यक्दर्शनबिन दुख पाय ॥
तहँते चय थावर तन धरै। यों परिवर्तन पूरे करै ॥ १६ ॥

द्वितीय ढाल—पद्धरीछंद १५ मात्रा।

ऐसे मिथ्या दृग ज्ञानचर्ण। वश भ्रमत भरत दुःख जन्म मर्ण ॥
तातें इनको तजिये सुजान। सुन तिन संक्षेप कहूं बखान ॥ १ ॥

जीवादि प्रयोजन भूततत्त्व। सरधै तिन माहिं विपर्ययत्व॥
चेतन को है उपयोग रूप। विन मूरति चिन्मूरति अनूप॥ २॥
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल। इनतैं न्यारी है जीवचाल॥
ताकूं न जान विपरीत मान। करि करै देह में निजपिछान॥३॥
मैं सुखी दुखी मैं रंक राव। मेरो धन गृह गोधन प्रभाव॥
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन। बेरूप सुभग मूरख प्रवीन॥ ४॥
तन उपजत अपनी उपज जान। तन नशत आपको नाश मान।
रागादि प्रगट ये दुःख दैन। तिनही को सेवत गिनत चैन॥५॥
शुभ अशुभ बंधके फल मझार। रति अरति करै निजपद विसार।
आतम हित हेतु विराग ज्ञान। ते लखे आपकूं कष्ट दान॥६॥
रोके न चाह निज शक्ति खोय। शिवरूप निराकुलता न जोय॥
याहि प्रतीत युत कछुक ज्ञान। सो दुखदायक अज्ञान जान॥७॥
इन जुत विषयनिमें जो प्रवृत्त। ताकूं जानो मिथ्या चरित्त॥
यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह। अब जे गृहीत सुनिये सुतेह॥८॥
जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव। पोखैं चिर दर्शन मोह एव॥
अंतर रागादिक धरैं जेह। बाहर धन अंबरतैं सनेह॥ ९॥
धारै कुलिंग लहि महत भाव। ते कुगुरु जन्म जल उपलनाव।
जे राग द्वेष मलकरि मलीन। वनिता गदादि जुत चिन्ह चीन्ह॥
तेहैं कुदेव तिनकी जु सेव। शठ करत न तिन भवभ्रमणछेव।
रागादि भाव हिंसा समेत। दर्वित त्रसथावर मरणकेत॥११॥
जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म। तिन सरधै जीव लहै अशर्म।
याकूं ग्रहीत मिथ्यात जान। अब सुन ग्रहीत जो है अज्ञान॥१२॥
एकान्त वाद—दूषित समस्त। विषयादिक पोषक अप्रशस्त॥
कपिलादि रचित श्रुत का भ्यास। सोहै कुबोध बहु देन त्रास॥
जो ख्यातिलाभपूजादि चाह। धर करत विविध विधदेहदाह।
आतम अनातमके ज्ञान हीन। जे जे करनी तन करन छीन॥१४॥

ते सब मिथ्या चारित्र त्याग । अब आतम के हित पंथ लाग ॥
जगजाल भ्रमणकोदेय त्याग । अबदौलत निजआतमसुपाग॥१५॥

तृतीय ढाल नरेन्द्र २८ मात्रा ।

आतम को हित है सुख सो सुख आकुलता विन कहिये ।
आकुलता शिव मांहि न तातैं, शिव मग लाग्यो चहिये ॥
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित शिव, मग सो दुविधि विचारो ।
जो सत्यारथ रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो ॥१॥
परद्रव्यन तैं भिन्न आप में, रुचि सम्यक्त भला है ।
आप रूप को ज्ञानपनो सो सम्यक् ज्ञान कला है ॥
आप रूपमें लीन रहे थिर, सम्यक् चारित सोई ।
अब व्यवहार मोक्ष मग सुनिये, हेतु नियत को होई ॥२॥
जीव अजीव तत्त्व अरु आश्रव, बंधरु संबर जानो ।
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्यों को त्यों सरधानो ॥
है सोई समकित विवहारी, अब इन रूप बखानों ।
तिनको सुन सामान्य विशेषै, दृढ़ प्रतीति उर आनो ॥ ३ ॥
बहिरातम अन्तरआतम पर—मातमजीव त्रिधा हैं ।
देह जीव को एक गिने बहि,—रातम तत्त्व मुधा है ॥
उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अन्तर आतम ज्ञानी ।
द्विविधसंग विन शुध उपयोगी, मुन उत्तम निज ध्यानी ॥४॥
मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रती आगारी ।
जघन कहे अविरत सम दृष्टी, तीनों शिवमग चारी ।
सकल निकल परमातम द्वैविधि तिनमें घाति निवारी ।
श्री अरहंत सकल परमातम, लोकालोक निहारी ॥ ५ ॥
ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्म मल, वर्जित सिद्ध महंता ।
ते हैं निकल अमल परमातम, भोगैं शर्म अनन्ता ॥

बहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर आतम हूजे।
परमातमको ध्याय निरन्तर, जो नित आनँद पूजे॥ ६॥
चेतनता विन सो अजीव है, पँच भेद ताके हैं।
पुद्गल पंचवरण रस गंधदो फरसवसु जाके हैं॥
जिय पुद्गलको चलन सहाई, धर्म द्रव्य अनरूपी।
तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन विन मूर्ति निरूपी॥ ७॥
सकलद्रव्यको वास जासमें, सो आकाश पिछानो।
नियत वर्तना निशिदिन सो व्यो—हार काल परिमानो॥
यों अजीव अब आश्रव सुनिये, मनवच काय त्रियोगा।
मिथ्या अविरत अरु कषाय पर—माद सहित उपयोगा॥ ८॥
येही आतमको दुखकारण, तातें इनको तजिये।
जीव प्रवेश बँधे विधिसो सो, बंधन कबहुँ न सजिये॥
शमदमतें जो कर्म न आवै, सो संवर आदरिये।
तप बलतें विधि झरन निरजरा, ताहिं सदा आचरिये॥ ९॥
सकलकर्मतें रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी।
इहिविधि जो सरधातत्वनकी, सो समकित व्यवहारी॥
देव जिनेन्द्र गुरू परिग्रह विन, धर्मदयायुत सारो।
यहु मान समकितको कारण, अष्ट अंग जुत धारो॥ १०॥
वसुमद टारि निवारि त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो।
शंकादिक वसु दोष विना सं,—वेगादिक चित पागो॥
अष्टअंग अरु दोष पचीसों अब संक्षेपै कहिये।
विन जाने तें दोष गुननको, कैसे तजिये गहिये॥ ११॥
जिन वचमें शंका न धार वृष, भवसुख वांछा भानै।
मुनितन देख मलिन न घिनावै, तत्त्वकुतत्त्व पिछानै॥
निजगुण अरु पर औगुण ढाँकै, वा निजधर्म बढ़ावै।
कामादिक कर वृषतें चिगते, निज परकों सु दिढ़ावै॥ १२॥

धर्मीसे गउ वच्छ प्रीति सम, कर जिन धर्म दिपावै ।
इन गुणतैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतत खिपावै ॥
पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै ।
मद न रूपको मद न ज्ञानको, धनवलको मद भानै ॥ १३ ॥

तप को मद न मद जु प्रभुता को, करै न सो निज जानै ।
मद धारै तो यही दोष वसु, समकितकूं मल ठानै ॥
कुगुरु कुदेव कुवृष सेवककी, नहिं प्रशंस उचरे हैं ।
जिन मुनि जिन श्रुति विन कुगुरादिक, तिन्हें न नमन करे है ॥

दोष रहित गुण सहित सुधी जे, सम्यक्दर्श सजे हैं ।
चरित मोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजे हैं ॥
गेहीपै गृहमें न रचै ज्यों, जलमें भिन्न कमल है ।
नगरनारिको प्यार यथा का—दैमें हेम अमल है ॥ १५ ॥

प्रथम नरक विन षटभू ज्योतिष, वान भवन सब नारी ।
थावर विकलत्रय पशु में नहिं, उपजत सम्यक् धारी ॥
तीनलोक तिहुँकाल माहि नहि, दर्शनसो सुखकारी ।
सकल धरमको मूल यही इस, विन करणी दुखकारी ॥ १६ ॥

मोक्षमहलकी परथम सीढी, याविन ज्ञान चरित्रा ।
सम्यकता न लहैं सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा ॥
दौल समझ सुन चेत सयाने, कालवृथा मत खोवै ।
यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहि होवै ॥१७॥

अथ चतुर्थ ढाल—दोहा ।

सम्यक् श्रद्धा धार पुनि, सेवहु सम्यक् ज्ञान ।
स्वपर अर्थ बहु धर्मयुत, जो प्रगटावन भान ॥

रोला छन्द–२४ मात्रा।

सम्यक साथे ज्ञान, होयपै भिन्न अराधो।
लक्षण श्रद्धा जान, दुहूमें भेद अबाधो॥
सम्यक कारण जान, ज्ञान कारज हैं सोई।
युगपत होतेभी, प्रकाश दीपकतैं होई॥ १॥
तास भेद दो हैं, परोक्ष परतक्ष तिन माहीं।
मतिश्रुत होय परोक्ष, अक्ष मनतैं उपजाहीं॥
अवधि ज्ञान मन पर्य्यय, दोहै देश प्रतक्षा।
द्रव्यक्षेत्र परिमाण, लिये जानै जिय स्वच्छा॥ २॥
सकल द्रव्य के गुण, अनंत पर्याय अनंता।
जानैं एकै काल, प्रगट केवल भगवन्ता॥
ज्ञान समान न आन, जगत में सुख को कारण।
इहि परमामृत जन्म, जरामृत रोग निवारण॥ ३॥
कोटिजन्म तप तपै, ज्ञान विन कर्म करैं जे।
ज्ञानी के छिन मांहि, त्रिगुप्तिसैं सहज टरैं ते॥
मुनिव्रत धार अनन्त, वार ग्रीवक उपजायो।
पै निज आतम ज्ञान विना सुखलेश न पायो॥ ४॥
तातैं जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजै।
संशय विभ्रम मोह, त्याग आपो लख लीजै॥
यह मनुष्य पर्याय, सुकुल सुनके जिन वानी।
इहिविधि गए न मिलैं, सुमणि ज्यों उदधि समानी॥५॥
धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवै।
ज्ञान आपको रूप, भये फिर अचल रहावै॥
तास ज्ञान को कारण, स्वपर विवेक बखानो।
कोटि उपाय वनाय, भव्य ताको उर आनो॥ ६॥

जे पूरव शिव गए, जाहिं अब आगे जै हैं।
सो सब महिमा ज्ञान, तणी मुनिनाथ कहे हैं ॥
विषय चाह दवदाह, जगत जन अरण दझावै ।
तास उपाय न आन, ज्ञान घन घान बुझावैं ॥ ७ ॥
पुण्य पाप फल माहिं, हरष विलखो मतभाई ।
यह पुद्गल पर्याय, उपज विनशै फिर थाई ॥
लाख बात की बात, यही निश्चय उर लाओ ।
तोरि सकल जगधंध, फंद नित आतम ध्याओ ॥ ८ ॥
सम्यग्ज्ञानी होय, बहुरि दृढ़ चारित लीजै ।
एकदेश अरु सकल, देश तसु भेद कहीजै ॥
त्रसहिंसा को त्याग, वृथा थावर न संघारै ।
पर बधकार कठोर, निन्द्य नहिं वयन उचारै ॥ ९ ॥
जलमृतिका विन और, नाहिं कछु गहै अदत्ता ।
निजवनिता विन और, नारिसों रहै विरत्ता ॥
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै ।
दसदिश गमन प्रमाण, ठान तसु सीम न नाखै ॥ १० ॥
ताहूमें फिर ग्राम, गली ग्रह वाग बजारा ।
गमनागमन प्रमाण, ठान अन सकल निवारा ॥
काहूकी धनहानि, किसी जयहार न चिंतै ।
देय न सो उपदेश, होय अघ वनज कृषीतैं ॥ ११ ॥
करप्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।
असि धनु हल हिंसोप, करण नहि दे यश लाधै ॥
राग द्वेष करतार, कथा कबहूं न सुनीजै ।
औरहु अनरथ दंड, हेतु अघ तिन्हैं न कीजै ॥ १२ ॥
धर उर समता भाव, सदा सामायक करिये ।
परव चतुष्टै मांहि पाप तज प्रोषध धरिये ॥

भोग और उपभोग, नियमकर ममत निवारै।
मुनिको भोजन देय, फेर निज करहि अहारै॥ १३॥
बारह व्रतके अतीचार पन पन न लगावै।
मरण समै संन्यास, धार तसु दोष नशावै॥
यों श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावै।
तहँते चय नर जन्म, पाय मुनि हो शिव जावै॥ १४॥

पंचम ढाल—मनोहर छन्द १४ मात्रा।

मुनि सकल व्रती बड भागी। भवभोगनतैं वैरागी॥
वैराग्य उपावन माई। चिंतै अनुप्रेक्षा भाई॥ १॥
इन चिन्तत समरस जागै। जिमि ज्वलन पवनके लागै॥
जबही जिय आतम जानै। तबही जिय शिवसुख ठानै॥ २॥
जोबन गृह गोधन नारी। हय गय जन आज्ञाकारी॥
इन्द्रिय भोग छिन थाई। सुरधनु चपला चपलाई॥ ३॥
सुर असुर खगाधिप जेते। मृग ज्यों हरि काल दले ते॥
मणिमंत्र तंत्र बहु होई। मरते न बचावे कोई॥ ४॥
चहुँगति दुख जीव भरे हैं। परवर्तन पंच करे हैं॥
सब विधि संसार असारा। तामें सुख नाहिं लगारा॥ ५॥
शुभ अशुभ करम फल जेते। भोगे जिय एकै तेते।
सुत दारा होय न सीरी। सब स्वारथके हैं भीरी॥ ६॥
जलपय ज्यों जियतन मेला। पैभिन्न २ नहिं मेला॥
जो प्रगट जुदे धन धामा। क्यों ह्वैं इकमिल सुत रामा॥ ७॥
पल रुधिर राध मल थैली। कीकश वसादि तैं मैली॥
नव द्वार बहैं घिनकारी। अस देह करै किम यारी॥ ८॥
जे योगनकी चपलाई। तातैं होय आस्रव भाई॥

आश्रव दुखकार घनेरे। बुद्धिवंत तिन्हें निरवेरे ॥ ९ ॥
जिन पुण्य पाप नहिं कीना। आतम अनुभव चित दीना॥
तिनहीं विधि आवत रोके। संवर लहि सुख अवलोके॥ १० ॥
निज काल पाय विधि भरना। तासों निजकाज न सरना॥
तप कर जो कर्म खपावै। सोई शिवसुख दरसावै ॥ ११ ॥
किनहू न करो न धरै को। षट द्रव्यमयी न हरै को॥
सो लोकमांहि विन समता। दुख सहै जीव नित भ्रमता॥
अंतिम ग्रीवकलोंकी हद। पायो अनंत विरियाँ पद॥
पर सम्यक्ज्ञान न लाधो। दुर्लभ निजमें मुनि साधो॥ १३ ॥
जे भाव मोहतैं न्यारे। दृगज्ञान व्रतादिक सारे॥
सोधर्म जबै जिय धारै। तबही सुख अचल निहारे॥ १४ ॥
सो धर्म मुनिनकर धरिये। तिनकी करतूती उचरिये॥
ताकूं सुनिये भवि प्राणी। अपनी अनुभूति पिछानी॥ १५ ॥

षष्ठम ढाल—हरिगीतिका, छंद २८ मात्रा।

षट काय जीवन हनन तैं सब, विध दरवहिंसा टरी।
रागादि भाव निवारतैं, हिंसा न भावित अवतरी॥
जिनके न लेश मृषा न जल मृण, हू विना दीयो गहैं।
अठदशसहस विधि शीलधर, चिद्ब्रह्ममें नित रमि रहैं॥ १ ॥
अंतरचतुर्दश भेद बाहर, संग दशधा तैं टलैं।
परमाद तजि चौकरमही लखि, समिति ईर्यातैं चलैं॥
जग सु हितकर सब अहितहर, श्रुति सुखद सब संशय हरैं।
भ्रम रोग हर जिनके वचन मुख चन्द्रतैं अमृत भरैं॥ २॥
छालीस दोष विना सुकुल, श्रावक तणे घर अशनको।
लैं तप बढ़ावन हेत नहिं तन, पोषतें तज रसनको॥

शुचि ज्ञान संयम उपकरण लखि, के गहैं लखिके धरैं।
निर्जंतु थान विलोक तन मल, मूत्र श्लेपम परिहरैं॥ ३॥
सम्यक्प्रकार निरोध मन वच, काय आतम ध्यावते।
तिन सुथिर मुद्रा देखि मृगगण, उपल खाज खुजावते॥
रस, रूप, गंध तथा परस अरु, शब्द शुभ असुहावने।
तिनमें न राग विरोध पंच, इन्द्रीजयन पद पावने॥ ४॥
समता सम्हारैं थुति उचारैं, वन्दना जिन देवको।
नित करैं श्रुति रति करैं प्रतिक्रम, तजै तन अहमेव को॥
जिनके न न्हौन न दंतधोवन. लेश अंबर आवरण।
भूमाहिं पिछली रयनि में कछु, शयन एकासन करण॥ ५॥
इकवार लेत आहार दिन में, खड़े अलप निज पान में।
कचलोच करत न डरत परिषह. सौं लगे निज ध्यान में॥
अरि मित्र महल मसान कंचन, कांच निन्दन थुतिकरण।
अर्घावतारण असिप्रहारण, में सदा समता धरण॥ ६॥
तप तपें द्वादश धरें वृष दश, रतनत्रय सेवैं सदा।
मुनि साथ में वा एक विचरैं, चहैं नहिं भवसुख कदा॥
यों है सकल संयम चरित सुनि, ये स्वरूपाचरण अव।
जिस होत प्रगटै आपनी निधि, मिटै परकी प्रवृति सब॥ ७॥
जिन परम पैनी सुबुधि छैनी, डार अंतर भेदिया।
वरणादि अरु रागादि तैं, निज भावको न्यारा किया॥
निजमाहिं निजके हेत निजकर, आपको आपै गह्यो।
गुणगणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मँझार कुछ भेद न रह्यो॥ ८॥
जहँ ध्यान ध्याता ध्येय को न विकल्प, वच भेद न जहाँ।
चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहाँ॥

तीनो अभिन्न अखिन्न शुध, उपयोग की निश्चल दशा।
प्रगटी जहाँ दृगज्ञानव्रह्म ये, तीन धा एकै लशा ॥ ६ ॥
परमाण नय निक्षेपको न उद्योत, अनुभवमें दिखै ।
दृग-ज्ञान सुख-वल मय सदा नहि, आन भाव जो मो विखैं ॥
मैं साध्य साधक मैं अवाधक, कर्म अरतसु फल नितैं ॥
चितपिंड चंद अखंड सुगुण करंड, च्युत पुनि कलनितैं ॥१०॥
यों चिन्त्य निजमें थिर भए तिन, अकथ जो आनन्द लह्यो ।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमिन्द्र कै नाहीं कह्यो ॥
तबही शुकल ध्यानाग्नि कर चउ, घात विधि कानन दह्यो ।
सब लख्यो केवल ज्ञान करि भवि, लोककूं शिवगम कह्यो ॥११॥
पुनि घाति शेष अघात विधि, छिनमांहि अष्टम भू बसै ।
वसु कर्म विनसै सगुण वसु, सम्यक्त आदिक सब लसै ॥
संसार खार अपार पारा, वार तरि तीरहिं गये ।
अविकार अकल अरूप शुध, चिद्रूप अविनाशी भये ॥ १२ ॥
निजमांहिं लोक अलोक गुण, पर्याय प्रतिबिम्बित थये ।
रहि हैं अनन्तानन्त काल-यथा तथा शिव परणये ॥
धनि धन्य हैं जे जीव नर भव, पाय यह कारज किया ।
तिनही अनादी भ्रमण पंच, प्रकार तज बर सुख लिया ॥१३॥
मुख्योपचार दुभेद यों बड़, भाग रत्नत्रय धरैं ।
अरु धरेंगे ते शिव लहैं तिन, सुयशजल जगमल हरैं ॥
इमि जानि आलस हानि साहस, ठानि यह शिख आदरो ।
जबलों न रोग जरा गहै तब, लों जगत निजहित करो ॥ १४ ॥
यह राग आग दहै सदा तातैं समामृत पीजिये ।
चिर भजे विषय कषाय अब तो, त्याग निजपद लीजिये ॥
कहा रच्यो पर पदमें न तेरो, पद यहै क्यों दुख सहै ।
अब दौल होउ सुखी स्वपद रचि, दाव मत चूको यहै ॥१५॥

दोहा ।

इक नव वसु इक वर्षको, तीज सुकुल वैशाख ।
करयौ तत्वउपदेश यह, लखि बुध जनकी भाख ॥ १ ॥
लघु धी तथा प्रमादतैं, शब्द अर्थ की भूल ।
सुधी सुधार पढ़ो सदा, जो पावो भव कूल ॥ २ ॥

श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रम् ।

(भगवज्जिनसेनाचार्यकृतं)

प्रसिद्धष्टसहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरां पतिम् । नाम्नामष्टसहस्रेण त्वोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ॥ १ ॥

तद्यथा,—

श्रीमान्स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः । स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥ २ ॥ विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः । विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनीश्वरः ॥ ३॥ विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः । विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥ ४ ॥ विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः । विश्वदृग्विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥ ५ ॥ जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः । अनन्तचिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥ ६ ॥ युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः । परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥ ७ ॥ स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः । मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥ प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यवी-

श्वरः ॥ ९ ॥ सिद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः । सिद्धः सिद्धान्तविद्धेयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १० ॥ सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः । प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥ ११ ॥ विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः । परमात्मा परमज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः । पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥ १ ॥ श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाःशुचिः । तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥ अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः । मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥ निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः । अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ४ ॥

अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् । शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥ ५ ॥ वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः । वृषो वृषतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥ ६ ॥ हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भूतभावनाः । प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥७ ॥ हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः । स्वयंप्रभुः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः । सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ८ ॥ सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः । विश्रुतो विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥ १० ॥ सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् । भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्या महेश्वराः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ २ ॥

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः पृष्ठो वरिष्ठधीः । स्थेष्ठो गरिष्ठो वंहिष्ठः श्रेष्ठो निष्ठो गरिष्ठगीः ॥१॥ विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेट् विश्वसुग्विश्वनायकः । विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ॥२॥ विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन् । विरागो विरतोसङ्गो विविक्तो वीतमत्सरः ॥३॥ विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः । वियोगो योगविद्विद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥ ४ ॥ क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक्सलिलात्मकः । वायुमूर्तिरसङ्गात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ॥५॥ सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्राम पूजितः । ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥ ६ ॥ व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः । सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥ ७ ॥ मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तकः । स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥८॥ कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः । नित्यो मृत्युंजयोमृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥९॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्मब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥१०॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः । प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः॥११॥

इति स्थविष्ठादिशतम् ॥ ३ ॥

महाशोकध्वजोशोकः कः स्रष्टा पद्मविष्टरः । पद्मेशः पद्मसम्भूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥ १ ॥ पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः । स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥ २ ॥ गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः । गुणाकरो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥ ३ ॥ गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः । शरण्य पुण्यवाक्पूतो वरेण्यःपुण्यनायकः ॥ ४ ॥ अगण्यः पुण्यधीर्गण्यः पुण्यकृत्पु-

ण्यशासनः। धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥ ५ ॥ पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः। निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥६॥ निर्निमेषो निराहारो निःक्रियो निरुपप्लवः। निष्कलङ्को निरस्तैना निर्धूताङ्गो निरास्रवः ॥७॥ विशालो विपुलज्योतिरतुलोऽचिन्त्यवैभवः। सुसंवृत्तः सुगुप्तात्मा सुभृत्सुनयतत्त्ववित् ॥ ८ ॥ एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः। धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ॥९॥ पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः। त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥१०॥ कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभः पुरुः। प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥११॥

इति महादिशतम् ॥४॥

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः। निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥१॥ सिद्धिदः सिद्धिसङ्कल्पः सिद्धात्मासिद्धिसाधनः। बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ॥२॥ वेदाङ्गो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांवरः। वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥३॥ अनादिनिधनो व्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः। युगादिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥४॥ अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रोमहेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक्। अनिन्द्रियोऽहमिन्द्रार्च्यो महेन्द्रमहितो महान् ॥५॥ उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः। अगाह्यो गहनं गुह्यं परार्ध्यः परमेश्वरः ॥६॥ अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः। प्राग्र्यः प्राग्रहरोऽभ्यग्र्यः प्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रजः ॥७॥ महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः। महायशो महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥८॥ महाधैर्यो महावीर्यो महासम्पन्महाबलः। महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥९॥ महामतिर्महानी-

तिर्महाक्षान्तिर्महोदयः । महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकविः ॥१०॥ महामहामहाकीर्तिर्महाकान्तिर्महावपुः । महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ॥११॥ महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकः । महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥१२॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥५॥

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः । महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥ १ ॥ महाव्रतपतिर्मह्यो महाकान्तिधरोऽधिपः । महामैत्रो महामेयो महोपायो महोदयः ॥२॥ महाकारुण्यको मन्ता महामन्त्रो महायतिः । महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ॥३॥ महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् । महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥ ४ ॥ महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः । महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥ ५ ॥ महाभवाब्धिसंतारिर्महामोहाद्रिसूदनः । महागुणाकरः क्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ॥ ६ ॥ महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः । महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥ ७ ॥ सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः । असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥ ८ ॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः । दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥ ९ ॥ प्रधानमात्मा प्रकृतिपरमः परमोदयः । प्रक्षीणबन्धः कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥ १० ॥ प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः । प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥ ११ ॥ आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः । कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिंजयः ॥ १२ ॥

इति महामुन्यादिशतम् ॥६॥

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतान्तकृ-तान्तकृत् । अन्तकृत्कान्तगुः कान्तश्चिन्तामणिरभीष्टदः ॥१॥ अजितो जितकामारिरमितोऽमितशासनः । जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः ॥ २॥ जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः । महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभीनन्दनः ॥ ३ ॥ नाभेयो नाभिजो जातः सुव्रतो मनुरुत्तमः । अभेद्योऽनत्ययोऽनश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः ॥ ४ ॥ सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः । विशिष्टः शिष्टभुक्शिष्टः प्रत्ययः कर्मणोऽनघः ॥५॥ क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी । अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥ ६ ॥ सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः । श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥ ७ ॥ सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः । सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः सत्यपरायणः ॥८॥ स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः । अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९॥ सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः । सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥ १० ॥ सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् । सुगुप्तो गुप्तिभृद्गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥११॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥७॥

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः । मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ॥१॥ नैकरूपो नयस्तुङ्गो नैकात्मा नैकधर्मकृत् । अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥२॥ ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः । पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥ ३ ॥ लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता ॥ मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीरशासनः ॥ ४ ॥

धर्मयूपो दयायोगो धर्मनेमीर्मुनीश्वरः । धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥ ५ ॥ अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः । सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥ ६ ॥ सुस्थितः स्वास्थ्यभावस्त्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः । अलेपो निष्कलङ्कात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥ वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः । प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मङ्गलं मलहानघः ॥ ८ ॥ अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः । अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ॥९ अध्यात्मगम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः । सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥१०॥ शंकरः शंवदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः । अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥११॥ त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मङ्गलोदयः । त्रिजगत्पतिपूजाङ्घ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः॥१२

इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः । सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥१॥ पुराणपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः । आदिदेवः पुराणाः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥२॥ युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः । कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥ ३ ॥ कल्याणप्रकृतिर्दीप्तः कल्याणात्मा विकल्मषः । विकलङ्कः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥ ४ ॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः । जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥५॥ चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः । सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥६॥ आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः । सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥ ७ ॥ तपनीयनिभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनलप्रभः । संध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः

॥८॥ निष्टप्तकनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः। हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ॥ ९ ॥ द्युम्नाभो जातरूपाभो दीप्तजाम्बूनदद्युतिः। सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः॥१०॥ शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरक्षमः। शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥ ११ ॥ शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः। शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्तिमान्कामितप्रदः ॥१२॥ श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः। सुस्थितः स्थावरः स्थाणुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ॥१३॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥९॥

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः। निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥१॥ तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः। तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥२॥ जगच्चूडामणिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः। कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ॥३॥ अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जागरूकः प्रभामयः। लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥४॥ मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः। प्रशान्तरसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ॥५॥ मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः। आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥६॥ प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित्। सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥७॥ श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयङ्करः। उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥८॥ लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः। धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥९॥ प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः। भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥१०॥ समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः। कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥११॥

अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः । त्रिनेत्रस्त्र्यम्बक-स्त्र्यक्षः केवलज्ञान वीक्षणः ॥१२॥ समन्तभद्रः शान्तारिधर्माचार्यो दयानिधिः । सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुधर्मदेशकः ॥१३॥ शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः । धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ॥१०॥

इत्यष्टाधिकसहस्रनामावली समाप्ता।

धाम्नांपते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः । समुच्चितान्यनुध्यायत्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥ गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः । स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं भवेत् ॥२॥ त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक् । त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥३॥ त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् । त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यङ्गो स्वोत्थानन्तचतुष्टयः ॥४॥ त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः । षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ॥५॥ दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः । दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥६॥ युष्मन्नामावलीदृब्धविलसत्स्तोत्रमालया । भवन्तं वरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥७॥ इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः । यः स पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनम् ॥८॥ ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधीः । पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥९॥

इति भगवज्जिनसेनाचार्यविरचितादिपुराणान्तर्गतं जिनसहस्रनाम-स्तवनं समाप्तम्।

मोक्षशास्त्रम् [तत्त्वार्थसूत्रम् ।]

(आचार्यश्रीमदुमास्वामिविरचितम्)

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥ २ ॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥ ३ ॥ जीवाजीवास्रवबन्धसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वम् ॥ ४ ॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥ ५ ॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाऽधिकरणस्थितिविधानतः ॥ ७ ॥ सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभावाल्पबहुत्वैश्च ॥ ८ ॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥ ९ ॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥ आद्ये परोक्षम् ॥ ११ ॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥ १३ ॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तं ॥ १४ ॥ अवग्रहेहाऽवायधारणाः ॥ १५ ॥ बहुबहुविधक्षिप्राऽनिःसृताऽनुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥ १६ ॥ अर्थस्य ॥ १७ ॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥ १८ ॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥ १९ ॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥ २० ॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥ २१ ॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥ २३ ॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥ २४ ॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्ययोः ॥ २५ ॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥ २७ ॥ तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥ २८ ॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥ ३१ ॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः ॥ ३३ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोग वीर्याणि च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥ गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाऽज्ञानाऽसंयताऽसिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥६॥ जीवभव्याऽभव्यत्वानि च ॥७॥ उपयोगो लक्षणम् ॥८॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥ ९ ॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्काऽमनस्काः ॥११॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः१२॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयःस्थावराः ॥ १३ ॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥ १४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १५ ॥ द्विविधानि ॥१६॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम्॥ १७ ॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥ १८ ॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुः श्रोत्राणि ॥ १९ ॥ स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥ २० ॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २१ ॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥ २२॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥ २३ ॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥ २५ ॥ अनुश्रेणि गतिः ॥ २६ ॥ अविग्रहा जीवस्य ॥ २७ ॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥ २९ ॥ एकं द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः ॥ ३० ॥ सम्मूर्छनगर्भोपपादाज्जन्म ॥ ३१ ॥ सचित्तशीतसंवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥ जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः ॥ ३३ ॥ देवनारकाणामुपपादः ॥ ३४ ॥ शेषाणां सम्मूर्छनम् ॥३५॥ औदारिकवैक्रियकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥३६॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥ अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतीघाते

॥४०॥ अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४३ ॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥ ४४ ॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४५॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥४६॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥ नारकसम्मूर्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥५३॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

रत्नशर्करावालुकापङ्कधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्चदशदशत्रिपञ्चोनैकनरकशतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥ २ ॥ नारकानित्याऽशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥३॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥६॥ जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥ ११ ॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥ १२ ॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥ पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीकाह्रदास्तेषामुपरि ॥ १४ ॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो ह्रदः ॥ १५ ॥ दशयोजनावगाहः ॥ १६ ॥ तन्मध्ये योजनं

पुष्करम् ॥१७॥ तद्द्विगुणद्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥१९॥ गङ्गासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्त्वपरगाः ॥२२॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृता गङ्गासिन्ध्वादयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षड्विंशतिपञ्चयोजनशतविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥ तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥२५॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥२७॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु सङ्ख्येयकालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥३२॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥ दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥ ३ ॥ इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशपारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥ भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवा-

तस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तराः किन्नरकिम्पु-
रुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥ ११ ॥ ज्योतिष्काः
सूर्य्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥ मेरुप्रद-
क्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ तत्कृतः कालविभागः ॥१४॥
वहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाःकल्पा-
तीताश्च ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्म्मैशानसानत्कुमार-
माहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक्रमहाशुक्रशतारसहस्रारे-
ष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसुग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्त-
जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥ स्थितिप्रभावसुखद्यु-
तिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः ॥२०॥ गतिशरीर-
परिग्रहाऽभिमानतोहीनाः ॥२१॥ पीतपद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु
॥२२॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया लौकान्ति-
काः ॥२४॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधा-
रिष्टाश्च ॥ २५ ॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥ २६ ॥ औपपा-
दिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥ २७ ॥ स्थितिरसुर
नागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिताः
॥२८॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ॥२९॥ सानत्कुमार-
माहेन्द्रयोः सप्त ॥३०॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चदशभिरधि-
कानितु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजु-
यादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥३३॥
परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥३४॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु
॥३५॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६॥ भवनेषु च ॥ ३७ ॥
व्यन्तराणां च ॥३८॥ परा पल्योपममधिकम् ॥३९॥ ज्योतिष्काणां
च ॥४०॥ तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरो-
पमाणि सर्वेषाम् ॥४२॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अजीवकाया धर्म्माधर्म्माकाशपुद्गलाः ॥१॥ द्रव्याणि ॥२॥ जीवाश्च ॥३॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥५॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६॥ निष्क्रियाणि च ॥७॥ असङ्ख्येयाः प्रदेशा धर्म्माधर्म्मैकजीवानाम् ॥८॥ आकाशस्यानन्ताः ॥९॥ सङ्ख्येयासङ्ख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१० नाणोः ॥ ११ ॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥१२॥ धर्म्माधर्म्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असङ्ख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥१५॥ प्रदेशसंहारविसर्प्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गतिस्थित्युपग्रहौ धर्म्माधर्म्मयोरुपकारः ॥१७॥ आकाशस्यावगाहः ॥१८॥ शरीरं वाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥१९॥ सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च ॥२०॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥२१॥ वर्त्तनापरिणामक्रियाः परत्वापरत्वे च कालस्य ॥२२॥ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्यस्थौल्य संस्थानभेदतमश्छायाऽऽतपोद्योतवन्तश्च ॥२४॥ अणवः स्कन्धाश्च ॥२५॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥२७॥ भेदसङ्घाताभ्यां चाक्षुषः ॥२८॥ सद्द्रव्य लक्षणम् ॥२९॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥ ३० ॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥३२॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥३३॥ न जघन्यगुणानाम् ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥३५॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥३६॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥३७॥ गुणपर्य्ययवद्द्रव्यम् ॥३८॥ कालश्च ॥३९॥ सोऽनन्तसमयः ॥४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणाः ॥४१॥ तद्भावः परिणामः ॥४२॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

कायवाङ्मनस्कर्मयोगः ॥ १ ॥ स आस्रवः ॥ २ ॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्य्यापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाऽजीवाः ॥७॥ आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥९॥ तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥१०॥ दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥ भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥ केवलिश्रुतसङ्घधर्म्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥१३॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥१४॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥१६॥ अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥ स्वभावमार्दवं च ॥१८॥ निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥१९॥ सरागसंयमसंयमासंयमाऽकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ॥२०॥ सम्यक्त्वं च ॥२१॥ योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥२३॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नताशीलव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्त्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥२४॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्य्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥२७॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥१॥ देशसर्वतोऽणुमहती ॥२॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥३॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पञ्च ॥४॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पञ्च ॥५॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्माऽविसंवादाः पञ्च ॥६॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पञ्च ॥७॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्ज्जनानि पञ्च ॥८॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥९॥ दुःखमेव वा ॥१०॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि च सत्त्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनयेषु ॥११॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम् ॥१२॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥१३॥ असदभिधानमनृतम् ॥१४॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥१५॥ मैथुनमब्रह्म ॥१६॥ मूर्छा परिग्रहः ॥१७॥ निःशल्यो व्रती ॥१८॥ अगार्यनगारश्च ॥१९॥ अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥२१॥ मारणान्तिकीं सँल्लेखनां जोषिता ॥२२॥ शङ्काकांक्षाविचिकित्साऽन्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥२३॥ व्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम् ॥२४॥ बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥२६॥ स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥२७॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीताऽपरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमाणाऽतिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥ आनयनप्रे-

ष्यप्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ॥३१॥ कन्दर्पकौत्कुच्यम-
खर्य्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥३२॥ योग-
दुःप्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥ अप्रत्यवेक्षिताऽप्रमा-
र्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥
सचित्तसम्बन्धसम्मिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः ॥३५॥ सचित्तनि-
क्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्य्यकालातिक्रमाः ॥३६॥ जीवितम-
रणाशंसामित्रानुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥३७॥ अनुग्रहार्थं
स्वस्यातिसर्गोदानम् ॥ ३८ ॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्वि-
शेषः ॥३९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥१॥
सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥२॥
प्रकृतिस्थित्यनुभावप्रदेशास्तद्विधयः ॥३॥ आद्यो ज्ञानदर्शनाव-
रणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥४॥ पंचनवद्व्यष्टाविंश-
तिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपंचभेदा यथाक्रमम् ॥५॥ मतिश्रुताव-
धिमनःपर्य्ययकेवलानाम् ॥६॥ चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रा-
निद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥ सदसद्वेद्ये
॥८॥ दर्शनचारित्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विन-
वषोडशभेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ हा-
स्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुन्नपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्य-
प्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमा-
यालोभाः ॥९॥ नारकतैर्य्यग्योनमानुषदैवानि ॥१०॥ गतिजाति-
शरीराङ्गोपाङ्गनिर्माणबन्धनसङ्घातसंस्थानसंहनन-
स्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वास-
विहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रसशुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्ति-
स्थिरादेययशःकीर्तिसेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥११॥ उच्चैर्नीचैश्च

॥१२॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥१३॥ आदितस्तिसृणा-मन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥१४॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥१५॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥१७॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥१८॥ नामगोत्रयोरष्टौ ॥१९॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥२०॥ विपाकोऽनुभवः ॥२१॥ स यथानाम ॥२२॥ ततश्च निर्जरा ॥२३॥ नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥२४॥ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥२५॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥२६॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

आस्रवनिरोधः संवरः ॥१॥ स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥२॥ तपसा निर्ज्जरा च ॥३॥ सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥४॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥५॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौच सत्यसंयमतपस्त्यागाऽकिंचन्यब्रह्मचर्य्याणि धर्मः ॥६॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्याततत्त्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥७॥ मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाचनाऽलाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाऽज्ञानाऽदर्शनानि ॥ ९ ॥ सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥१०॥ एकादश जिने ॥११॥ बादरसाम्पराये सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ॥१४॥ चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्काराः ॥१५॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नेकोनविंशतेः ॥१७॥ सामायिक–

छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्परायययथाख्यातमिति
चारित्रम् ॥ १८ ॥ अनशनावमौदर्य्यवृत्तिपरिसङ्ख्यानरसपरि-
त्यागविविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्त-
विनयवैयावृत्त्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥२०॥ नव-
चतुर्दशपंचद्विभेदायथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥ आलोचना
प्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः २२
ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥ आचार्य्योपाध्यायतपस्वि
शैक्ष्यग्लानगणकुलसङ्घसाधुमनोज्ञानाम् ॥२४॥ वाचनापृच्छना-
नुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥ २५ ॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥ २६ ॥
उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमाऽऽन्तर्मुहूर्तात् ।२७
आर्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥२८॥ परे मोक्षहेतू ॥२९ ॥ आर्तममनो-
ज्ञस्य सम्प्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥
विपरीतं मनोज्ञस्य ॥ ३१ ॥ वेदनायाश्च ॥३२॥ निदानं च ॥३३
तदविरतदेशविरतप्रमत्तसंयतानाम् ॥३४॥ हिंसानृतस्तेयविषय-
संरक्षणेभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापायविपाक-
संस्थानविचयाय धर्म्मम् ॥३६ ॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥
परे केवलिनः ॥ ३८ ॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रति-
पातिव्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥३९॥ त्र्येकयोगकाययोगायोगा-
नाम् ॥४०॥ एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे ॥४१॥ अवीचारं
द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥ वीचारोऽर्थव्यञ्जनयोग
संक्रान्तिः ॥ ४४ ॥ सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शन
मोहक्षपकोपशमकोपशान्तमोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः क्रमशोऽसं-
ख्येयगुणनिर्जराः ॥४५॥ पुलाकवकुशकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातका
निर्ग्रन्थाः ॥ ४६ ॥ संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिङ्गलेश्योपपाद
स्थानविकल्पतः साध्याः ॥४७॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥९॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् ॥१॥ बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥ औपशमिकादिभव्यत्वानां च ॥३॥

अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथा गतिपरिणामाच्च ॥ ६ ॥ आविद्धकुलालचक्रवद्-व्यपगतलेपालाम्बुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥ ७ ॥ धर्मास्तिकायाऽभावात् ॥८॥ क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यञ्जनसन्धिविवर्जितरेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥१॥
दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति । फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनिपुङ्गवैः ॥२॥ तत्त्वार्थसूत्रकर्तारं गृद्धपिच्छोपलक्षितम् वन्दे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥३॥

इति तत्त्वार्थसूत्रापरनाम तत्त्वार्थाधिगममोक्षशास्त्रं समाप्तम् ।

लघु अभिषेकपाठ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं
स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु-
र्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाभ्यधायि ॥१॥

(यह पढ़कर पुष्पांजलि क्षेपण करना)

सौगन्धसंगतमधुव्रतझंकृतेन
सौवर्ण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ।
आरोपयामिविबुधेश्वरवृन्दवन्द्य-
पादारविन्दमभिवन्द्यजिनोत्तमानाम् ॥२॥

(यह पढ़कर अपने ललाटादि स्थानों में तिलक लगाना चाहिये)

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता
नागाःप्रभूतबलदर्पयुताविबोधाः।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां
प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥३॥

(यह पढ़कर अभिषेक के लिये आगे की भूमि का प्रक्षालन करना चाहिये।)

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः
प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्।
अत्युद्यमुद्यतमहं जिनपादपीठं
प्रक्षालयामि भवसंभवतापहारि ॥४॥

(सिंहासन अथवा जिस आसन पर विराजमान करके अभिषेक करना हो, उसका प्रक्षालन करके 'श्री' वर्ण लिखना चाहिये)

इन्द्राग्निदण्डधरनैर्ऋतपाशपाणि-
वायूत्तरेशशशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः ।
आगत्य यूयमिह सानुचरा सचिह्नाः,
स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके ॥५॥

(दूर्वा फूल आदि लेकर दशों दिशाओं में निम्नलिखित मंत्र पढ़कर दशदिक्पालों की स्थापना करना चाहिये)

१ ॐ आं क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा । २ ॐ अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा । ३ ॐ यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा । ४ ॐ नैर्ऋत आगच्छ आगच्छ नैर्ऋताय स्वाहा । ५ ॐ वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा । ६ ॐ पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा । ७ ॐ कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा । ८ ॐ ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वावा । ९ ॐ धरणीन्द्र आगच्छ आगच्छ धरणीन्द्राय स्वाहा । १० ॐ सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ।

यः पाण्डुकामलशिलागतमादिदेव-
मस्नापयन्सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि ।
कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैः,
संभावयामि पुर एव तदीयबिम्बम् ॥६॥

(जल पुष्प अक्षतादि क्षेपण करके श्रीवर्ण पर जिन-बिम्ब की स्थापना करना चाहिये)

सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरूप्य
ताम्रारकूटघटितान्पयसा सुपूर्णान् ।

संवाद्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्
सस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकान्ते ॥७॥

(पुष्प अक्षतादि क्षेपण करके वेदी के कोनों में चार कलशों की स्थापना करना चाहिये)

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुलेनामुना चन्दनेन
श्रीदृक्पेयैरमीभिः शुचिसदकचयैरुद्गमैरेभिरुद्धैः।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मखभवनमिमं दीपयद्भिः प्रदीपै-
र्धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि ॥८॥

(यह पढ़कर अर्घ चढ़ना चाहिये)

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटीसंलग्न-
रत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिम् ।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टैर्भ-
क्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाऽभिषिञ्चे ॥९॥

(शुद्ध जल की धार प्रतिमा पर छोड़ना चाहिये)

भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चै-
र्हस्तैश्च्युताः सुरवरासुरमर्त्यनाथैः ।
तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्य धारा
सद्यः पुनातु जिनबिम्बगतैव युष्मान् ॥१०॥

(इक्षुरसकी धारा०)

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम-
देहप्रभावलयसंगमलुप्तदीप्तिम् ।
धारां घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेयां
वन्देऽर्हतां सुरभिसस्नपनोपयुक्ताम् ॥११॥

(घृत रस की धारा)

संपूर्णशारदशशाङ्कमरीचिजाल—
स्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः
क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिच्यमाणाः
संपादयन्तु मम चित्तसमीहितानि ॥१२॥
(दुग्ध रस की धारा०)

दुग्धाब्धिवीचिपयसंचितफेनराशि-
पाण्डुत्वकान्तिमवधारयतामतीव ।
दध्ना गता जिनपते प्रतिमां सुधारा
संपद्यतां सपदि वाञ्छितसिद्धये वः ॥१३॥
(दही की धारा०)

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः
सर्वाभिरोषधिभिरर्हतमुज्ज्वलाभिः ।
उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेला-
कालेयकुङ्कुमरसोत्कटवारिपूरैः ॥१४॥
(सर्वौषधिरस की धारा०)

इष्टैर्मनोरथशतैरिव भव्यपुंसां
पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलैर्वसानैः ।
संसार सागर विलङ्घनहेतुसेतुमा-
प्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम् ॥१५॥
(कलशों से अभिषेक)

द्रव्यैरनल्पघनसार चतुः समाद्यै-
रामोदवासितसमस्तदिगन्तरालैः ।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुङ्गवानां
त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥१६॥
(सुगंधित जल की धारा०)

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकं
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम् ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलतासंवृद्धिसंपादकं
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन स्नानस्य गन्धोदकम् ॥१७॥
(यह श्लोक पढ़कर गन्धोदक लेकर मस्तक पर लगाना चाहिये)
इति लघुअभिषेक पाठ ।

विनयपाठ ।

इहि विधि ठाड़ो होय के प्रथम पढ़े जो पाठ ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम नाशे कर्म जु आठ ॥१॥
अनंत चतुष्टय के धनी तुम ही हो शिरताज ।
मुक्ति वधू के कंथ तुम तीन भुवन के राज ॥२॥
तिहुँ जग की पीड़ा हरण भवदधि शोषनहार ।
ज्ञायक हो तुम विश्व के शिव सुखके करतार ॥३॥
हरता अघ अँधियार के करता धर्म प्रकाश ।
थिरता पद दातार हो धरता निजगुण रास ।४॥
धर्मामृत उर जलधसों ज्ञान भानु तुम रूप ।
तुमरे चरण सरोज को नावत तिहुँ जग भूप ॥५॥
मैं वन्दौं जिनदेव कों कर अति निरमल भाव ।
कर्म बंधके छेदने और न कोई उपाय ॥६॥
भविजन को भव कूप तैं तुमही काढ़न हार ।
दीनदयाल अनाथपति अन्तिमगुण भँडार ॥७॥
चिदानन्द निर्मल कियो धोय करम रज मैल ।
शरल करीया जगत मैं भविजनको शिव गैल ॥८॥

तुम पद पंकज पूजतैं विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं विष निर विषता थाय ॥ ९ ॥
चक्री खग धर इंद्र पद मिलें आपतैं आप
अनुक्रम कर शिव पद लहै नेम सकल हन पाप ॥१०॥
तुम विन मैं व्याकुल भयो जैसे जल विन मीन
जन्म जरा मेरी हरो करो मोह स्वाधीन ॥११॥
पतित बहुत पावन किये गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे कुधी सु जय जय जय जिनदेव ॥१२॥
थकी नाव भवि दधि विषैं तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभु सो जय जय २ जिनदेव ॥१३॥
राग सहित जग में रुले मिले सरागी देव।
वीतराग भैटो अबै मेटो राग कुटेव ॥१४॥
कित निगोद कित नारकी कित तिर्यंच अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो पायो जिनवर थान ॥१५॥
तुमको पूजें सुरपति अहिपति नरपति देव॥
धन्य भाग मेरो भयो करन लगो तुम सेव ॥१६॥
अशरण के तुम शरण हो निराधार आधार।
मैं डूबत भवसिंधु में खेव लगायो पार ॥१७॥
इंद्रादिक गणपति थकी तुम विन्तो भगवान।
विनती आप निहारि कै कीजे आप समान ॥१८॥
तुमरी नेक सुदृष्ट से जग उतरत है पार।
हाहा डूबौ जात हौं नेक निहार निकार ॥१९॥
जो मैं कहा हूं और सों तो न मिटै उर भार।
मेरी तो मोसे वनी तातैं करत पुकार ॥२०॥
वंदौं पाचौं परम गुरु सुरगुरु वदत जास।
विघन हरन मंगल करन पूरन परम प्रकाश ॥२१॥

चौबीसों जिन पद नमों नमों सारदा माय।
शिवमग साधक साधु नमि रचो पाठ सुखदाय ॥२२॥
मंगल मूर्ती परम पद पंच धरो नित ध्यान।
हरो अमंगल विश्व का मंगलमय भगवान ॥२३॥
मंगल जिनवर पद नमों मंगल अर्हंत देव।
मंगल कारी सिद्ध पद सो वन्दों स्वमेव ॥२४॥
मंगल आचार्य मुनि मंगल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मंगल करों वन्दों मन वच काय ॥२५॥
मंगल सरस्वति मात का मंगल जिनवर धर्म।
मंगलमय मंगल करो हरो असाता कर्म ॥२६॥
या विधि मंगल करन से जग में मंगल होत।
मंगल "नाथूराम" यह भव सागर दृढ़ पोत ॥२७॥

इति विनय पाठ समाप्त।

देवशास्त्र गुरु पूजा।

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आयरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥

ॐ अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः

(यहाँ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिये)

चत्तारि मंगलं—अर्हंतमंगलं सिद्धमंगलं साहूमंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा—अर्हंतलोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहुलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारिसरणं पव्वज्जामि-अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तो धम्मोसरणं पव्वज्जामि॥

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा।

(यहाँ पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः॥ २ ॥

अपराजितमन्त्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः॥ ३ ॥

एसो पंचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम्।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥

(यहाँ पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

(यदि अवकाश हो, तो यहाँ पर सहस्रनाम पढ़कर दश अर्घ देना चाहिये, नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढ़कर एक अर्घ चढ़ाना चाहिये)

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे॥७

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्रनामभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीतिस्वाहा ॥

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं
स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु-
जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥८॥

स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय
स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाशसहजोर्जितदृङ्मयाय
स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥ ९ ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय
स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय
स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥ १० ॥

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्
भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥११॥

अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवह्नौ
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥१२॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः । श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः । श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः । श्रीश्रेयान्स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः । श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति, श्रीअनन्तः । श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः । श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः । श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः । श्रीनमिः

स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः। श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

(पुष्पांजलिक्षेपण)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१॥
आगे प्रत्येक श्लोकके अन्तमें पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये।
कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥२॥
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥३॥
प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टाङ्गनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥४॥
जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वाः।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥५॥
अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥६॥
सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥७॥
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥८॥
आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीविषंविषा दृष्टिविषंविषाश्च।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥९॥
क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१०॥

इति स्वस्तिमङ्गलविधानं।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसन्तापहर्ता
त्रैलोक्याक्रांतकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घाति कर्मप्रणाशः।
श्रीमान्निर्वाणसम्पद्वरयुवतिकरालीलकण्ठः सुकण्ठ-
र्देवेन्द्रैर्वन्द्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजः ॥१॥
जय जय जय श्रीसत्कान्तिप्रभो जगतां पते
जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भसि मज्जताम्।
जय जय महामोहध्वान्तप्रभातकृतेऽर्चनम्
जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसद्दि करोम्यहम् ॥२॥
ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
(इत्याह्वानम्।) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः.
(इति स्थापनम्) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो
भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम्)
देवि श्रीश्रुतदेवते भगवति त्वत्पादपङ्करुह-
द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्तया मया प्रार्थ्यते।
मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा त्राहि मां
दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं सम्पूजयामोऽधुना ॥३॥
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान! अत्र अवतर अवतर
संवौषट् ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान! अत्र तिष्ठ तिष्ठ
ठः ठः। ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान! अत्र मम
सन्निहितं भव भव वषट्।
संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः।
तपःप्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥४॥
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र अवतर २ संवौषट्।
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र मम सन्निहितो
भव भव वषट्।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवन्द्यान् शुभत्पदान् शोभितसारवर्णान् ।
दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलौधैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥१॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्तीसमस्तसत्त्वाऽहितहारिवाक्यान् ।
श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृङ्गैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥२॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या ।
दीर्घाक्षताङ्गैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥३॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽक्षयपदप्राप्तायेअक्षतान् निर्वपामीतिस्वाहा।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्य्यान्वर्यान् सुचर्य्याकथनैकधुर्य्यान्।
कुन्दारविन्दप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥४॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कुदर्पकन्दर्पविसर्प्पसर्प्पप्रसह्यनिर्णाशनवैनतेयान्।
प्राज्याज्यसारैश्चरुभीरसाढ्यैर्जिनेन्द्रसिद्धांन्तयतीन्यजेऽहम् ॥५॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।
दीपैः कनत्काञ्चनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥६॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहान्धकार, विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुर धूमकेतून् ।
धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥७॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अष्ट-कर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीतिस्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान् ।
फलैरलं मोक्षफलाभिसारैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम ॥८॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट् चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा

सद्वारिगन्धाक्षतपुष्पजातनैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम्॥६॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते
त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयन्तो नराः।
पुण्याढ्या मुनिराजकीर्त्तिसहिता भूत्वा तपोभूषणा-
स्ते भव्याः सकलावबोधरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम्॥७॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षेपण करना)

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनन्दनः।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः॥१॥
चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः।
श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः॥२॥
अनन्तो धर्मनामा च शान्तिः कुन्थुर्जिनोत्तमः।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत्॥३॥

हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥४॥
कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसम्भवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥५॥
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः ।
चतुर्विधस्य सङ्घस्य शान्तिं कुर्वन्तु शाश्वतिम् ॥६॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥७॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥८॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥९॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

अथ देव जयमाला प्राकृत ।

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु ।
तुहु चरणविहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥१॥

जय रिसह रिसिसर णमियपाय । जय अजिय जियंगमरोसराय । जय संभव संभवकय विआय । जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥२॥

जय सुमइ सुमइ सम्मयपयास। जय पउमप्पह पउमा-णिवास। जय जयहि सुपास सुपासगत्त। जय चंदप्पह चंदाहवत्त॥

जय पुप्फयंत दंतंतरंग। जय सीयल सीयलवयणभंग। जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज। जय वासुपुज्ज पुज्जाणपुज्ज॥ ४॥

जय विमल विमलगुणसेढिठाण। जय जयहि अणंताणंतणाण। जय धम्म धम्मतित्थयर संत। जय सांति सांति विहियायवत्त॥ ५॥

जय कुंथु कुंथुपहुअंगिसदय। जय अर अर माहर विहियसमय। जय मल्लि मल्लिआदामगंध। जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध॥ ६॥

जय णमि णमियामरणियरसामि। जय णेमि धम्म-रहचक्कणेमि। जय पास पासछिंदणकिवाण। जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण॥ ७॥

घत्ता।

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं अणहणहिं अणाइहिं, समियकुवाइहिं, पणविमि अरहंतावलिहिं॥

ॐ ह्रीं वृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत।

संपइ सुहकारण, कम्मवियारण। भवसमुद्दतारण तरणं। जिणवाणि णमस्समि, सत्तपयास्समि, सग्गमोक्खसंगमकरणं ॥ १ ॥

जिणंदमुहाओ विणिग्गयतार। गणिंदविगुंफिय गंथपयार। तिलोयहिमंडण धम्मह खाणि। सया पणमामि जिणिंदहवाणि ॥ २ ॥

अवग्गहईहअवायजुएहि। सुधारणभेयहिं तिण्णिसएहिं। मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥

सुदं पुण दोण्णि अणेयपयार। सुवारहभेय जगत्तयसार। सुरिंदणरिंदसमच्चिओ जाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ४ ॥

जिणिंदगणिंदणरिंदह रिद्ध। पयासइ पुण्णपुराकिउ लद्धि। णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ५ ॥

जु लोयअलोयह जुत्ति जणेइ। जु तिण्णविकालसरूव भणेइ। चउग्गइलक्खण दुज्जउ जाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ६ ॥

जिणिंदचरित्तविचित्त मुणेइ। सुसावयधम्महिं जुत्ति जणेइ। णिउग्गुवितिज्जउ इत्थु वियाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ७ ॥

सुजीवअजीवह तच्चह चक्खु । सुपुण्ण विपाव विबंध विमुक्खु । चउत्थुणिउग्गु विभासिय णाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ८ ॥

तिभेयहिं ओहि विणाण विचित्तु । चउत्थु रिजोविउलमइ उत्तु । सुखाइय केवलणाण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ९ ॥

जिणिंदह णाणु जगत्तयभाणु । महातमणासिय सुक्खणिहाणु । पयत्थहुभत्तिभरेण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १० ॥

पयाणि सुबारहकोडिसयेण । सुलक्खतिरासिय जुत्तिभरेण । सहस्सअठावण पंच वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ११ ॥

इकावण कोडिव लक्ख अठेव । सहस चुलसीदिसया छक्केव । सढाइगवीसह गंथपयाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १२ ॥

घत्ता ।

इह जिणवरवाणि विसुद्धमई । जो भवियणणियमण धरई । सो सुरणरिंदसपय लहिवि । केवलणाण वि उत्तरई ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ गुरुजयमाला प्राकृत।

भवियह भवतारण, सोलह कारण, अज्जिव तित्थयरत्तणहं। तव कम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महाव्वयहं॥ १॥

वंदामि महारिसि सीलवंत। पचेंद्रियसंजम जोगजुत्त। जे ग्यारह अंगइ अणुसरंति। जे चउदहपुव्वह मुणि थुणंति॥ २॥

पादाणु सारवर कुट्ठबुद्धि। उप्पण्णजाह आयासरिद्धि। जे पाणाहारी तोरणीय। जे रुक्खमूल आतावणीय॥ ३॥

जे मोणिधाय चंदाहणीय। जे जत्थत्थवणि णिवासणीय। जे पंचमहव्वय धरणधीर। जे समिदि गुत्ति पालणहि वीर॥ ४॥

जे वड्ढहि देह विरत्तचित्त। जे रायरोसभयमोहचित्त। जे कुगइहि संवरु विगयलोह। जे दुरियविणासण कामकोह॥ ५॥

जे जल्लमल्ल तिणलित्त गत्त। आरंभ परिग्गह जे विरत्त। जे तिण्णकाल बाहर गमन्ति। छट्ठम दसमउ तउचरंति॥६॥

जे इक्कगास दुइगास लिन्ति। जे णीरसभोयण रइ करंति। ते मुणिवर वंदउँ ठियमसाण। जे कम्म डहइवर सुक्कझाण॥ ७॥

वारह विह संजम जे धरंति। जे चारिउ विकथा परहरंति। वावीस परीसह जे सहन्ति। संसारमहण्णउ ते तरंति ८॥

जे धम्मबुद्ध महिय ले थुणंति। जे काउस्सग्गो णिस गमन्ति। जे सिद्धिविलासणि अहिलसंति। जे पक्खमास आहार लिन्ति॥९॥

गोदूहण जे वीरासणीय। जे धणुह सेज वज्रासणीय। जे तववलेण आयास जंति। जे गिरिगुहकंदर विवर थन्ति॥१०॥

जे सत्तुमित्त समभावचित्त। ते मुणिवरवंदउं दिढचरित्त चउवीसह गंथह जे विरत्त। ते मुणिवरवन्दउ जगपवित्त॥११॥

जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त। वंदामि महारिसि मोखपत्त। रयणत्तयरंजिय सुद्धभाव। ते मुणिवर वंदउं ठिदिसहाव॥१२॥

घत्ता।

जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधू अणुराईया।
रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिवर मइ झाईया॥१३॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

देवशास्त्र गुरु की भाषा पूजा।

अडिल्ल छन्द।

प्रथम देव अरहन्त सु श्रुतसिद्धान्तजू।
गुरु निरग्रंथ महन्त मुकतिपुर पन्थजू॥
तीन रतन जगमांहि सो ये भवि ध्याइये।
तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाइये॥१॥

दोहा- पूजों पद अरहंत के, पूजों गुरु पद सार।
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्ट प्रकार॥२॥

बड़ा जैन-ग्रन्थ-संग्रह

वेदनीयकर्म
८

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह! अत्र ममसन्निहितो भवभववषट्

गीता छन्द

सुरपति उरग नरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपदप्रभा।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल, देख छवि मोहित सभा॥
वर नीरक्षीर समुद्रघटभरि,अग्र तसु वहु विधि नचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥१॥

दोहा—मलिन वस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन॥१॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

जे त्रिजग उदरमँझार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन, सरस चन्दन घसि सचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं॥२॥

दोहा—चन्दन शीतलता करै, तपतवस्तु परवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

यह भवसमुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि ठई।
अति दृढ़ परमपावन यथारथ, भक्ति वर नौका सही॥
उजल अखंडित सालि तंदुल,-पुंज धरि त्रयगुण जचूं।
अरहंतश्रुतिसिद्धांतगुरू निरग्रंथ नितपूजा रचूं॥३॥

दोहा—तंदुल सालि सुगन्धि अति, परम अखंडित बीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

जे विनयवंत सुभव्यउरअंबुजप्रकाशन भान हैं ।
जे एकमुखचारित्र भाषत, त्रिजगमाहिं प्रधान हैं ॥
लहि कुंदकमलादिक पहुप, भव भव कुवेदनसों बचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ४ ॥

दोहा—विविधभाँति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।
तासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

अति सबल मदकंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुड़समान है ॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित नैवेद्य करि घृतमें पचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ५ ॥

दोहा—नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन ।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा ॥५ ॥

जे त्रिगज उद्यम नाश कीनें मोहतिमिर महावली ।
तिहिकर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशजोति प्रभावली ॥
इह भाँति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ६ ॥

दोहा—स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकर हीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगन्धि ताकरि सकल परिमलता हँसै॥

इह भांति धूप चढ़ाय नित, भवज्वलनमाहिं नहिं पचूं
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥७॥

दोहा-अग्नि मांहि परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन।
जासों पूजों परम पद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥७॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्र गुरुभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं निर्वपामति स्वाहा ॥७॥

लोचन सुरसना घ्रान उर, उत्साह के करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकलफलगुणसार हैं॥
सो फल चढ़ावत अर्थ पूरन, परम अमृतरस सचूं।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥८॥

दोहा- जे प्रधान फल फल विषैं, पंचकरण-रसलीन।
जासों पूंजों परम पद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥८॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

जल परम उज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं।
वर धूप निरमल फल विविध, बहुजनमके पातकहरूं॥

इहभाँति अर्घ चढ़ाय नित भवि, करत शिवपंकति मचूं
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥

दोहा– वसुविधि अर्घ सँजोयके, अति उछाह मन कीन ।
आसों पूजों परम पद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥९॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ पद प्राप्ताये अर्घं निर्वपामिति स्वाहा ॥९॥

अथ जयमाला ।

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार ।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥ १ ॥

पद्धड़ि छन्द ।

चउकर्मकि त्रेसठ प्रकृति नाशि । जीते अष्टादशदोषराशि जे परम सगुण हैं अनन्त धीर । कहवत के छयालिस गुण गँभीर ॥ २ ॥

शुभसमवसरण शोभा अपार । शत इन्द्र नमत कर सीस धार । देवादिदेव अरहन्त देव । वन्दों मनवचतनकरि सुसेव ॥३॥

जिन की धुनि ह्वै ओंकाररूप । निर अक्षरमय महिमा अनूप । दश अष्ट महाभाषा समेत । लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥

सो स्याद्वादमय सप्तभंग । गणधर गूंथे बारहसुअंग रवि शशि न हरै सो तम हराय । सो शास्त्र नमोंवहु प्रीति ल्याय ॥ ५ ॥

गुरू आचारज उवभाय साध । तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध । संसारदेहवैराग धार । निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥ ६ ॥

गुण छत्तिस पच्चिस आठ बीस । भव तारन तरन जिहाजईस । गुरु की महिमा वरनी न जाय । गुरुनाम जपों मनव चनकाय ॥ ७ ॥

सोरठा—कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै
' द्यानत ' सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीस तीर्थंकर पूजा भाषा ।

दीप अढ़ाई मेरु पन, अव तीर्थं करवीस
तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि शीस ॥ १

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरा ! अत्र अवतरत अवतरत । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत । ठःठः।
ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरा ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत । वषट् ।

इन्द्रफणीन्द्रनरेंद्र वंद्य, पद निर्मलधारी ।
शोभनीक संसार, सार गुण हैं अविकारी ।

क्षीरोदधिसम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार।
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेहमँझार॥
श्रीजिनराज हो भव, तारणतरणजिहाज॥१॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

यदि वीस पुंज करना हो, तो इस प्रकारमंत्र पढ़े

ॐ ह्रीं सीमन्धर-युग्मंधर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीर-महाभद्र-देवयशाऽजितवीर्य्येति विंशितिविद्यमानतीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

तीन लोक के जीव, पाप आताप सताये।
तिनकों साता दाता, शीतल वचन सुहाये॥
बावन चंदनसों जजूं (हो) भ्रमनतपन निरवार। सीमं०॥२॥

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरेभ्यो भवातापविनाशनाय-चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी
तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जग नामी॥
तंदुल अमल सुगंधसों (हो), पूजों तुम गुणसार। सीमं०॥३॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०॥

भविक-सरोज-विकासि, निद्यतमहर रविसे हो ।
जति श्रावक आचार कथन को, तुम्हीं बड़े हो ॥

फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदन प्रहार । सीमं० ॥४॥

ॐ ह्रीं विद्यमान विंशतितीर्थंकरेभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ॥

कामनाग विषधाम--नाशको गरुड़ कहे हो ।
छुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ।
नेवज बहु घृत मिष्टसों (हो), पूजों भूख विडार । सीमं०॥५॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ॥

उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहिं भरयो है ।
मोह महातम घोर, नाश परकाश करयो है ॥

पूजों दीपप्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार । सीमं० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनायदीपं निर्व० ॥

कर्म आठ सब काठ,--भार विस्तार निहारा ।
ध्यान अगनिकर प्रगट, सरब कीनों निरवारा ।

धूप अनूपम खेवतें (हो), दुख जलैं निरधार । सीमं० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व० ॥

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं ।
सबको छिनमें जीत, जैनके मेर खरे हैं ॥

फल अति उत्तमसों जजों (हो), वांछितफलदातार । सीमं०॥८॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलंनिर्व०

जल फल आठों दर्व, अरघ कर प्रीत धरी है ।
गणधर इंद्रनिहूतैं, थुति पूरी न करी है ।

'द्यानत' सेवक जानके (हो), जगतैं लेहु निकार । सीमं० ॥९॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व०

अथ जयमाला आरती ।

सोरठा ।

ज्ञानसुधाकर चंद, भविकखेतहित मेघ हो ।
भ्रमतमभान अमंद, तीर्थंकर वीसों नमों ॥ १ ॥

चौपाई ।

सीमंधर सीमंधर स्वामी । जुगमंधर जुगमंधर नामी ।
बाहु बाहु जिन जगजन तारे । करम सुबाहु बाहुबल दारे ॥१॥
जात सुजात केवलज्ञानं । स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं ।
ऋषभानन ऋषि भानन दोषं । अनंत वीरज वीरजकोषं ॥ २ ॥

सौरीप्रभ सौरीगुणमालं। सुगुण विशाल विशाल दयालं।
वज्रधार भवगिरिवज्जर हैं। चन्द्रानन चन्द्रानन वर है ॥३॥
भद्रबाहु भद्रनिके करता। श्रीभुजंग भुजंगम भरता।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं। नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं ॥४॥
वीरसेन वीरं जग जानै। महाभद्र महाभद्र बखानै।
नमों जसोधर जसधरकारी। नमों अजितवीरज बलधारी॥५॥
धनुष पांचसै काय विराजै। आयु कोड़िपूरब सब छाजै।
समवसरण शोभित जिनराजा। भवजलतारनतरन जिहाजा॥६॥
सम्यक रत्नत्रयनिधि दानी। लोकालोकप्रकाशक ज्ञानी।
शत इन्द्रनिकरि वंदित सोहैं। सुरनर पशु सबके मन मोहैं ॥७॥

दोहा।

तुमको पूजै वंदना, करै धन्य नर सोय।
'द्यानत' सरधा मन धरै, सो भी धरमी होय ॥८॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अ वीसतीर्थंकरोंका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवांकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥१॥

ॐ ह्रीं सीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभऋषभाननअनन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचन्द्राननचन्द्रबाहुभुजंगमईश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजित वीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीतिस्वाहा ॥ १ ॥

अकृत्रिम चैत्यालयोंका अर्घ।

कृत्याऽकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकीगतान्
वन्दे भावनव्यन्तरान्द्युतिवरान्कल्पामरान्सर्वगान्।

सद्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैर्दीपैश्च धूपैः फलै-
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शान्तये॥१॥
ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्व०
वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणिवन्दे जिनपुंगवानाम्॥२॥
अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणां
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥२॥
जम्बूधातकिपुष्करार्द्ध वसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-
श्चन्द्राम्भोजशिखण्डिकण्ठकनकप्रावृड्घनाभा जिनः ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धना
भूतानागतवर्त्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥३॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुण्डले मानुषाङ्के ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि॥४॥
द्वौ कुन्देन्दुतुषारहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ
द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियङ्गुप्रभौ ।
शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः सन्तप्तहेमप्रभा-
स्ते संज्ञानदिवाकराःसुरनुताःसिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥५॥
ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअकृत्रिमचैत्यालयेभ्यो अर्घं निर्वपामि०॥

इच्छामिभंते—चेइयभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालो-
चेओ अहलोयं तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि
जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि । तीसुवि लोएसु भवण-
वासियवाणवितरजोयसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सप-

रिवारा दिव्वेण गन्धेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्णाणेण। णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति। अहमवि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्ख-क्खओ कम्मक्खओ वोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिण-गुणसंपत्ति होउ मज्झं।

(इत्याशीर्वादः। परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्णिकमाध्याह्निकआपराह्णिकदेववंदनायां पूर्वा-चार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतंश्रीप-ञ्चमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(कायोत्सर्ग कर णमोकार मंत्र का ६ वार जाप करे)
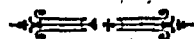
सिद्धपूजा।

ऊर्द्ध्वाधो रयुतं सबिन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं
वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्सन्धितत्वान्वितम्।
अन्तःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितं
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः॥

ॐ ह्रीं श्रीं सिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अव-तर अवतर। संवौषट्।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम्।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम्॥ १॥

(सिद्धयन्त्र की स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं
हीनादिभावरहितं भववीतकायम् ।
रेवापगावरसरो-यमुनोद्भवानां
नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं
सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम् ।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचन्दनानां
गन्धैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥२॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्व० ॥ २ ॥

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं
सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।
सौगन्ध्यशालिवनशालिवराक्षतानां
पुञ्जैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम ॥३॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ॥३॥

नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं
द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां
पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥४॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ॥४॥

ऊर्द्ध स्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं
ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् ।

क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै-
नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥५॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुद्रोगविध्वंसनाय नैवेद्यं निर्व० ॥५॥

आतङ्कशोकभयरोगमदप्रशान्तं
निर्द्वन्द्वभावधरणं महिमानिवेशम् ।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-
र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥६॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व० ॥६॥

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितान्तं
त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् ।
सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां ।
धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥७॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

सिद्धासुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै--
र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम् ।
नारिङ्गपूगकदलीफलनारिकेलैः
सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥८॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः सङ्गं वरं चन्दनं
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकम् ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥९

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं
सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं
वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥१०॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्व० ॥१०॥

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं
यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थङ्कराः ।
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणै-
र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥११॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)
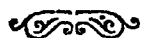
अथ जयमाला ।

विराग सनातन शान्त निरंश । निरामय निर्भय निर्मल हंस ॥
सुधाम विबोधनिधान विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१॥
विदूरितसंसृतभाव निरङ्ग । समामृतपूरित देव विसङ्ग ॥
अबन्ध कषायविहीन विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥२॥
निवारितदुष्कृतकर्मविपाश । सदामलकेवलकेलिनिवास ॥
भवोदधिपारग शान्त विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥३॥
अनन्तसुखामृतसागर धीर । कलङ्करजोमलभूरिसमीर ॥
विखण्डितकाम विराम विमोह । प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥४॥
विकारविवर्जित तर्जितशोक । विबोधसुनेत्रविलोकितलोक ॥
विहार विराव विरङ्ग विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥४॥

रजोमलखेदविमुक्त विगात्र। निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ॥
सुदर्शनराजित नाथ विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥६॥
नरामरवन्दित निर्मलभाव। अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव ॥
सदादेय विश्वमहेश विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥७॥
विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र। परापर शङ्कर सार वितन्द्र ॥
विकोप विरूप विशङ्क विमोह। प्रशीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥८॥
जरामरणोज्झित वीतविहार। विचिन्तित निर्मल निरहङ्कार ॥
अचिन्त्यचरित्र विदर्प विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥६॥
विवर्ण विगन्ध विमान विलोभ। विमाय विकाय विशब्दविशोभ
अनाकुल केवल सर्व विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१०
असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं परपरणतिमुक्तं पद्मनन्दी-
न्द्रवन्द्यम् ॥
निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं स्मरति नमति यो वा
स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥११॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिल्ल छन्द।

अविनासी अविकार परमरसधाम हो।
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ॥
शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनंत हो।
जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥१॥
ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबै दहे।
नित्य निरंजनदेव सरूपी हो रहे ॥
ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिके।
सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायके ॥२॥

दोहा।

अविचलज्ञानप्रकाशते, गुण अनंतकी खान।

ध्यान धरैं सो पाइये परम सिद्ध भगवान ॥३॥
इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

सिध्धपूजाका भवाष्टक ।

निजमनोमणिभाजनभारया समरसैकसुधारसधारया ।
सकलबोधकलारमणीयकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥१॥ जलम्
सहजकर्मकलङ्कविनाशनैरमलभावसुभापितचन्दनैः ।
अनुपमानगुणावलिनायकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥२॥
चन्दनम् ।
सहजभावसुनिर्मलतन्दुलैःसकलदोषविशालविशोधनैः ।
अनुपरोधसुबोधनिधानकं सहजसिद्धमहं परिपूजये॥३॥अक्षतान्
समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया ।
परमयोगवलेन वशीकृतं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥४॥ पुष्पम् ।
अकृतबोधसुदिव्यनिवेद्यकैर्विहितजातजरामरणान्तकैः ।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥५॥
नैवेद्यम् ।
सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकै रुचिविभूतितमः प्रविनाशनैः ।
निरवधिस्वविकाशविकाशनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥६॥
दीपम् ।
निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मकं सहजसिद्धमहं परिपूजये॥७॥धूपम्।
परमभावफलावलिसम्पदा सहजभावकुभावविशोधया । निजगुणाऽऽस्फुरणात्मनिरञ्जनं सहजसिद्धमहंपरिपूजये ॥८॥ फलम् ।

नैत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यन्तबोधाय वै
वार्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः।
यश्चिन्तामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत्
सिद्धं स्वादुमगाधबोधमचलं संचर्चयामो वयम् ॥६॥
अर्घ्यम्।

सोलहकारणका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं यजे ॥१॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड़शकारणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

दशलक्षणधर्मका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥२॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्द्दवार्ज्जव-सत्यशौचसंयमतपत्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्य्यदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा.

रत्नत्रयका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनरत्नमहं यजे ॥३॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

बीस तीर्थंकर पूजा की अचरी।

भव अटवी भ्रमत बहु जनम धरत अति मरण करत
लह जरा की विपत अति दुःख पायो।

तातें जल ल्यायो तुम ढिग आयो शांत सुधारस अब पायो ॥ श्री बीस जिनेश्वर दया निधेश्वर जगत महेश्वर मेरी बिपत हरो। भव संकट खंडो आनंद मंडो मोहि निजातम सुद्ध करो ॥१॥ पर चाह अनल मोह दहत सतत अति दुःख सहत भव विपत भरत तुम ढिग आयो। तातें ले बावन तुम अति पावन दाह मिटावन सुक्ख करो ॥२॥ फिर जनम धरत फिर मरण करत भव भ्रमर भ्रमत बहु-नाटक नट अति थकित भयो। तातें शुभ अक्षित तुम पद अर्चत भव भय तर्जित सुखद भयो ॥श्री०॥३॥ मोह काम ने सतायो चारों बामा उर लायो सुध बुध बिसरायो बहु बिपत गमायो नाना बिधकी। तातें धर फूलं तुम निरशूलं मोह विशूलं कर अबकी ॥श्री०। ४ मोह क्षुधा ने सतायो तब आशना बढ़ायो बहु याचना करायो तिहुँ पेट न भरायो अति दुःख पायो। तातें चरू धारी तुम निरहारी मोह निराकुल पद बगसो ॥श्री०॥ ५ ॥ मोहतम की चपेट तातें भयो हौं अचेत कियो जड़ ही से हेत भूलो अप्पा पर भेद तुमशरण लही। दीपक उजयारों तुम ढिन धारो स्वपर प्रकासों नाथ सही ॥श्री०॥ ६ कर्म ईंधन है भारी मोंको कियो है दुखारी ताकी बिपत गहाई नेक सुध हू न धारी तुम चरण नमूं ॥ ताते वर धूपं तुम शिव रूपं कर निज भूपं नाथ हमें ॥श्री०॥७॥ अंतराय दुःख दाई मेरी शक्ति छिपाई मोसो दीनता कराई मोकों अति दुःख दाई भयो आज लों प्रभू। तातें फल-ल्यायो तुम ढिग आयो मोक्ष महा फल देव प्रभू ॥श्री०॥८॥ आठों कर्मों ने सतायो मोकों दुःख उपजायो मोसो नाचहू न-चायो भाग तुम पिसावायो अब बच जाऊँ। बसु द्रंव्य समारी तुम ढिग धारी हे भव तारी शिव पाऊँ ॥ श्री बीस जिनेश्वर दया निधेस्वर जगत महेश्वर मेरी बिपत हरो। भव संकट

खंडो आनंद मंडो मोह निजतम शुद्ध करो ॥६॥

सिद्ध पूजा की अचरी।

हमें तृषा दुःख देत, सो तुमने जीते प्रभू।
जल सों पूजों तोय, मेरो रोग मिटाईयो ॥ १ ॥
हम भव तप वन माह, तुम न्यारे संसार सें।
कीजे शीतल छांह, चन्दन सें पूजा करों ॥ २ ॥
हम औगुण समुदाय, तुम अक्षय सब गुण भरे।
पूजों अक्षत ल्याय, दोष नाश गुण कीजिये ॥ ३ ॥
काम अग्नि तन मांह, निश्चय शील स्वभाव तुम।
फूल चढ़ाऊं मैं तोय, सेवक की बाधा हरो ॥ ४ ॥
हमें छुधा दुःख देत, ज्ञान खड्ग से तुम हने।
मेरी बाधा चूर, नेवज से पूजा करों ॥ ५ ॥
मोह तिमर हम पास, तुम पर चेतन जोत है।
पूजों दीप रसाल, मेरो तिमर नशाईयो ॥ ६ ॥
सकल कर्म बन जाल, मुक्ति माह सब सुख करें।
खेऊं धूप रसाल, ममत काल बन जारियो ॥ ७ ॥
अंतराय दुःख टार, तुम अनंत थिरता लहें।
पूजों फल धर सार, विघन टारि शिव सुख करें ॥ ८ ॥
हम पर आठों दोष, भजों अर्घ ले सिद्ध जी।
दीजे वसु गुण मोय, कर जोड़े द्यानत खड़े ॥ ९ ॥

समुच्चयचौबीसीपूजा ।

(कविवर वृन्दावनजीकृत)

छन्द कवित्त ।

वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पद्म सुपार्स जिनराय ।
चंद पुहुप शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज पूजितसुरराय ॥
विमल अनंत धरमजसउज्ज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय ।
मुनिसुव्रत नमिनेम पार्सप्रभु, वर्द्धमानपद पुष्प चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्त-चतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

द्यानतरायकृत नंदीश्वरद्वीपाष्टककी तथा गर्भारागआदि अनेक चालोंमें)

मुनिमनसम उज्जल नीर, प्रासुक गंध भरा ।
भरि कनककटोरी नीर, दीनीं धार धरा ॥
चौबीसों श्रीजिनचंद, आनँदकंद सही ।
पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशाय जलं निर्वपामि० ॥

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी ।
जिनचरनन देत चढ़ाय, भवआताप हरी ॥ चौबीसों० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योभवातापविनाशनायचंदनं निर्वपामि० ॥

तंदुल सित सोमसमान, सुंदर अनियारे।
मुकताफलकी उनमान, पुंज धरों प्यारे ॥ चौवीसों० ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि० ॥
वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगंध भरे।
जिन अग्र धरौं गुनमंड, कामकलंक हरै ॥ चौवीसों० ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामी० ॥
मनमोदनमोदक आदि, सुन्दर सद्य बने।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत छुधादि हने ॥ चौवीसों० ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्य क्षुधारोगविनाशनाय दीपं निर्वपामि० ॥
तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगै।
सब तिमिरमोह छय जाय, ज्ञानकला जागै ॥ चौवीसों ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामि० ॥
दशगंध हुताशनमाहिं, हे प्रभु खेवत हों।
मिस धूम करम जरि जाँहिं, तुम पद सेवत हों ॥ चौवीसों ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि० ॥
शुचि पक्क सुरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायो।
देखत दृगमनको प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौवीसों० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वं०
जल फल आठों शुचि सार, ताको अर्घ करों।
तुमको अरचों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों ॥
चौवीसों श्रीजिनचन्द, आनँदकंद सही।

पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि० ॥

जयमाला ।

दोहा ।

श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाय हितहेत ।
गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमरपददेत ॥ १ ॥

छन्द घत्तानन्द ।

जय भवतनभंजन जनमनकंजन, रंजन दिनमनि स्वच्छकरा ।
शिवमगपरकाशक अरिगननाशक, चौवीसों जिनराज वरा ॥२॥

छन्द पद्धरी ।

जय रिषभदेव रिषिगन नमंत । जय अजित जीत वसुअरि तुरंत॥
जय संभव भवभय करत चूर । जय अभिनंदन आनन्दपूर ॥३॥
जय सुमति सुमतिदायक दयाल । जय पद्म पद्मदुति तनरसाल ॥
जय जय सुपास भवपासनाथ । जय चंद चंददुतितनप्रकाश ॥४॥
जय पुष्पदंत दुतिदंत सेत । जय शीतल शीतलगुननिकेत ॥
जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज । जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥५॥
जय विमल विमलपददेनहार । जय जय अनंत गुनगन अपार ॥
जय धर्म धर्म शिवशर्मदेत । जय शांति शांतिपुष्टीकरेत ॥६॥
जय कुंथु कुंथआदिक रखेय । जय अर जिन वसुअरि छय करेय ॥
जय मल्लि मल्लि हतमोहमल्ल । जय मुनिसुव्रत व्रतशल्लदल्ल ॥७॥
जय नमि नित वासवनुत सप्रेम । जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम ॥
जय पारसनाथ अनाथनाथ । जय वर्द्धमान शिवनगरसाथ ॥८॥

घत्तानंद छन्द।

चौवीस जिनंदा आनंदकंदा, पापनिकंदा सुखकारी।
तिनपदजुगचंदा उदय अमंदा, वासववंदा हितकारी ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घं निर्वपामीति०

सोरठा।

भुक्तिमुक्तिदातार, चौबीसौं जिनराजवर।
तिनपद मनवचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥ १० ॥

इत्याशीर्वादः। (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत)

सप्तऋषिपूजा।

छप्पय छंद।

प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वर मन्व ऋषीश्वर।
तीसर मुनि श्रीविनय सर्वसुन्दर चौथीवर ॥
पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि।
सप्तम जयमित्राख्य सर्वचारित्रधामगनि ॥
ये सातौं चारणऋद्धिधर, करूँ तासु पद थापना।
मैं पूजूँ मनवचकायकरि, जो सुख चाहूँ आपना ॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधरश्रीसप्तऋषीश्वरा ! अत्रावतरत अवतरत संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भवत भवत। वषट्।

गीता छन्द।

शुभतीर्थउद्भव जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायके ॥
भव तृषा कंद निकंद कारण, शुद्ध घट भरवायके ॥
मन्वादि चारण ऋद्धिधारक, मुनिनकी पूजा करूँ।

ता करें पातिक हरें सारे, सकल आनँद विस्तरूँ ॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनय-लालसजयमित्रर्षिभ्यो जलं ॥ १ ॥
श्रीखण्ड कदलीनन्द केशर, मन्द मन्द घिसायके।
तसु गन्ध प्रसरति दिगदिगन्तर, भर कटोरी लायके ॥म०॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनय-लालसजयमित्रर्षिभ्यो चन्दनं ॥ २ ॥
अति धवल अक्षत खण्डवर्जित, मिष्टराजनभोगके।
कलधौत थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोगके ॥म०॥
ॐ ह्रीं मन्वादिसप्तर्षिभ्यो अक्षतान् निर्वपामि० ॥ ३ ॥
बहु वर्ण सुवरण सुमन आछे, अमल कमल गुलाब के।
केतकी चम्पा चारु मरुआ, चुने निजकर चावके ॥ म० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पुष्पं निर्वपामि० ॥ ४ ॥
पकवान नाना भांति चातुर, रचित शुद्ध नये नये।
सद्मिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरटके थारा लये ॥ म० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥
कलधौत दीपक जड़ित नाना, भरित गोघृतसारसो।
अति ज्वलित जगमग जोति जाकी, तिमिर नाशनहारसो ॥म०॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो दीपं निर्वपामि० ॥ ६ ॥
दिक्चक्र गन्धित होत जाकर, धूप दशअंगी कही।
सो लाय मन वच काय शुद्ध, लगायकर खेऊं सही ॥ म० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥
वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायके।
द्रावड़ी दाड़िम चारु पुंगी, थाल भर भर लाय के ॥म०॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो फलं निर्वपामि० ॥ ८ ॥
जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु वर, दीप धीप सु लावना।

फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥ म० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि० ॥ ६ ॥

अथ जयमाला ।

त्रिभंगी छंद ।

वन्दूं ऋषिराजा, धर्मजिहाजा, निज पर काजा, करत भले ।
करुणा के धारी, गगनविहारी, दुख अपहारी, भरम दले ॥
काटत यमफन्दा, भविजन वृन्दा, करत अनन्दा, चरणनमें ।
जे पूजें ध्यावें मंगल गावें, फेर न आवें भववनमें ॥

पद्धरी छंद ।

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत । त्रस थावर की रक्षा करंत ॥ जय मिथ्यातमनाशक पतंग । करुणारसपूरित अङ्ग अङ्ग ॥ १ ॥

जय श्रीस्वरमनु अकलंकरूप । पद सेव करत नित अमर भूप ॥ जय पंच अक्ष जीते महान । तप तपत देह कंचन समान ॥ २ ॥

जय निचय सप्त तत्त्वार्थभास । तप रमातनो तनमें प्रकाश ॥ जय विषय रोध सम्बोध मान । परणित के नाशन अचल ध्यान ॥ ३ ॥

जय जयहि सर्वसुन्दर दयाल । लखि इन्द्रजालवत जग तजाल ॥ जय तृष्णाहारी रमण राम । निज परणति में पायो विराम ॥ ४ ॥

जय आनन्दघन कल्याणरूप । कल्याण करत सबको अनूप ॥ जय मदनाशन जयवान देव । निरमद विरचित सब करत सेव ॥ ५ ॥

जय जेय विनयलालस अमान । सब शत्रु मित्र जानत

समान॥ जै कृशितकाय तप के प्रभाव। छवि छटा उड़ति आनन्ददाय ॥ ६ ॥

जै मित्र सकल जग के सुमित्र। अनगिनत अधम कीने पवित्र॥ जै चन्द्रवदन राजीव-नयन। कबहुँ विकथा बोलत न वयन॥ ७ ॥

जै सातों मुनिवर एक संग। नित गगन गमन करते अभंग॥ जय आये मथुरापुरमँझार। तहँ मरी रोगको अति प्रचार॥ ८ ॥

जय जय तिन चरणोंके प्रसाद। सब मरी देवकृत भई वाद॥ जय लोक करे निर्भय समस्त। हम नमत सदा तिन जोड़ी हस्त॥ ९ ॥

जय ग्रीषम ऋतु पर्वतमझार। नित करत अतापन योग सार॥ जय तृषा परीषह करत जेर। कहुँ रंच चलत नहिं मन सुमेर॥ १० ॥

जय मूल अठाइस गुणन धार। तप उग्र तपत आनन्दकार॥ जय बर्षा ऋतुमें वृक्षतीर। तहँ अति शीतल झेलत समीर॥ ११ ॥

जय शीत काल चौपटमँझार। कै नदी सरोवर तट विचार॥ जय निवसतध्यानारूढ़ होय। रंचक नहिं मटकत रोम कोय॥ १२ ॥

जय मृतकासन वज्रासनीय। गौदहन इत्यादिक गनीय॥ जय आसन नाना भांति धार। उपसर्ग सहत ममता निवार॥ १३ ॥

जय जपत तिहारो नाय कोय। लख पुत्र पौत्र कुल वृद्धि होय॥ जय भरे लक्ष अतिशय भंडार। दारिद्रतनो दुख होय छार॥ १४ ॥

जय चोर अग्नि डांकिन पिशाच । अरु ईतभीत सब नसत सांच ॥ जय तुम सुमरत सुख लहत लोक । सुर असुर नवत पद देत धोक ॥ १५ ॥

शेला ।

ये सातों मुनिराज महातपलछमी धारी ।
परम पूज्य पद धरें सकल जगके हितकारी ॥
जो मन वच तन शुद्ध होय सेवै औ ध्यावै ।
सो जन मनरंगलाल अष्ट ऋद्धनको पावै ॥

दोहा ।

नमत करत चरनन परत, अहो गरीब निवाज ।
पंच परावर्तननितैं, निनवारो ऋषिराज ॥
ॐ ह्रीं सप्तर्षिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ सोलहकारन पूजा ।

अडिल्ल ।

सोलहकारण भाय जे तीर्थंकर भये ।
हर्ष इन्द्र अपार मेरूपै ले गये ॥
पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चावसों ।
हमहू षोडशकारन भावैं भावसौं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणानि ! अत्रावतरताव । तरत । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत् तिष्ठत् । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम् सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

चौपाई ।

कंचनझारी निरमल नीर । पूजौं जिनवर गुनगंभीर ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरशविशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थंकरपददाय
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशाय जलं नि० ॥

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय ।
परम हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ॥

तंदुल धवल सुगंध अनूप । पूजौं जिनवर तिहुँजगभूप ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरशवि० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥

फूल सुगंध मधुपगुंजार । पूजौं जिनवर जगआधार ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥

सदनेवज बहुविध पकवान । पूजौं श्रीजिनवर गुणखान ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरशवि० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥

दीपकजोति तिमर छयकार । पूजूं श्रीजिन केवलधार ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥
दरशविशुद्ध भावना भाय । सोलह तीर्थंकरपद पाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

अगर कपूर गंध शुभ खेय । श्रीजिनवरआगें महकेय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि० ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार । पूजौं जिन वांछितदातार ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामी० ॥ ८ ॥

जल फल आठों दरव चढ़ाय । 'द्यानत' वरत करौं मनलाय

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश ० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

षोड़शकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास ।
पापपुण्य सब नाशकै, ज्ञानभान परकास ॥२॥

चौपाई १६ मात्रा ।

दरशविशुद्ध धरै जो कोई । ताको आवागमन न होई
विनय महाधारै जो प्रानी । शिववनिताकी सखी बखानी ॥२॥
शील सदा दृढ़ जो नर पालैं । सो औरन की आपद टालैं ॥
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं । ताकै मोहमहातम नाहीं ॥ ३ ॥
जो संवेगभाव विसतारै । सुरगमुकतिपद आप निहारै ॥

दान देय मन हरष विशेखै । इह भव जस परभव सुख देखै ॥४॥
जो तप तपै खपै अभिलाषा । चूरै करमशिखर गुरु भाषा ॥
साधुसमाधि सदा मन लावै । तिहुँजगभोगि भोग शिव जावै ॥५॥
निशदिन वैयावृत्य करैया । सौ निहचै भवनीर तिरैया ॥
जो अरहंतभगति मन आनै । सो मन विषय कषाय न जानै ॥६॥
जो आचारजभगति करै है । सो निर्मल आचार धरै है ॥
बहुश्रुतवंतभगति जो करई । सो नर संपूरन श्रुत धरई ॥७॥
प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता । लहै ज्ञान परमानँददाता ॥
षट्आवश्य काल जो साधै । सो ही रतनत्रय आराधै ॥८॥
धरमप्रभाव करैं जे ज्ञानी । तिन शिवमारग रीति पिछानी ॥
वत्सलअंग सदा जो ध्यावै । सो तीर्थंकरपदवी पावै ॥९॥

दोहा ।

एही सोलहभावना, सहित धरै व्रत जोय ।
देवइन्द्रनरवंद्यपद, 'द्यानत' शिवपद होय ॥१०॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामी०

(अर्घ्यके बाद विसर्जन भी करना चाहिये)
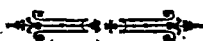
दशलक्षणधर्म पूजा ।

अडिल्ल ।

उत्तम छिमा मारदव आरजवभाव हैं ।
सत्य सौच संजम तप त्याग उपाव हैं ॥
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं ।
चहुँगतिदुखतैं काढ़ि मुकतकरतार हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्रावतर अवतर ! संवौषट्
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

सोरठा ।

हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभ ।
भवआताप निवार, दसलक्षन पूजों सदा ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय जलं निर्वपामि०॥१॥
चंदन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा । भवआ० ॥२॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चंदनं निर्वपामि०॥२॥
अमल अखंडित सार, तंदुल चंद्रसमान शुभ ॥ भवआ० ॥३॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामि०॥३॥
फूल अनेकप्रकार, महकें ऊरधलोक लों । भवआ० ॥४॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामि० ॥४॥
नेवज विविध प्रकार, उत्तम षटरससंजुउत ॥ भवआ०॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षधर्माय नैवेद्यं निर्वपामि० ॥५॥
बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी ॥ भवआ०॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामि०॥ ६ ॥
अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगंधता ॥ भवआ० ॥७॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामि०॥ ७ ॥
फलकी जाति अपार, घ्रान नयन मनमोहने ॥ भवआ० ॥८॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामि०॥ ८ ॥
आठों दरब सँवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसों ॥ भवआ०॥९॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्घ्यं निर्वपामि० ॥ ९ ॥

अंगपूजा ।

सोरठा ।

पीड़ैं दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करैं ।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजे पीतमा ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीताछन्द ।

उत्तमछिमा गहो रे भाई । इहभव जस परभव सुखदाई ॥
गाली सुनि मन खेद न आनो । गुनको औगुन कहै अयानो ॥
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बाँध मार बहुविधि करै ।
घरतैं निकारै तन विदारै वैर जो न तहां धरै ॥
तै करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीवरा ।
अतिक्रोधअगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सियरा ॥१॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

मान महाविषरूप, करति नीचगति जगतमें ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ॥ २ ॥
उत्तम मार्दवगुन मन माना । मान करनकौ कौन ठिकाना ।
वस्यो निगोदमाहितैं आया । दमरी रूकन भाग विकाया ॥
रूकन बिकाया भागवसतैं, देव इकइन्द्री भया ।
उत्तम मुआ चंडाल हूआ, भूप कीड़ों में गया ॥
जीतव्य-जोवन-धनगुमान, कहा करै जलबुदबुदा ।
करि विनय बहुगुन बड़े जनकी, ज्ञानका पावे उदा ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं उत्तमार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

कपट न कीजे कोय, चोरन के पुर ना बसै ।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु सम्पदा ॥ ३ ॥
उत्तम आर्जवरीति बखानी । रंचक दगा बहुत दुखदानी ॥
मनमें होय सो वचन उचरये । वचनहोय सो तनसौं करिये।

करिये सरल तिहुँजोग अपने; देख निरमल आरसी।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपटप्रीति अँगारसी॥
नहीं लहै लछमी अधिक छल करि, करमबन्धविसेखता।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नही देखता॥ ३॥
ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥
धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देहसो।
शौच सदा निरदोश, धरम बड़ो संसार में॥ ४॥
उत्तम शौच सर्व जग जाना। लोभ पाप को बाप बखाना॥
आसापांस महा दुखदानी। सुख पावै सन्तोषी प्राणी॥
प्रानी सदा सुचि शीलजपतप, ज्ञानध्यान प्रभावतैं।
नित गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचिदोष सुभावतैं॥
ऊपर अमल मल भरयो भीतर, कौन विध घट शुचि कहै।
बहु देह मैली सुगुनथैली, शौचगुन साधू लहै॥ ४॥
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४॥
कटुक वचन मति बोल, परनिन्दा अरु झूठ तज।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी॥ ५॥
उत्तम सत्यवरत पीलीजे। परविश्वास घात नहिं कीजै॥
सांचे झूठे मानुष देखो। आपनपूत स्वपास न पेखो॥
पेखो तिहायत पुरुष सांचे को, दरब सब दीजिये।
मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा, सांचगुन लख लीजिये॥
ऊंचे सिंहासन बैठि वसुनृप, धरम का भूपति भया।
वच झूठसेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया॥ ५॥
ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥
काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो।
संजमरतन संभाल, विषयचोर बहु फिरत हैं॥ ६॥
उत्तम संजम गहु मन मेरे। भवभव के भाजैं अघ तेरे॥

सुरग नरकपशुगतिमें नाहीं। आलसहरन करन सुख ठाहीं
ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो॥
जिस विना नहिं जिनराज सीझे; तू रुल्यो जगकीच में।
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जममुखबीचमें॥ ६॥
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥
तप चाहैं सुरराय, करमसिखरको बज्र है।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम॥७॥
उत्तम तप सब माहिं बखाना। करमशिखर को बज्र समाना॥
बस्यो अनादिनिगोदमझारा। भूविकलत्रय पशुतन धारा॥
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता।
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषमपयोगता॥
अति महादुर्लभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरै।
नरभव अनूपमकनकघरपर, मणिमयी कलसा धरै॥ ७॥
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥
दान चारपरकार, चारसंघ को दीजिये।
धन बिजुली उनहार, नरभवलाहो लीजिये॥ ८॥
उत्तमत्याग कह्यो जग सारा। औषधशास्त्र अभय अहारा॥
निहचै रागद्वेष निरवारै। ज्ञाता दोनों दान संभारै॥
दानैं संभारै कूपजलसम, दरब घर में परिनया।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया वह गया॥
धनि साध शास्त्र अभयदिवैया, त्याग राग विरोधकों॥
विन दान श्रावक साध दोनों, लहै नाहीं बोधकों॥ ८॥
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥
परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराजजी।
तिसनाभाव उछेद, घटती जान घटाइये॥ ६॥

उत्तम आकिंचन गुण जानौ। परिग्रहचिन्ता दुख ही मानौ।
फाँस तनकसी तन में सालै। चाह लँगोटी की दुख भालै॥
भालै न समता सुख कभी नर विना मुनिमुद्रा धरैं।
धनि नगनपर तन-नगन ठाड़े, सुर असुर पायनि परैं॥
घरमाहिं तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसारसौं।
वहुधन वुरा हू भला कहिये, लीन पर उपगारसौं॥ ९॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

शीलवाड़ि नौ राख, ब्रह्मभाव अन्तर लखो।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नरभव सदा॥ १०॥
उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ। माता वहिन सुता पहिचानौ॥
सहैं वानवरषा वहु सूरे। टिकैं न नैन वान लखि कूरे॥
कूरे तिया के अशुचितनमें, कामरोगी रति करैं।
वहु मृतक सड़हिं मसानमाहीं, काक ज्यों चौंचैं भरैं।
संसार में विषवेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरमदशपैंड़ि चढ़िकैं, शिवमहल में पगधरा॥ १०॥
ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१०॥

अथ जयमाला।

दोहा।

दशलक्षन वन्दौं सदा, मनवांछित फलदाय।
कहौं आरती भारती, हम पर होहु सहाय॥ १॥

वेसरी छन्द।

उत्तमछिमां जहां मन होई। अंतर बाहर शत्रु न कोई॥
उत्तममार्दव विनय प्रकासै। नानाभेद ज्ञान सब भासै॥ २॥
उत्तमआर्जव कपट मिटावै। दुरगति त्यागि सुगति उपजावै॥

उत्तमशौच लोभपरिहारी । संतोषी गुनरतनभँडारी ॥ ३ ॥
उत्तमसत्यवचन मुख बोलै । सो प्रानी संसार न डोलै ॥
उत्तमसंयम पालै ज्ञाता । नरभव सफल करै ले साता ॥ ४ ॥
उत्तमतप निरवांछित पालै । सो नर करमशत्रुको टालै ॥
उत्तमत्याग करै जो कोई । भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥ ५ ॥
उत्तमआकिंचनव्रत धारै । परमसमाधिदशा विसतारै ॥
उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै । नरसुरसहित मुकतिफल पावै ॥ ६ ॥

दोहा ।

करै करम की निरजरा, भवपींजरा विनाशि ।
अजर अमरपदकों लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्यागाकिंचनब्रह्मचर्य दशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

स्वयंभूस्तोत्र भाषा ।

चौपाई ।

राजविषै जुगलिन सुख किया । राज त्याग भवि शिवपद लिया ॥
स्वयंबोध स्वंभू भगवान । वंदौं आदिनाथ गुणखान ॥१॥
इंद्र क्षीरसागरजल लाय । मेरु न्हवाये गाय बजाय ॥
मदनविनाशक सुखकरतार । वंदौं अजित अजितपदकार ॥२॥
शुक्लध्यानकरि करमविनाशि । घाति अघाति सकल दुखराशि ॥
लह्यो मुकतिपदसुख अविकार । वंदौं शंभव भवदुख टार ॥३॥
माता पच्छिम रयनमँझार । सुपने सोलह देखे सार ॥
भूप पूछि फल सुनि हरषाय । वंदौं अभिनंदन मनलाय ॥४॥
सब कुवादवादीसरदार । जीते स्यादवादधुनिधार ॥
जैनधरमपरकाशक स्वाम । सुमतिदेवपद करहुँ प्रनाम ॥५॥

गर्भअगाऊ धनपति आय । करी नगरशोभा अधिकाय ॥
बरषे रतन पंचदश मास । नमौं पद्मप्रभु सुखकी रास ॥६॥
इंद्र फनिंद्र नरिंद्र त्रिकाल । बानी सुनि सुनि होहिं खुस्याल ॥
द्वादशसभा ज्ञानदातार । नमौं सुपारसनाथ निहार ॥७॥
सुगुन छियालिस हैं तुममाहिं । दोष अठारह कोई नाहिं ॥
मोहमहातमनाशक दीप । नमौं चंद्रप्रभ राख समीप ॥८॥
द्वादशविध तप करम विनाश । तेरहभेद चरित परकाश ॥
निज अनिच्छ भविइच्छकदान ॥ वंदौ पुहपदंत मनआन ॥
भविसुखदाय सुरगतैं आय । दशविध धरम कहो जिनराय ॥
आपसमान सबनि सुखदेह । वंदौं शीतल धर्म सनेह ॥१०॥
समता सुधा कोपविषनाश । द्वादशांगवानी परकाश ॥
चारसंघ आनँददातार । नमौ श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥११॥
रतनत्रयचिरिमुकुटविशाल । सौभे कंठ सुगुनमनिमाल ॥
मुक्तिनारभरता भगवान । वासुपूज वंदौं धर ध्यान ॥१२॥
परमसमाधिरूपजिनेश । ज्ञानी ध्यानी हितउपदेश ॥
कर्मनाशि शिवमुख विलसंत । वंदौं विमलनाथ भगवंत ॥१३॥
अंतर बाहिर परिग्रह डारि । परम दिगंबरव्रतकौं धारि ॥
सर्वजीवहित राह दिखाय । नमौं अनंत वचन मनकाय ॥१४॥
सात तत्त्व पंचासतिकाय । अरथ नवौं छहदरव बहुभाय ॥
लोक अलोक सकल परकाश । वंदौं धर्मनाथ अविनाश ॥१५॥
पंचम चक्रवरति निधिभोग । कामदेव द्वादशम मनोग ॥
शांतिकरन सोलम जिनराय । शान्तिनाथ वंदौं हरखाय ॥१६॥
बहुथुति करे हरष नहिं होय । निंदे दोष गहैं नहिं कोय ॥
शीलमान परब्रह्मस्वरूप । वंदौं कुंथुनाथ शिवभूप ॥१७॥
द्वादशगण पूजैं सुखदाय । थुतिवंदना करैं अधिकाय ॥
जाकी निजथुति कबहुं न होय । वंदौं अरजिनवर पद दोय ॥१८॥

परभव रतनत्रय अनुराग । इस भव ब्याहसमय वैराग ॥
बालब्रह्म पूरन व्रत धार । वंदौं मल्लिनाथ जिनसार ॥१९॥
विन उपदेश स्वयं वैराग । थुति लौकांत करैं पग लाग ॥
नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहिं । वंदौं मुनिसुव्रत मत देहिं ॥२०
श्रावक विद्यावंत निहार । भगतिभावसौं दिया अहार ॥
वरसे रतनराशि ततकाल । वंदौं नमिप्रभु दीनदयाल ॥२१॥
सब जीवन की बंदी छोर । रागदोष द्वै बंदन तोर ॥
रजमति तजि शिवत्रियसौं मिले । नेमिनाथ वंदौं सुखनिले॥२२॥
दैत्य कियो उपसर्ग अपार । ध्यान देखि आयो फनिधार ॥
गयो कमठ शठ मुख कर श्याम । नमौं मेरुसम पारसस्वाम॥२३॥
भवसागरतैं जीव अपार । धरमपोतमें धरे निहार ॥
डूबत काढ़े दया विचार । वर्द्धमान वंदौं वहुबार ॥२४॥

दोहा ।

चौवीसौं पदकमलजुग, वंदौं मनवचकाय ॥
'द्यानत' पढ़ै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सुहाय ॥२५॥

पंचमेरुपूजा ।

गीताछंद ।

तीर्थंकरोंके न्हवनजलतैं, भये तीरथ शर्मदा ।
तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरनकी सदा ॥
दो जलधि ढाईदीपमें सब, गनतमूल विराजही ।
पूजौं असी जिनधाम प्रतिमा, होहि सुख,दुख भाजही ॥१॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।—

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट्।

अथाष्टक।

चौपाई आंचलीबद्ध [१५ मात्रा।]

सीतलमिष्टसुवास मिलाय। जलसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख हो, देखे नाथ परमसुख होय॥
पांचों मेरु असी जिनधाम। सब प्रतिमाको करौं प्रनाम।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ १॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामि०॥ १॥

जल केसरकरपूरमिलाय। गंधसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥ पांचों०॥ २॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यास्थजिनबिम्बेभ्यः चन्दनं निर्वपामि०।

अमल अखंड सुगंध सुहाय। अच्छतसौं पूजौं जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥ पांचों०॥ ३॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षतान् नि०॥

बरन अनेक रहे महकाय, फूलनसौं पूजौं जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥ पांचों०॥ ४॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं नि०॥

मनवांछित बहु तुरत बनाय। चरुसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥ पांचों०॥ ५॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥

तमहर उज्जल जोति जगाय । दीपसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो दीपं नि० ॥

खेउं अगर परिमल अधिकाय । धूपसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो धूपं नि० ॥

सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय । फलसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो फलं नि० ॥

आठ दरवमय अरघ बनाय । 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि० ॥

अथ जयमाला ।

सोरठा ।

प्रथम सुदर्शन स्वाम, विजय अचल मन्दर कहा ।
विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जग मैं प्रगट ॥ १ ॥

वेसरी छन्द ।

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै । भद्रशाल वन भूपर छाजै ॥
चैत्यालय चारों सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥२॥

ऊपर पंच शतकपर सोहै। नंदनवन देखत मन मोहै ॥चै० ॥३॥
साढ़े बासठ सहसउंचाई। वन सुमनस शोभै अधिकाई ॥चै॥४॥
ऊंचा जोजन सहस छतीसं। पांडुकवन सोहै गिरिसीसं ॥चै०।५।
चारों मेरु समान बखानो। भूपर भद्रसाल चहु जानो ।चै०॥६॥
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतन वंदना हमारी ।चै० ॥७।
ऊंचे पांच शतकपर भाखे। चारों नंदनवन अभिलाखे ।चै०। ।८।
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतन वंदना हमारी ।चै०। ।६।
साढे पचवन सहस उतंगा। वन सोमनस चार बहुरंगा ।चै०।१०।
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतनवंदना हमारी ।चै०॥११॥
उचे सहस अट्ठाइस बताये। पांडुक चारों वन शुभ गाये ।चै०।१२
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतनवंदना हमारी ।चै०॥१३।
सुरनर चारन वंदन आवैं। सो शोभा हम किह मुख गावैं।चै०।१४
चैत्यालय अस्सी सुखकारी। मनवचतनवंदना हमारी ।चै०।१५।

दोहा।

पंचमेरुकी आरती, पढ़ै सुनै जो कोय।
'द्यानत' फल जानैं प्रभू, तुरत महासुख होय ॥१६॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥

रत्नत्रयपूजा।

दोहा।

चहुंगतिफनिविषहरनमणि, दुखपावक जलधार
शिवसुखसुधासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार ॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय! अत्रवतरावतर। संवौषट्।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितं भव भव । वषट्

सोरठा ।

क्षीरोदधि उनहार, उज्जल जल अति सोहना ।
जनमरोगनिरवार, सम्यकरत्नत्रय भजों ॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशनाय जलं निर्वपामि ॥१॥

चंदन केसर गारि, परिमल महा सुरंगमय । जन्मरोग० ॥२॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामि० ॥२॥

तंदुल अमल चितार, वासमती सुखदासके । जन्मरो०॥३॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपद्प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामि० ॥३॥

महकैं फूल अपार, अलि गुंजें ज्यों थुति करैं । जन्मरो० ॥४॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि० ॥४॥

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धता । जन्मरो० ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०
दीपरतनमय सार, जोत प्रकाशै जगत में । जन्मरो० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व०
धूप सुवास विथार, चन्दन अर्घ कपूरकी । जन्मरो० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि० ॥ ७ ॥
फलशोभा अधिकार, लौंग छुआरे जायफल । जन्मरो० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि० ॥८॥
आठदरब निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये । जन्मरो० ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि० ॥९॥

सम्यकदरसनज्ञान, व्रत शिवमग तीनों मयी ।

पार उतारन जान, 'द्यानत' पूजौं व्रतसहित ॥ १० ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामि० ॥ १० ॥

दर्शनपूजा ।

दोहा—सिद्ध अष्टगुनमय प्रगट, मुक्तजीवसोपान ।
जिहविन ज्ञानचरित अफल, सम्यकदर्श प्रधान ॥१॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितं भव भव । वषट्

सोरठा ।

नीर सुगन्ध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकदर्शनसार, आठ अङ्ग पूजौं सदा ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥
जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै । सम्यकद० ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यकद० ॥३॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥३॥
पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकद० ॥४॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यकद०॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यकद० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥
धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जड़ता हरै । सम्यकद० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
श्रीफलआदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै । सम्यकद० ॥८॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
जल गन्धाक्षत चारु; दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकद० ।६।
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति० ॥ ६ ॥

जयमाला ।

दोहा—आप आप निहचै लखै, तत्त्वप्रीति व्योहार ।
रहितदोष पच्चीस है, सहित अष्ट गुन सार॥१॥

चौपाईमिश्रित गीता छंद ।

सम्यकदरसन रतन गहीजै । जिन वचनमैं सन्देह न कीजै ।
इहभव विभवचाह दुखदानीं । परभवभोग चहै मत प्रानी ॥
प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये ।
परदोश ढकिये धरम डिगते को सुथिर कर हरखिये ॥
चहुँसंघको वात्सल्य कीजे, धरमकी परभावना ।
गुन आठसों गुन आठ लहिकै, इहां फेर न आवना ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसहितपञ्चवींशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

ज्ञानपूजा ।

दोहा—पंचभेद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशन भान ॥
मोह-तपन-हर-चन्द्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान अत्र मम सन्निहितं भव भव ।वषट्।

सोरठा ।

नीर सुगन्ध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १॥
जलकेसर घनसार, ताप हरै शीतल करै। सम्यकज्ञा० ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै। सम्यकज्ञा० ॥३॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतंनिर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै। सम्यकज्ञा० ॥४॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥
नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै। सम्यकज्ञा० ॥५॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥
दीपज्योतितमहार, घटपट परकाशै महां। सम्यकज्ञा० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यकज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥
धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जड़ता हरै। सम्यकज्ञा० ॥७॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै। सम्यकज्ञा०॥८॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु। सम्यकज्ञा० ॥६॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

अथ जयमाला।

दोहा।

आप आप जानै नियत, ग्रंथपठन व्योहार।
संशय विभ्रम मोह विन, अष्टअंग गुनकार ॥ १ ॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द।

सम्यकज्ञानरतन मन भाया। आगम तीजा नैन बताया।
अक्षर शुद्ध अरथ पहिचानौ। अक्षर अरथ उभय सँग जानौ ॥
जानौं सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये।

तपरीति गहि बहु मान देकैं, विनयगुन चित लाइये ॥
ए आठभेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पन देखना ।
इस ज्ञानहीसों भरत सीझा, और सब पटपेखना ॥२॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

चारित्रपूजा ॥

दोहा ।

विषयरोगऔषध महा, दवकषायजलधार ।
तीर्थंकर जाकौं धरैं, सम्यकचारितसार ॥१॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव । वषट्

सोरठा ।

नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकचारित धार, तेरहविध पूजों सदा ॥१॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति०
जल केशर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकचा० ॥२॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चंदनं निर्वपामीति ०
अक्षतं अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यकचा० ॥३॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा
पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यक० ॥४॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा
नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यक० ॥५॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति०

दीपजोति तमहार, घटपट परकाशै महा। सम्यकचा० ॥६॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा
धूप घ्रान सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै। सम्यकचा० ॥७॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥७॥
श्रीफलआदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै। सम्यक० ॥८॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु। सम्यक० ॥९॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अथ जयमाला।

दोहा—आपआप थिर नियत नय, तपसंजम व्योहार।
स्वपर दया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार॥ १॥

चौपाई मिश्रित गीता छंद।

सम्यकचारित रतन संभालो। पांच पाप तजिकैं व्रत पालो।
पंचसमिति त्रय गुपति गहीजे। नरभव सफल करहु तन छीजे
छीजे सदा तनको जतन यह, एक संजम पालिये।
वहु रुल्यो नरकनिगोदमाहिं, कषायविषयनि टालिये॥
शुभकरमजोग सुघाट आया, पार हो दिन जात हैं।
'द्यानत' धरमकी नाव वैठो, शिवपुरी कुशलात है॥२॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घ्यं निर्वपामीति०

अथ समुच्चय जयमाला।

दोहा—सम्यकदरशन ज्ञान व्रत, इन विन मुकत न होय।
अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जले दव-लोय॥ १॥

चौपाई १६ मात्रा।

तापै ध्यान सुथिर वन आवै। ताके करमबंध कट जावै।
तासों शिवतिय प्रीति वढ़ावै। जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै॥२॥
ताकों चहुँगतिके दुख नाहीं। सो न परै भवसागरमाहीं॥

जनमजरामृतु दोष मिटावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥३॥
सोइ दशलक्षनको साधै । सो सोलहकारण आराधै ॥
सो परमातम पद उपजावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥४॥
सोई शक्रचक्रिपद लेई । तीनलोकके सुख विलसेई ॥
सो रागादिक भाव वहावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥५॥
सोई लोकालोक निहारै । परमानंददशा विसतारै ॥
आप तिरै औरन तिरवावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥६॥

दोहा ।

एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय ।
तीनभेद व्योहार सब, द्यानतको सुखदाय ॥७॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय महर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अर्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये)

न्यामतकृत—गजल ।

तुम्हारे दर्श बिन स्वामी मुझे नहिं चैन पड़ती है । छवी वैराग्य तेरी सामने आंखों के फिरती है ॥ टेक ॥ निरा भूषण विगत दूषण परम आसन मधुर भाषण । नजर नैनोंकी नाशाकी अनीसे पर गुजरती है ॥१॥ नहीं करमोंका डर हमको कि जब लग ध्यान चरणों में । तेरे दर्शनसे सुनते कर्म रेखा भी बदलती है ॥२॥ मिले गर स्वर्गकी संपति, अचंभा कौनसा इसमें, तुम्हें जो नयन भर देखे गती दुरगतिकी टरती है ॥३॥ हजारों मूरते हमने बहुत सी गौर कर देखीं शांति मूरत तुम्हारी सी नहीं नजरों में चढ़ती है ॥४॥ जगत सरताज हो जिनराज, न्यामतको दरश दीजे, तुम्हारा क्या बिगड़ता है, मेरी बिगड़ी सुधरती है ॥५॥
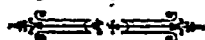
श्री नन्दीश्वर दीप (अष्टाह्निका) की पूजा।

अडिल्ल।

सर्व परव में बड़ो अठाई पर्व है।
नंदीश्वर सुर जाहिं लेंय वसु दरव हैं।
हमें सकति सो नाहिं इहां कर थापना।
पूजों जिनगृह प्रतिमा है हित आपना॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमा समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

कंचनमणिमय भृङ्गार, तीरथनीर भरा।
तिहुँ धार दयी निरवार, जामन मरन जरा॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुञ्ज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनंदभाव धरों॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

भवतपहर शीतलवास, सो चन्दननाहीं।
प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठांहीं॥ नंदी०॥ २॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये चंन्दनं निर्वपामि॥ १॥

उत्तम अक्षत जिनराज, पुञ्ज धरे सोहैं।
सब जीते अक्षसमाज, तुम सम अरु को है॥ नंदी०॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३ ॥

तुम कामविनाशक देव, ध्याऊं फूलनसौं ।
लहिं शील लच्छमी एव, छूटूं सूलनसौं ॥ नंदी० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

नेवज इन्द्रियबलकार, सो तुमने चूरा ।
चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥ नंदी० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम, तनमाहिं लसै ।
टूटै करमनकी राश, ज्ञानकणी दरसै ॥ नन्दी० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

कृष्णागरुधूपसुवास, दशदिशिनारि वरै ।
अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करैं ॥ नन्दी० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥७॥

बहुविधफल ले तिहुँकाल, आनँद राचत हैं ।
तुम शिवफल देहु दयाल, सो हम जाचत हैं ॥
नन्दीश्वरश्रीजिनधाम, बावन पुञ्ज करौं ।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनँदभाव धरौं ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥८॥

यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपत हों।
'द्यानत' कीनो शिवखेत, भूपै समरपत हों ॥ नंदी० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि ॥ ६ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

कार्तिक फागुन साढ़के, अंत आठ दिनमाहिं ।
नंदीसुर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठाहिं ॥ १ ॥

एकसौ तरेसठ कोड़ि जोजनमहा ।
लाख चौरासिया एक दिशमें लहा ॥
आठमों द्वीप नंदीश्वरं भास्वरं ।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं ॥ २ ॥
चारदिशि चार अंजनगिरी राजहीं ।
सहस चौरासिया एकदिश छाजहीं ।
ढोलसम गोल ऊपर तलैं सुन्दरं । भौन० ॥ ३ ॥
एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी ।
एक इक लाख जोजन अमल जलभरी ॥
चहुँदिशा चार वन लाखजोजनवरं । भौन० ॥ ४ ॥
सोल वापीनमधि सोल गिरि दधिमुखं ।
सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं ॥
बावरीकोंन दोमाहिं दो रतिकरं । भौन० ॥ ५ ॥
शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे ।

चार सोलै मिले सर्व बावन लहे ॥
एक इक सीसपर एक जिनमंदिरं । भौन० ॥ ६ ॥
बिंच अठ एकसौ रतनमइ सोह ही ।
देवदेवी सरव नयनमन मोह ही ॥
पांचसै धनुष तन पद्मआसनपरं । भौन० ॥ ७ ॥
लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं ।
स्यामरँग भौंह सिरकेश छवि देत हैं ॥
वचन बोलत मनों हँसत कालुषहरं । भौन ० ॥ ८ ॥
कोटिशशि भानद्युति तेज छिप जात है ।
महावैराग परिणाम ठहरात है ॥
वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यकधरं । भौन० ॥९॥

सोरठा ।

नन्दीश्वर जिनधाम, प्रतिमामहिमा को कहै ।
'द्यानत' लीनों नाम, यहै भगति सब सुख करै ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अर्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये ।)

चतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रपूजा ।

सोरठा ।

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये ।
सिद्ध भूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करौं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत । संवौषट् । ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि! अत्र तिष्ठत तिष्ठत । ठः ठः । ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाण

क्षेत्राणि अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत। वषट्।

गीता छंद।

शुचि क्षीरदधिसम नीर निरमल, कनकझारीमें भरौं।
संसारपार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं॥
सम्मेदगिरि गिरनार चंपा, पावापुरि कैलासकौं।
पूजों सदा चौवीसजिननिर्वाणभूमिनिवासकौं॥ १॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

केसर कपूर सुगंध चंदन, सलिल शीतल विस्तरौं।
भवपापको संताप मेटो, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥२॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

मोतीसमान अखंड तंदुल, अमल आनँदधरि तरौं।
औगुनहरौ गुनकरो हमको, जोरकर विनती करौं॥सम्मे०॥३

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

शुभफूलरास सुवासवासित, खेद सब मनकी हरौं।
दुखधाम काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥४

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

नेवज अनेकप्रकार जोग, मनोग धरि भय परिहरौं॥
यह भूखदूखन टारि प्रभुजी, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥५

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

दीपक प्रकाश उजास उज्जल, तिमिरसेती नहिं डरौं।
संशयविमोहविभरम-तमहर, जोरकर विनती करौं। सम्मे०६

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौं ।
सब करमपुंज जलाय दीजे, जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥७

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

बहु फल मँगाय चढ़ाय उत्तम, चारगतिसों निरवरौं ।
निहचै मुकतफल देहु मोकौं,जोर कर विनती करौं॥सम्मे०८॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं ।
'द्यानत'करो निरभय जगततैं,जोर कर विनती करौं॥सम्मे०॥९

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

सोरठा ।

श्रीचौबीसजिनेश, गिरिकैलासादिक नमों ।
तीरथमहाप्रदेश, महापुरुषनिरवाणतैं ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा ।

नमों रिषभ कैलास पहारं । नेमिनाथगिरिनार निहारं ॥
वासुपूज्य चंपापुर वंदौं । सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥२॥
वंदौं अजित अजितपददाता । वंदौं संभवभवदुखघाता ॥
वंदौं अभिनंदन गणनायक । वंदौं सुमति सुमतिके दायक ॥३॥
वंदौं पद्म मुकतिपद्माधर । वंदौं सुपार्स आशपासा हर ॥
वंदौं चंद्रप्रभ प्रभु चंदा । वंदौं सुविधिसुविधिनिधिकंदा ॥४॥
वंदौं शीतल अघतपशीतल । वंदौं श्रियांसश्रियांसमहीतल ॥

वंदौं विमल विमल उपयोगी। वंदौं अनँत अनँत सुखभोगी॥५॥
वंदौं धर्म धर्म विसतारा। वंदौं शांति शांत मनधारा॥
वंदौं कुंथु कुंथरखवालं। वंदौं अरि अरिहर गुनमालं॥६॥
वंदौं मल्लि काममल चूरन। वंदौं मुनिसुव्रत व्रतपूरन॥
वंदौं नमि जिन नमितसुरासर। वंदौं पास पासभ्रमजरहर॥७॥
बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर, सिखर समेद महागिरिभूपर॥
एकवार वंदै जो कोई। ताहि नरक पशुगति नहिं होई॥८॥
नरगतिनृप सुर शक्र कहावै। तिहुँ जग भोग भोगि शिवपावै॥
विघनविनाशक मंगलकारी। गुण विलास वंदे नरनारी॥६॥

छंद घत्ता।

जो तीरथ जावै पाप मिटावै। ध्यावै गावै भगति करै।
ताकोजस कहिये संपति लहिये, गिरिके गुणको बुध उचरै॥१०॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

अकृत्रिमचैत्यालयपूजा।

चौपाई।

आठ किरोड़ रु छप्पन लाख। सहस सत्याणव चतुशत भाख॥
जोड़ इक्यासी जिनवर थान। तीन लोक आह्वान करान॥ १॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिपट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्रावतरतावतरत। संवौषट्।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिपट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्र तिष्ठत तिष्ठत। ठः ठः।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्त-नवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

छन्द त्रिभंगी ।

छीरोदधिनीरं, उज्जल सारं, छान सुचीरं, भरि झारी ।
अति मधुरलखावन, परम, सु पावन,तृषा वुझावन,गुण भारी ॥
वसुकोटि सु छप्पन लाख सताणव, सहस चारसत इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुँजगभीतर, पूजत पद ले अविनाशी ॥१॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्त-नवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो जलं निर्वपामि ॥ १ ॥

मलयागर पावन, चन्दन वावन, तापबुझावन, घसि लीनो ।
धर कनककटोरी, द्वैकर जोरी, तुमपदओरी, चित दीनो ॥वसु०

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्त-नवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो चंदनं निर्वपामि ॥ २ ॥

बहुभांति अनोखे, तन्दुल चोखे, लखि निरदोखे, हम लीने ।
धरि कंचनथाली, तुमगुणमाली, पुञ्जविशाली कर दीने ॥वसु०॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्त-नवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३ ॥

शुभ पुष्प सुजाती, है बहुभांती, अलि लिपटाती, लेय वरं ।
धरि कनक-रकेबी करगह लेवी, तुमपद जुगकी, भेट धरं ॥
वसुकोटि सुछप्पन, लाख सताणव, सहस चारसत, इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुँजगभीतर,पूजत पद ले, अविनाशी ॥४॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्त-

नवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

खुरमा गिंदौड़ा; बरफी पेड़ा, घेवर मोदक, भरि थारी
विधिपूर्वक कीने, घृतमयभीने, खंडमेंलीने, सुखकारी ॥वसु०॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

मिथ्यात महातम, छाय रह्यो हम, निजभव परणति, नहिं सूजे ।
इहकारण पाकैं, दीप सजाकैं, थाल धराकै, हम पूजैं ॥वसु०॥६॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

दशगंध कुटाकैं, धूप बनाकैं, निजकर लेकैं, धरि ज्वाला ।
तसु धूम उड़ाई, दशदिश छाई,बहु महकाई, अति आला ॥वसु०

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥

बादाम छुहारे, श्रीफल धारे, पिस्ता प्यारे, द्राखवरं ।
इन आदि अनोखे,लखि निरदोखे,थापलजोखे,भेट धरं ॥वसु०॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

जल चंदन तंदुल, कुसुमरुनेवज, दीप धूप फल, थाल रचौं ॥
जयघोष कराऊं, बीन बजाऊं, अर्घ चढ़ाऊं, खुब नचौं ॥वसु०॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं

निर्वपामि ॥ ६ ॥

अथ प्रत्येक अर्घ।

चौपाई।

अधोलोक जिनआगमसाख। सात कोड़ि अरु बहत्तर लाख ॥
श्रीजिनभवनमहा छवि देइ। ते सब पूजौं वसुविध लेइ ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धिसप्तकोटिद्विसप्ततिलक्षाकृत्रिम श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥ १ ॥
मध्यलोकजिनमन्दिरठाट। साढ़े चारशतक अरु आठ ॥
ते सब पूजों अर्घ चढ़ाय। मनवचतन त्रयजोग मिलाय ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धिचतुःशताष्टपञ्चाशतश्रीजिन-चैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥ २ ॥

अडिल्ल।

ऊर्द्धलोकके माहिं भवनजिन जानिये।
लाख चौरासी सहस सत्यानव मानिये ॥
तापै धरि तेईस जजौं शिरनायकैं।
कंचनथालमझार जलादिक लायकैं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं ऊर्द्धलोकसम्बन्धिचतुरशीतिसप्तनवतिसहस्र-त्रयोविंशतिश्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यम् ॥ ३ ॥

गीताछन्द।

वसुकोटि छप्पनलाख ऊपर, सहससत्याणव मानिये।
सतच्यारपै गिन ले इक्यासी, भवनजिनवर जानिये ॥
तिहुँलोकभीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करैं।
तिन भवन को हम अर्घ लेकैं, पूजि हैं जगदुख हरैं ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तन-

वतिसहस्रचतुःशतैकशीतिअकृत्रिमजिन चैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ॥ ४ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

अब चरणों जयमालिका, सुनो भव्य चित लाय ।
जिनमन्दिर तिहुँ लोकके, देहुँ सकल दरसाय ॥ १ ॥

पद्धड़िछंद ।

जय अमल अनादि अनन्त जान । अनिमित जु अकीर्तम अचल मान । जय अजय अखण्ड अरूपधार । षट द्रव्य नहीं दीसैं लगार ॥ २ ॥

जय निराकार अधिकार होय । राजत अनन्तपरदेश सोय । जय शुद्ध सुगुण अवगाहपाय । दशदिशामांहि इहविधि लखाय ॥ ३ ॥

यह भेद अलोकाकाश जान । तामध्य लोक नभ तीन मान ॥ स्वयमेव बन्यो अविचल अनंत । अविनाशि अनादिजु कहत संत ॥ ४ ॥

पुरुषाअकार ठाढ़ो निहार । कटि हाथ धारि द्वै पग पसार ॥
दच्छिन उत्तरदिशि सर्व ठौर । राजू जुसात भाख्यो निचोर ॥५॥
जय पूर्व अपर दिशि घाटबाधि । सुन कथन कहूँ ताको जु साधि॥
लखि श्वभ्रतलैं राजू जु सात । मधिलोक एक राजू रहात ॥६॥
फिर ब्रह्मसुरग राजु जु पांच । भू सिद्ध एक राजू जु सांच ॥
दश चार ऊंच राजु गिनाय । षटद्रव्य लये चतुकोण पाय॥७॥
तसु वातवलय लपटाय तीन । इह निराधार लखियो प्रवीन ॥
त्रसनाड़ी तामधि जान खास । चतुकोन एक राजू जु व्यास॥८॥
राजू उतंग चौदह प्रमान । लखि स्वयंसिद्ध रचना महान ॥

तामध्य जीव त्रस आदि देय। निज थान पाय तिष्ठे भलेय॥९॥
लखि अधोभागमें शुभ्रथान। गिन सात कहे आगम प्रमान॥
षटथानमाहिं नारकि वसेय। इक शुभ्रभाग फिर तीन भेय॥१०॥
तसु अधोभाग नारकि रहाय पुनि ऊर्द्धभाग द्वव थान पाय॥
वस रहे भवन व्यंतर ज़ु देव। पुर हर्म्य छजे रचना स्वमेव॥११॥
तिह थान गेह जिनराज भाख। गिन सातकोटि बहतर ज़ु लाख॥
ते भवन नमों मनवचनकाय। गतिशुभ्रहरनहारे लखाय॥१२॥
पुनि मध्यलोक गोलाअकार। लखि दीप उदधि रचना विचार॥
गिन असंख्यात भाखे ज़ुसंत। लखिशंभुरमन सबके ज़ुअंत॥१३॥
इक राजुव्यास में सर्व जान। मधिलोकतनों इह कथन मान॥
सबमध्य दीप जंबू गिनेय। त्रयदशम रुचिकवर नाम लेय॥१४॥
इन तेरहमें जिनधाम जान। सतचार अठावन हैं प्रमान॥
खग देव असुर नर आय आय। पद पूज जाँय शिर नाय॥१५॥
जय उर्द्धलोकसुरकल्पवास। तिहँ थान छजे जिनभवन खास॥
जय लाखचुरासीपिलखेय। जय सहस सत्याणव और ठेय॥१६॥
जय बीसतीन फुनि जोड़ देय। जिनभवन अकीर्तम जान लेय॥
प्रतिभवन एक रचना कहाय। जिनबिंब एकसत आठ पाय॥१७॥
शतपंच धनुष उन्नत लसाय। पद्मासनज़ुत वर ध्यान लाय॥
शिर तीनछत्रशोभितविशाल। त्रय पादपीठ मणिजड़ितलाल॥१८॥
भामंडलकी छवि कौन गाय। फुनि चँवर ढुरत चौसठि लखाय॥
जय दुंदुभिरव अद्‌भुत सुनाय। जयपुष्पवृष्टि गंधोदकाय॥१९॥
जय तरुअशोक शोभा भलेय। मंगल विभूति राजत अमेय॥
घटतूप छजे मणिमाल पाय। घटधूपधूम्र दिग सर्व छाय॥२०॥
जय केतुपंक्ति सोहै महान। गंधर्वदेव गुन करत गान॥
सुर जनम लेत लखि अवधि पाय। तिस थान प्रथम पूजन
करत्ताय॥२१॥

जिनगेहतणा वरनन अपार । हम तुच्छबुद्धि किम लहत पार ॥
जयदेव जिनेसुर जगत भूप । नमि 'नेम' मँगै निज देहरूप॥२२॥

दोहा ।

तीनलोकमें सासते, श्रीजिनभवन विचार ॥
मनवचतन करि शुद्धता, पूजों अरघ उतार ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमश्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥ २३ ॥

(यहां धिसर्जन भी करना चाहिये ।

कवित्त ।

तिहुँ जगभीतर श्रीजिनमंदिर, बने अकोर्त्तम अति सुखदाय ।
नर सुर खग करि वंदनीक जे, तिनको भविजन पाठ कराय ॥
धनधान्यादिक संपति तिनके, पुत्रपौत्र सुख होत भलाय ।
चक्री सुर खग इंद्र होयके, करम नाश सिवपुर सुख थाय॥२४॥

(इत्याशीर्वादाय पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।)
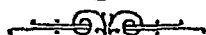
देव पूजा ।

दोहा ।

प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह ।
तुम पद पूजा करत हूँ, हमपै करुना होहि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवन् अत्र अवतरावतर । संवौषट् । *

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-

---

* संवौषडिति देवोद्देशेन हविस्त्यागे ।

जिनेन्द्रभगवन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । +

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-जिनेन्द्रभगवन् अत्र मम सन्निहितो भव भव ! वषट् । ‡

छंद त्रिभंगी ।

बहु तृषा सतायो, अति दुख पायो, तुमपै आयो जल लायो ।
उत्तम गंगा जल, शुचि अति शीतल, प्राशुक निर्मल, गुन गायो ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी दोष हरो ।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-जिनेन्द्रभगवद्भ्यो जन्माजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अघतपत नरिंतर, अगनिपटंतर, मो उर अंतर, खेद कर्‌यौ ।
लै बावन चंदन, दाहनिकंदन, तुमपदवंदन, हरष धर्‌यो ॥प्रभु०॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-जिनेभ्यो भवतापनाशाय चन्दनं ॥ २ ॥

औगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै ।
तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित, पूजत पंडित, प्रीति धरै॥प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशसद्गुणसहित-श्रीजिनेभ्योअक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति ॥ ३ ॥

सुरनर पशु को दल, काम महाबल, बात कहत छल, मोह लिया ।
ताके शर लाऊं फूल चढ़ाऊं, भगति बढ़ाऊं, खोल हिया ॥ प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-जिनेभ्योकामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

+ ठः ठः इति बृहद्ध्वनौ ।

‡ वषडिति देवोद्देश्यकहविस्त्यागे ।

सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं, भूख सदा ही मो लागै ।
सद घेवर बावर, लाड़ू बहु धर, थार कनक भर तुम आगैं ॥ प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-
जिनेभ्योक्षुद्रोगनाशाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥

अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम, दुख पावैं ।
तम मेटनहारा, तेज अपारा, दीप सँवारा, जस गावैं ॥ प्रभु० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-
जिनेभ्योमोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

इह कर्म महावन, भूल रह्यो जन, शिवमारग नहिं पावत है ।
कृष्णागरुधूपं, अमलअनूपं, सिद्धस्वरूपं, ध्यावत है ॥
प्रभु अंतरयामी, त्रिभुवननामी, सब के स्वामी, दोष हरो ।
यह अरज सुनीजे, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीं-
जिनेभ्योअष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥ ७ ॥

सबतैं जोरावर, अंतराय अरि, सुफल विघ्न करि डारत हैं ।
फलपुंज विविध भर,नयनमनोहर, श्रीजिनवरपद धारत हैं ॥प्र०

ॐ ह्रीं अष्टदशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-
जिनेभ्योमोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥

आठों दुखदानी, आठनिशानी, तुम ढिग आनी, वारन हो ।
दीननिस्तारन,अधमउधारन,' द्यानत 'तारन,कारन हो ॥प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोशरहितषट्चत्वरिंशद्गुणसहितश्री-
जिनेन्द्रभगवद्भ्योऽनर्घपदप्राप्तयेअर्घंनिर्वपामीतिस्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

गुण अनन्त को कहि सकै, छियालीस जिनराय ।
प्रगट सुगुन गिनती कहूँ, तुम ही होहु सहाय ॥ १ ॥

चौपाई (१६ मात्रा)

एक ज्ञान केवल जिन स्वामी। दो आगम अध्यातम नामी॥
तीन काल विधि परगट जानी। चार अनन्तचतुष्टय ज्ञानी॥२॥
पंच परावर्तन परकासी। छहों दरवगुनपरजयभासी॥
सातभंगवानी परकाशक। आठों कर्म महारिपुनाशक॥ ३॥
नव तत्त्वनके भाखनहारे। दश लच्छनसौं भविजन तारे।
ग्यारह प्रतिमा के उपदेशी। बारह सभा सुखी अकलेशी॥४॥
तेरहविधि चारित के दाता। चौदह मारगना के ज्ञाता॥
पंद्रह भेद प्रमादनिवारी। सोलह भावन फल अविकारी॥५॥
तारे सत्रह अंक भरत भुव। ठारे थान दान दाता तुव॥
भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन। वीस अंक गणधरजीकी धुन॥६॥
इकइस सर्व घातविधि जानै। बाइस बंध नवम गुन थानै॥
तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर। सो पूजै चौवीस जिनेश्वर॥७॥
नाश पचीस कषाय करी हैं। देशघाति छब्बीस हरी हैं॥
तत्त्व दरब सत्ताइस देखे। मति विज्ञान अठाइस पेखे॥८॥
उनतिस अंक मनुष सब जाने। तीस कुलाचल सर्व बखाने॥
इकतिस पटल सुधर्म निहारे। बत्तिस दोष समाइक टारे॥९॥
तेतिस सागर सुखकर आये। चोंतिस भेद अलब्धि बताये॥
पैंतिस अच्छर जप सुखदाई। छत्तिस कारन-रीति मिटाई॥१०॥
सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें। अठतिस पद लहि नरक अपुनमें
उनतालीस उदीरन तेरम। चालिस भवन इंद्र पूजैं नम॥११॥
इकतालीस भेद आराधन। उदै बियालिस तीर्थंकर भंन॥
तेतालीस बंध ज्ञाता नहिं। द्वार चवालिस नर चौथेमहिं॥१२॥
पैंतालीस पल्य के अच्छर। छियालीस बिन दोष मुनीश्वर॥
नरक उदै न छियालीस मुनिधुन। प्रकृति छियालीस नाश दशम गुन॥१३॥

छियालीसधन सजु साज भुव। अंक छियालीस सिरसो कहिकुव
भेद छियालीस अंतर तपवर। छियालीस पूरन गुनजिनवर॥१४॥

अडिल्ल ।

मिथ्या तपन निवारन चंद समान हो।
मोहतिमिर वारनको कारन भान हो॥
काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश हो।
'धातन' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो॥ १॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्री-
जिनेन्द्रभगवभ्द्यो पूर्णाऽर्घं निर्वपामि ॥

(पूर्णार्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये)

इति श्रीजिनेन्द्रपूजा समाप्ता ।

सरस्वती पूजा ।

दोहा ।

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जड़रीति ।
भवसागरसों ले तिरै, पूजैं जिनवचप्रीति ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहिते। भवभव । । वषट्।

त्रिभंगी ।

छीरोदधि गंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखगंगा ।
भरि कंचन झारी, धार निकारी तृखा निवारी, हित चंगा ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामि इति स्वाहा ॥ १ ॥

करपूर मंगाया, चंदन आया, केशर लाया, रंग भरी ।
शारदपद वंदौं, मन अभिनंदौं, पापनिकंदौं, दाह हरी॥तीर्थ०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अतिअनुमोदं, चंदसमं ।
बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मातममं॥तीर्थ०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३ ॥

बहुफूलसुवासं, विमलप्रकाशं, आनँदरासं, लाय धरे ।
मम काममिटायौ,शील बढ़ायौ,सुख उपजायौ,दोषहरै॥तीर्थ०४॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामि॥४॥

पकवान बनाया,बहुघृत लाया, सब विध भाया, मिष्ट महा ।
पूजूं थुति गाऊं, प्रीति बढ़ाऊं, क्षुधा नशाऊं, हर्ष लहा॥तीर्थ०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

करि दीपक ज्योतं, तमक्षय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै ।
तुम हो परकाशक,भरमविनाशक,हमघट भासक,ज्ञान बढ़ै॥तीर्थ०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमें धर, धूप मनोहर, खेवत हैं ।
सब पाप जलावैं,पुण्य कमावैं,दास कहावैं,सेवत हैं ॥तीर्थ०॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामि॥७॥

बादाम छुहारी, लौंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं ।
मनवांछित दाता, मेट असाता, तुम गुनमाता, ध्यावत हैं॥तीर्थ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि॥८॥

नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्वलभारी मोल धरै ।
सुभगंधसम्हारा, वसननिहारा, तुमतर धारा, ज्ञान करै ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्य भई ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामि॥६॥

जलचंदन अच्छत, फूलचरूचत, दीप धूप अति, फल लावै ।
पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर द्यानत, सुख पावै ॥ तीर्थं० ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामि ॥ १० ॥

अथ जयमाला ।

सोरठा ।

ओङ्कार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल ।
नमों भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै ॥

वेसरी ।

पहला आचारांग बखानो । पद अष्टादश सहस प्रमानो ।
दूजा सूत्रकृतं अभिलापं । पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ॥१॥
तीजा ठाना अंग सुजानं । सहस वियालिस पदसरधानं ॥
चौथो समवायांग निहारं । चौसठ सहस लाख इकधारं ॥२॥
पंचम व्याख्याप्रगपति दरशं । दोय लाख अट्ठाइस सहसं ।
छट्ठा ज्ञातृकथा विस्तारं । पांचलाख छप्पन हज्जारं ॥ ३ ॥
सप्तम उपासकाध्ययनंगं । सत्तर सहस ग्यारलख भंगं ।
अष्टम अन्तकृतंदस ईसं । सहस अठाइस लाख तेइसं ॥ ४ ॥
नवम अनुत्तरदश सुविशालं । लाख बानवे सहस चवालं ।

दशम प्रश्नव्याकरण विचारं । लाख तिरानवै सोलहजारं ॥५॥
ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं । एक कोड़ चौरासी लाखं ।
चार कोड़ि अरु पन्द्रह लाखं । दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥६॥
द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं । इकसौ आठ कोड़ि पन वेदं ॥
अड़सट लाख सहस छप्पन हैं । सहित पंचपद मिथ्याहनहैं ॥७॥
इक सौ बारह कोड़ि बखानो । लाख तिरासी ऊपर जानो ।
ठावन सहस पंच अधिकाने । द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥
कोड़ि इकावन आठहि लाखं । सहस चुरासी छहसौ भाख ॥
साढ़े इकीस शिलोक बताये । एक एक पद के ये गाये ॥ ९ ॥

घत्ता

जा बानी के ज्ञान में, सूझै लोक अलोक ।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हौं धोक ॥
श्रीजिनमुखोद्भूतसरस्वत्यै देव्यै पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ।

इति सरस्वतीपूजा
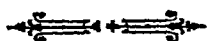
गुरुपूजा ।

दोहा

चहुँ गति दुखसागरविषै, तारनतरनजिहाज ।
रतनत्रयनिधि नगर तन, धन्य महा मुनिराज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह! अत्रावतरावतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह! अत्र

मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

गीता छन्द ।

शुचि नीर निरमल छीरदधिसम, सुगुरु चरन चढ़ाइया ।
तिहुं धार तिहुँ गदटार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ॥
भवभोगतनवैराग धार, निहार शिव तप तपत हैं ।
तिहुँ जगतनाथ अराधु साधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआचाचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जलं नि० ॥ १ ॥

करपूर चंदन सलिलसौं घसि, सुगुरुपद पूजा करौं ।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरौं ।
भवभोगतनवैराग धार निहार, शिवतप तपत हैं ।
तिहुं जगतनाथ अराध साधु सु, पूज नितगुन जपत हैं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय सर्वसाधुगुरुभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं नि०

कनका कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपगतर धरत हैं ।
गुनकार औगुनहार स्वामी, वंदना हम करत हैं ॥भव भो०॥३॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यासर्वसाधुगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०

शुभफूलरासप्रकाश परिमल, सुगुरुपांयनि परत हौं ।
निरवार मार उपाधि स्वामी, शीलदिढ़ उर धरत हौं॥भव०॥४॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०

पकवान मिष्ट सलौन सुन्दर, सुगुर पायँन प्रीतिसौं ।
कर क्षुधारोग विनाश स्वामी,सुथिर कीजे रीतिसौं॥भव०॥५॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०

दीपक उद्योत सजोत जगमग, सुगुरुपद पूजों सदा ।
तमनाश ज्ञान उजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा॥भव०॥६॥
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोहान्धकार-
विनाशनाय दीपं नि०
वहु अगर आदि सुगंध खेऊं, सुगुण पद पद्ममहिं खरे ।
दुख पुंज काट जलाय स्वामी, गुण अछय चितमें धरे॥भव०॥७॥
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय
धूपं नि० ॥ ७ ॥
भर थार पूर बदाम बहुविधि, सुगुरुक्रम आगे धरों ।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर विनती करों ॥भव०॥८॥
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्रा-
प्तये फलं नि०॥८॥
जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली ।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली॥भव०॥६॥
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्त-
ये अर्घ्यं निर्व ॥ ६ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

कनककामिनी विषयवश, दीसै सब संसार ।
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुनभंडार ॥ १ ॥
तीन घाटि नवकोड़ सब, वंदों सीस नवाय ।
गुन तिन अट्ठाईस लों, कहूँ आरती गाय ॥ २ ॥

छंद वेसरी ।

एक दया पालैं मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन परं
तीनों लोक प्रगट सब देखैं, चारों आराधननिकरं ॥

पंच महाव्रतदुद्धर धारैं, छहो दरब जानै सुहितं ।
सातभंगवानी मन लावैं, पावैं आठ रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥
नवो पदारथ विधिसौं भाखैं, बंध दशो चूरन सरनं ।
ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह वृत धरनं ॥
तेरहभेद काठिया चूरे, चौदह गुनथानक लखियं ।
महाप्रमाद पंचदश नाशे, सोलकषाय सबै नखियं ॥ ४ ॥
बंधादिक सत्रह सुतर लख, ठारह जन्म न मरन मुनं ।
एक समय उनइस परिषह, वीस प्ररूपनिमें निपुनं ॥
भाव उदीक इकीसों जानै, बाइस अभखन त्याग करं ।
अहिमिंदर तेईसों वंदैं, इन्द्र सुरग चौवीस वरं ॥ ५ ॥
पचोसों भावन नित भावै, छहसौं अंगउपंग पढ़ैं ।
सत्ताईसों विषय विनाशैं, अट्ठाईसौं गुण सु बढ़ैं ॥
शीतसमय सर चौपटवासी, ग्रीषमगिरिसिर जोग धरैं ।
वर्षा वृक्ष तरैं थिर ठाढ़े, आठ करम हनि सिद्धि वरैं ॥ ६ ॥

दोहा ।

कहों कहाँ लों भेद मैं, बुध थोरी गुन भूर ।
हेमराज, सेवक हृदय, भक्ति करी भरपूर ॥ ७ ॥
आचार्योपाध्यायसर्वसाधु गुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ।

इति गुरुपूजा समाप्ता ।
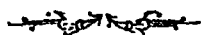
मक्सीपार्श्वनाथ पूजा ।

दोहा ।

श्री पारस परमेशजी, शिखर शीर्ष शिवधार ।
यहां पूजता भाव से, थापनकर त्रयवार ॥

ॐ ह्रीं श्रीमक्सीपार्श्वजिनेभ्यो अत्रवत्रचतरः सम्वौषटाह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ अत्र ममसन्नहितो भव भव विषट् सन्धीसकरणं ॥

अथाष्टकं ।

अष्टपदी छंद ।

लै निर्मल नीर सुजान, प्राशुक ताहि करों ।
मन वच तन कर वर आन, तुम ढिक धार धरों ॥
श्री मक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।
मम जन्म जरामृत्यु नाश, तुम गुण गावत हों ॥
ॐ ह्रीं श्रीमक्सीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रेभ्यो जलं ॥ १ ॥
घिस चन्दनसार सुवास, केसर ताहि मिलै ।
मै पूजों चरण हुलास, मन में आनन्द लै ॥
श्री मक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।
मम मोहाताप विनाश, तुम गुण गावत हों ॥सुगंधं॥२॥
तन्दुल उज्ज्व अति आन, तुम ढिग पूज्य धरों ।
मुक्ताफलके उन्मान, लेकर पूज करों ॥
श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।
संसार वास निवार तुम गुण गावत हों ॥अक्षतं॥३॥
ले सुमन विविधि के एव, पूजो तुम चरणा ।
हो काम विनाशक देव, काम व्यथा हरणा ॥
श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ।
मन वच तन शुद्ध लगाय, तुम गुण गावत हों ॥ पुष्पं॥४॥
सजथाल सु नेवजधार, उज्ज्वल तुरत किया ।
लाडू मेवा अधिकार, देखत हर्ष हिया ॥
श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच पूज करों ।

मम क्षुधा रोग निर्वार, चरणों चित्त धरों॥नैवेद्यं॥५॥
अति उज्ज्वल ज्योति जगाय, पूजत तुम चरणा।
मम मोहांधेर नशाय, आयो तुम शरणा॥
श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों।
तुम हो त्रिभुवन के नाथ, तुम गुण गावत हों॥ दीपं॥ ६॥
वर धूप दशांग बनाय, सार सुगंध सही।
अति हर्ष भाव उर ल्याय, अग्नि मभार दही॥
श्रीमक्सी पारसनाथ; मन वच ध्यावत हों।
वसु कर्मंहि कीजे क्षार, तुम गुण गावत हों॥ धूपं॥ ७॥
बादाम छुहारे दाख, पिस्ता धोय धरों।
ले आम अनार सुपक्क, शुचिकर पूज करों॥
श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों।
शिवफल दीजे भगवान, तुम गुण गावत हों॥ फलं॥ ८॥
जल आदिक द्रव्य मिलाय, वसुविधि अर्घ किया।
धर साज रकेबी ल्याय, नाचत हर्ष हिया॥
श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों।
तुम भव्यों को शिव साथ, तुम गुण गावत हों॥ अर्घं॥ ९॥

अडिल्ल।

जल गंधाक्षत पुष्प सो नेवज ल्याय के।
दीप धूप फल लेकर अर्घ बनायके॥
नाचों गाय बजाय हर्ष उरधारकर।
पूरण अर्घ चढ़ाय सुजयजयकार कर॥ पूर्णार्घं॥ १०॥

जयमाल।

दोहा।

जयजयजय जिनराजजी, श्रीपारसपरमेश।
गुण अनन्त तुम मांहि प्रभु, पर कछु गाऊं लेश॥ १॥

पद्धडि छन्द ।

श्रीबानारस नगरी महान । सुरपुर समान जानो सुथान ॥ तहां विश्वसेन नामा सुभूप । बामादेवी रानी अनूप ॥ २ ॥ आये तसु गर्भविषें सुदेव । वैशाखवदी दोइज स्वयमेव । माता को सेवें सची आन । आज्ञा तिनकी धर शीश मान ॥ ३ ॥ पुनः जन्म भयो आनन्दकार । एकादशी पौष वदी विचार ॥ तब इन्द्र आय आनन्द धार । जन्माभिषेक कीनो सुसार ॥ ४ ॥ शतवर्ष तनी तुम आयु जान । कुंवरावय तीस बरस प्रमाण ॥ नव हाथ तुंग राजत शरीर । तन हरित वरण सोहै सुधीर ॥ ५ ॥ तुम उरग चिन्ह वर उरग सोइ । तुमराजऋद्धि भुगती न कोई ॥ तपधारा फिर आनन्द पाय । एकादशि पौष वदी सुहाय ॥ ६ ॥ फिर कर्म घातिया चार नाश । वर केवलज्ञान भयो प्रकाश ॥ वदि चैत्र चौथि वेला प्रभात । हरि समोसरण रचियो विख्यात ॥ ७ ॥ नाना रचना देखन सुयोग । दर्शन को आवत भव्य लोग ॥ सावन सुदि सप्तमि दिन सुधारि । तब विधि अघातिया नाश चारि ॥ ८ ॥ शिव थान लयो वसुकर्म नाशि । पद सिद्ध भयो आनंदराशि ॥ तुम्हरी प्रतिमा मक्सी मझार । थापी भविजन आनंदकार ॥ ९ ॥ तहां जुरत बहुत भवि जीव आय । कर भक्तिभाव से शीश नाय ॥ अतिशय अनेक तहां होत जान । यह अतिशय क्षेत्र भयो महान ॥ १० ॥ तहां आय भव्य पूजा रचात । कोई स्तुति पढ़ते भांति भांति ॥ कोई गावत गान कला विशाल । स्वरताल सहित सुन्दररसाल ॥ ११ ॥ कोई नाचतमन आनन्द पाय । तत थेई थेई थेई ध्वनि कराय ॥ छम छम

नूपुर बाजत अनूप। अति नटत नाट सुन्दर सरूप॥ १२ ॥ द्रुम द्रुम द्रुमता बाजत मृदंग। सननन सारंगी बजति सङ्ग॥ झननन नन झल्लरि बजे सोइ। घननन घननन ध्वनि घण्ट होइ॥ १३ ॥ इस विधि भवि जीव करें आनन्द। लहें पुण्यबन्ध करें पापमन्द॥ हम भी वन्दन कीनो अवार। सुदि पौष पञ्चमी शुक्रवार॥ १४ ॥ मन देखत क्षेत्र बढ़ो प्रयोग। जुरमिल पूजन कीनी सुलोग॥ जयमाल गाय आनन्द पाय। जय जय श्रीपारस जगति राय॥ १५ ॥

घत्ता।

जय पार्श्व जिनेशम् नुत नाकेशम् चक्रधरेशम् ध्यावत हैं।
मन वच आराधैं भव्य समाधैं ते सुरशिवफल पावत हैं॥

इत्याशीर्वादः।

[इति श्रीमक्सीपार्श्वनाथपूजा सम्पूर्णम।]

श्री गिरिनारक्षेत्र पूजा।

दोहा।
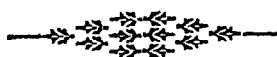
वन्दों नेमि जिनेश पद, नेम धर्म दातार।
नेम धुरन्धर परम गुरु, भविजन सुख कर्तार॥ १ ॥
जिनवाणी को प्रणमिकर, गुरु गणधर उरधार।
सिद्धक्षेत्र पूजा रचों, सब जीवन हितकार॥ २ ॥

उर्जयन्त गिरिनाम तस, कहो जगति विख्यात ।
गिरिनारी तासे कहत, देखत मन हर्षात ॥ ३ ॥

अडिल्ल ।

गिरि सुन्नत सुभगाकार है । पञ्चकूट उतंग सुधार है ॥
वन मनोहर शिला सुहावनी । लखत सुंदर मन कोभावनी ॥४॥
और कूट अनेक बने तहां । सिद्ध थान सुअति सुन्दर जहां ।
देखि भविजन मन हर्षावते । सकल जन वन्दन कोआवते ॥५॥

त्रिभंगी छन्द ।

तहां नेम कुमारा, व्रत तप धारा, कर्म विदारा, शिव पाई ।
मुनि कोडि वहत्तर, सात शतक धर, ता गिरि ऊपर सुखदाई ॥
भये शिवपुरवासी, गुण के राशी, विधिथित नाशी, ऋद्धिधरा ।
तिनके गुण गाऊं, पूज रचाऊं, मन हर्षाऊं, सिद्धि करा ॥

दोहा ।

ऐसो क्षेत्र महान, तिहि पूजत मन वच काय ।
स्थापत त्रय वारकर, तिष्ट तिष्ट इत आय ॥
ॐ ह्रीं श्री गिरिनारि सिद्धिक्षेत्रेभ्यो ॥ अत्र अत्रवतरः सम्वौषटाह्वाननम् । अत्र तिष्ट तिष्ट ठः ठः स्थापनम् ॥ अत्र ममसन्नहितो भव भव वषट् सन्धीकरण ।

अथाष्टकं ।

माधवी वा किरीट छन्द ।

लेकर नीरसुक्षीरसमान महा सुखदान सुप्रासुक भाई ।
दे त्रय धारजजों चरणां हरना मम जन्मजरा दुःखदाई ॥

श्रीगिरनारजीका नकशा.

श्री अतिशयक्षेत्र पपौराजी [टीकमगढ़]

नेम पती तज राजमती भये बालयती तहां से शिवपाई ।
कोडि वहत्तरि सातसै सिद्ध मुनीश भये सुजजों हरषाई ॥
ॐ ह्रीं श्रीगिरिनारि सिद्धक्षेत्रेभ्यो: । जलं ॥ १ ॥

चन्दनगिरि मिलाय सुगन्ध सु ल्याय कटोरी में धरना । मोह महातप मैंटन काजसौ चरचतु हों तुम्हरे चरणा ॥ नेमिपती० ॥ सुगन्धं ॥ २ ॥ अक्षत उज्ज्वल ल्याय धरों तहां पुंज करों मन को हर्षाई । देहु अक्षयपद प्रभु करुणा कर फेर नर्या भव वास कराई ॥ नेमपती० ॥ अक्षतम् ॥ ३ ॥ फूल गुलाब चमेली बेल कदम्ब सुचम्पक तोर सुल्याई। प्राशुक पुष्प लवंग चढ़ाय सुगाय प्रभु गुणकाम नशाई ॥ नेमपती० ॥ पुष्पम् ॥ ४ ॥ नेवज नव्य करों भर थाल सुकन्चन भाजन में धर भाई ॥ मिष्ट मनोहर क्षेपत हों यह रोग क्षुधा हरियो जिनराई ॥ नेमपती० ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥ दीप बनाय धरों मणिका अथवा घृतवार्ति कपूर जलाई । नृत्य करोंकर आरति ले मम मोह महातम जाय पलाई ॥ नेमपती० ॥ दीपं ॥ ६ ॥ धूप दशाँग सुगन्ध मईकर खेवहुं अग्नि मझार सुहाई । लौंकर अर्ज सुनों जिनजी मन क़र्म महावन देउ जराई ॥ नेमपती० ॥ धूपम् ॥ ७ ॥ ले फल सार सुगंधमई रसनाह्रद नेत्रन को सुखदाई । क्षेपत हों तुम्हरे चरणा प्रभु देहु हमें शिवकी ठकुराई । नेम-पती० ॥ फलं ॥ ८ ॥ ले वसु द्रव्यसु अर्घ करों धरथाल सु मध्य महा हर्षाई । पूजत हों तुम्हरे चरणा हरिये वसुकर्म वली दुःखदाई ॥ नेमपती० ॥ अर्घं ॥ ६ ॥

दोहा ।

पूजत हों वसुद्रव्य ले, सिद्धक्षेत्र सुखदाय ।
निजहित हेतु सुहावनो, पूर्ण अर्घ चढ़ाय ॥ पूर्णार्घं ॥१०॥

पंच कल्याणार्घ ।

पाइत्ता छंद ।

कार्तिक सुदिकी छठि जानो । गर्भागम तादिन मानो ।
उत इन्द्र जजे उस थानी । इत पूजत हम हर्षानी ।
ॐ ह्रीं कार्तिक सुदि छठि गर्भमंगल प्राप्तेभ्योः अर्घं ॥१॥
श्रावण सुदि छठि सुखकारी । तब जन्ममहोत्सव धारी ।
सुरराजगिरिः अन्हवाई । हम पूजत इत सुख पाई ॥
ॐ ह्रीं श्रावण सुदी छठी जन्ममंगल धारणेभ्यो ॥अर्घं॥२॥
सित सावनकी छठि प्यारी । तादिन प्रभु दिक्षाधारी ।
तप घोर वीर तहां करना । हम पूजत तिनके चरणा ॥
ॐ ह्रीं सावन सुदी छठि दिक्षा।धारणेभ्यो ॥अर्घं ॥३॥
एकम सुदि अश्विन मासा । तब केवल ज्ञान प्रकाशा ।
हरि समवशरण तब कीना । हम पूजत इत सुख लीना ॥
ॐ ह्रीं आश्विन सुदी एकम केवलकल्याणप्राप्ताय॥अर्घं॥४
सित अष्टमि मास अषाढ़ा । तब योग प्रभुने छांड़ा ।
जिन लई मोक्ष ठकुराई । इत पूजत चरणा भाई ॥
ॐ ह्रीं आषाड़ सुदी अष्टमी मोक्षमङ्गलप्राप्ताय ॥अर्घं॥५॥

अडिल्ल ।

कोड़ि बहत्तरि सप्त सैकड़ा जानिये ।
मुनिवर मुक्ति गये तहांसे सुप्रमाणिये ॥
पूजों तिनके चरण सु मनवचकायके ।
वसुविधि द्रव्य मिलाय सुगाय बजायके॥पूर्णार्घं॥

जयमाला

दोहा ।

सिद्धक्षेत्र जग उच्च थल, सब जीवन सुखदाय ।
कहों तास जयमालका, सुनते पाप नशाय ॥ १ ॥

पद्धड़ी छंद ।

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान । गिरिनारि सुगिरि उन्नत बखान ।। तहां झूनागढ़ है नगर सार । सौरष्ट्र देशके मध्य-सार ।। २ ।। जब झूनागढ़से चले सोई । समभूमि कोस वर तीन होई ॥ दरवाजेसे चल कोस आध । एक नदी बहत है जल अगाध ॥ ३ ॥ पर्वत उत्तर दक्षिण सु दोइ । मध्यनदी बहति उज्ज्वल सु तोय ॥ ता नदी मध्य कई कुण्ड जान । दोनों तट मंदिर बने मान ॥ ४ ॥ तहां वैरागी वैष्णव रहांय । भिक्षा कारण तीरथ करांय ॥ इक कोस तहां यह मचो ख्याल । आगे इक वरनदी नाल ॥ ५॥ तहां श्रावकजन करते स्नान । धो द्रव्य चलत आगे सुजान ॥ फिर मृगीकुंड इक नाम जान । तहां वैरागिन के बने थान ॥ ६ ॥ वैष्णव तीर्थ जहां रचो सोई । विष्णुः पूजत आनंद होइ ॥ आगे चल डेढ़ सु कोश जाव । फिर छोटे पर्वतको चढ़ाव ॥ ७ ॥ तहां बंधी पैरकारी सुजान । चल तीन कोश आगे प्रमाण ॥ तहां तीन कुंड सोहैं महान । श्रीजिनके युग मंदिर बखान ॥ ८ ॥ दिगाम्बर के जिनके सुथान । श्वेताम्बर के बहुते प्रमाण ॥ जहां बनी धर्मशाला सु जोइ । जलकुंड तहां निर्मल सुतोय ॥ ९ ॥ फिर आगे पर्वतपर चढ़ाव । चढ़ प्रथम कूटको चले जाव ॥ तहां दर्शनकर आगे सुजाय । तहां द्वितिय टोंक का दर्श पाय ॥ १० ॥ तहां नेमनाथ

के चरण जान। फिर है उतार भारी महान ॥ तहां चढ़कर पंचम टोंक जाय। अति कठिन चढ़ाव तहां लखाय ॥ ११ ॥ श्रीनेमनाथका मुक्तिथान। देखत नयनों अति हर्षमान ॥ इक बिम्ब चरणयुग तहां जान। भवि करत वन्दना हर्ष ठान ॥१२॥ कोई करते जय जय भक्ति लाय। कोई स्तुति पढ़ते तहां बनाय ॥ तुम त्रिभुवन पति त्रैलोक्य पाल। मम दुःख दूर कीजे दयाल ॥ १३ ॥ तुम राज ऋद्धि भुगति न कोई। यह अथिररूप संसार जोई ॥ तज मातपिता घर कुटुमद्वार। तज राजमतीसी सती नार ॥ १४ ॥ द्वादश भावना भाई निदान। पशुवन्दि छोड़ दे अभय दान शेसावन में शिक्षा सुधार। तप कर तहां कर्म किये सुधार ॥१५॥ ताही वन केवल ऋद्धि पाय। इन्द्रादिक पूजे चरण आय तहां समोशरण रचियो विशाल। मणिपंच वर्णकर अति रसाल ॥ १६ ॥ तहां वेदी कोट सभा अनूप। दरवाजे भूमि बनी सुरूप ॥ वसु प्रातिहार्य छत्रादि सार। वर द्वादश सभा बनी अपार ॥ १७ ॥ करके विहार देशों मझार। भवि जीव करे भवसिंधु पार ॥ पुन टोंक पंचमी को सुजाय। शिव थान लहो आनन्द पाय ॥ १८ ॥ सो पूजनीक वह थान जान। बन्दत जन तिनके पापहान ॥ तहां से सुबहत्तर कोड़िं और। मुनि सात शतक सब कहे और ॥ १९ ॥ उस पर्वत से शिवनाथ पाय। सब भूमि पूजने योग्य थाय ॥ तहां देश देश के भव्य आय। बन्दन कर बहु आनन्द पाय ॥ २० ॥ पूजन कर कीनो पापनाश। बहु पुण्य बन्ध कीनो प्रकाश ॥ यह ऐसा क्षेत्र महान जान। हम वन्दना कीनी हर्ष ठान ॥ २१ ॥ उनईस शतक उनतीस जान। सम्बत अष्टमि सित फाग मान॥ सब संघ सहित बंदन कराय। पूजा कीनी आनन्द पाय ॥ २२ ॥ सब दुःख दूर कीजे दयाल। कहैं चन्द्र कृपा कीजे कृपाल ॥ मैं

अल्प बुद्धि जयमाल गाय । भवि जीव शुद्ध-जैकी बनाय ॥ २३ ॥ घत्ता ॥ तुम दया विशाला सब क्षितिपाला तुम गुण माला कण्ठधरी । ते भव्य विशाला तज जग जाला नावत भाला मुक्तिवरी ॥ इत्याशीर्वाद ॥

॥ इति श्रीगिरिनार क्षेत्र पूजा सम्पूर्ण ॥

सोनागिरि पूजा ।

अड़िल्ल छन्द ।

जम्बू द्वीप मझार भरत क्षेत्र सुकहो । आर्यखण्ड सुजान भद्रदेशे लहो ॥ सुवर्णगिरि अभिराम सुपर्वत है तहां । पंचकोड़ि अरु अर्द्ध गये मुनि शिव जहां ॥ १ ॥

दोहा ॥

सोनागिरिके शीश पर, बहुत जिनालय जान ।
चन्द्र प्रभू जिन आदिदे, पूजों सब भगवान ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अत्रवत्रवतरः संवौषटाह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ अत्रममसन्नहितो भव भव वषट् सन्निधी करणं ।

अथाष्टकं ।

सारंग छन्द

पद्मद्रह को नीर ल्याय गंगासे भरके ।
कनक कटोरी माहिं हेम थारन में धरके ॥
सोनागिरि के शीस भूमि निर्वाण सुहाई ।

पंचकोड़ि अरु अर्द्ध मुक्ति पहुँचे मुनिराई ॥
चन्द्र प्रभु जिन आदि सकल जिनवर पद पूजो ।
स्वर्ग मुक्ति फल पाय जाय अविचल पद हूजो ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीसपर, जेते सब जिनराय ।
तिनपद धारा तीन दे, तृषा हरण के काज ॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो ॥ जलं ॥ १ ॥
केसर आदि कपूर मिले मलयागिरि चन्दन ।
परमल अधिकी तास और सब दाह निकन्दन॥ सोना० ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीसपर । जेते सब जिनराज ।
ते सुगन्धकर पूजियो,दाह निकन्दन काज। सुगन्धं ॥ २ ॥
तंदुल धवल सुगन्ध ल्याय जल धोय पखारो ।
अक्षय पद के हेतु पुंज द्वादश तहां धारो । सोनागिरि० ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीसपर । जेते सब जिनराज ।
तिन पदपूजा कीजिये । अक्षय पदके काज ॥ अक्षतं॥ ३ ॥
वेला और गुलाव मालती कमल मंगाये ।
पारिजात के पुष्प ल्याय जिन चरण चढ़ाये ॥ सोना० ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीसपर । जेते सब जिनराज ।
ते सब पूजों पुष्प ले । मदन विनाशन काज ॥ पुष्पं ॥ ४॥

विंजन जो जगमाहिं खांडघृत माहि पकाये।
मीठे तुरत वनाय हेम थारी भर ल्याये ॥ सोनागिरि० ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीसपर । जेते सब जिनराज ।
ते पूजों नैवेद्य ले । क्षुधा हरण के काज ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥
मणिमय दीप प्रजाल धरो पंकति भरथारी।
जिन मन्दिर तम हार करहु दर्शन नरनारी ॥ सोना० ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीसपर । जेते सब जिनराज ।
करों दीपले आरती । ज्ञान प्रकाशन काज ॥ दीपं ॥ ६ ॥
दशविधि धूप अनूप अग्नि भोजन में डालों ।
जाकी धूम सुगन्ध रहे भर सर्व दिशालों ॥ सोनागिरि० ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीसपर । जेते सब जिनराज ।
धूप कुम्भआगे धरों । कर्म दहन के काज ॥ धूपं ॥ ७ ॥
उत्तम फल जग माहिं वहुत मीठे अरु पाके ।
अमित अनार अचार आदि अमृत रस छाके ॥ सोना० ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीश पर । जेते सब निजराज ।
उत्तम फल तिन ले मिलो । कर्म विनाशन काज॥फलं॥८॥
जल आदि के वसु द्रव्य अर्घ करके धर नाचो ।
वाजे वहुत वजाय पाठ पढ़ के मुख सांचो ॥ सोना० ॥

दोहा ।

सोनागिरि के शीश पर । जेते सब जिनराज ।
ते हम पूजें अर्घ ले । मुक्ति रमण के काज ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

अडिल्ल छन्द ।

श्री जिनवर की भक्ति सो जे नर करत हैं । फल वांछा कुछ नाहि प्रेम उर धरत हैं ॥ ज्यों जगमाहिं किसानसु खेती-को करें । नाज काज जिय जान सुभुम आप ही झरें ॥
ऐसे पूजादान भक्ति वश कीजिये ।
सुख सम्पति गति मुक्ति सहज कर लीजिये ॥ पूर्णार्घं ॥ १० ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

सोनागिरि के शीस पर । जिन मन्दिर अभिराम ।
तिन गुण की जयमालिका । वर्णत आशाराम ॥ १ ॥

पद्धडि छन्द ।

गिरि नीचे जिन मन्दिर सुचार । ते यतिन रचे शोभा अपार ॥
तिनके अति दीर्घ चौक जान । तिनमें यात्री मेलें सुआन ॥२॥
गुमठी छज्जे शोभित अनूप । ध्वज पंकति सोहैं विविधरूप ॥
वसु प्रातिहार्य तहां धरे आन । सब मंगलद्रव्यनिकीसुखान ॥३॥
दरवाजों पर कलशा निहार । करजोर सुजय जय ध्वनिउचार ॥
इक मन्दिर में यतिराजमान । आचार्य विजयकीर्तिसुजान ॥४॥
तिन शिष्य भागीरथ विबुध नाम । जिनराजभक्तनहींऔरकाम॥ ।

अब पर्वतको चढ़ चलो जान। दरवाजेतहांइकशोभमान ॥५॥
तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार। तिन वंदि पूज आगेसिधार॥
तहां दुःखितभुखित को देत दान। याचक जन तहां हैं अप्रमाण
आगे जिन मन्दिर दुहु ओर। जिन गान होत वाजित्र शोर॥
माली बहु ठाड़े चौक पौर। ले हार कलगी तहां देत दौर ॥७॥
जिन यात्री तिनके हाथ माहिं। बखशीस रीझ तहां देत जाहिं
दरवाजा तहां दूजो विशाल। तहां क्षेत्रपाल दोऊ ओरलाल ॥८॥
दरवाजे भीतर चौक माहिं। जिन भवन रचे प्राचीन आहिं॥
तिनकी महिमा वरणी न जाय। दो कुण्डसुजलकरअति सुहाय
जिन मन्दिर की वेदी विशाल। दरवाजो तीजो बहुसुढाल॥
ता दरवाजे पर द्वारपाल। लेलकुट खड़े अरु हाथ माल॥ १०॥
जे दुर्जन को नहीं जान देय। ते निन्दक को ना दरश देय॥
चल चन्द्रप्रभु के चौक माहिं। दालाने तहां चौतर्फआयँ॥११॥
तहां मध्य सभामण्डप निहार। तिसकी रचना नानाप्रकार॥
तहां चन्द्रप्रभु के दरशपाय। फल जात लहो नरजन्मआय॥१२॥
प्रतिमा विशाल तहां हाथ सात। कायोत्सर्ग मुद्रा सुहात॥
बंदें पूजें तहां देंय दान। जननृत्य भजनकर मधुर गान ॥१३॥
ताथेई थेई बाजत सितार। मृदंग बीन मुहचंग सार॥
तिनकी ध्वनि सुन भवि होत प्रेम। जयकार करत नाचतसुप्रेम
ते स्तुति कर फिर नाय शीश। भवि चलें मनोंकर कर्म खीस
यह सोनागिरिरचनाअपार। वरणन कर कोकवि लहैपार॥१५॥
अति तनक बुद्धि आशासुपाय। बश भक्ति कही इतनी सुगाय
मैं मन्द बुद्धिकिमिलहौं पार। बुधिवानचूकलीजो सुधार॥१६॥

घत्ता दोहा।

सोनागिरि जय मालिका, लघुपति कही बनाय।

पढ़े सुने जो प्रीति से, सो नर शिवपुर जाय ॥ १७ ॥

इत्याशीर्वादः ।

इतिश्री सोनागिरि पूजा सम्पूर्ण ।

रविव्रत पूजा ।

अडिल्ल ।

यह भवजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही । करहु भव्यजन लोग, सुमन देकैं सही ॥ पूजों पार्श्व जिनेन्द्र त्रियोग लगायकैं । मिटै सकल सन्ताप मिले निध आय कैं ॥ मति सागर इक सेठ गन्थन कही । उनहीने यह पूजा कर आनन्द लही ॥ ताते रविवृत सार, सो भविजन कीजिये । सुख संपति सन्तान, अतुल निध लीजिये । दोहा । प्रणमो पार्श्व जिनेश को, हाथ जोड़ सिर नाय । परभव सुख के कारने, पूजा करूं बनाय ॥ एतवार वृत के दिना, एक ही पूजन ठान । ता फल सम्पति लखें, निश्चय लीजे मान ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अत्रअवतार अवतर तिष्ठ २ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो ।

अष्टकं ।

उज्जल जल भरकें अति लायो रतन कटोरन माहीं । धार देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म जरा मिट जाहीं ॥ पारसनाथ जिनेश्वर पूजों रविव्रत के दिन माई । सुख सम्पति बहु होय तुरतही, आनन्द मंगलदाई ॥ ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ मलया-

गिर केशर अति सुन्दर कुमकुम रंग बनाई। धार देत जिन चरनन आगे भव आताप नसाई ॥ पारसनाथ० ॥ सुगंधं ॥ मोती सम अति उज्जल तन्दुल ल्यावो नीर पखारो । अक्षय पद के हेतु भावसो श्री जिनवर ढिग धारो ॥ पारस० ॥ अक्षतं ॥ वेला अरसच कुन्द चमेली पारजात के ल्यावो । चुन चुन श्री जिन अग्र चढ़ाऊं मनवांछित फल पावो ॥ पारस० ॥ पुष्पं ॥ वावर फेनी गोजा आदिक घृत में लेत पकाई। कंचन थार मनोहर भरके चरनन देत चढ़ाई ॥ पारस ॥ नैवेद्य ॥ मनमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोत जगाई। जिनके आगे आरति करके मोह तिमिर नस जाई ॥पारस० ॥ दीपं ॥ चूरन कर मलयागिर चन्दन धूप दशांक बनाई। तट पावक में खेय भावसों कर्मनाश हो जाई ॥ पारसनाथ० ॥ धूपं ॥ श्रीफल आदि बदाम सुपारी भांत भांत के लावो। श्री जिन चरन चढ़ाय हरष कर तातें शिव फल पावो ॥ पारस० ॥ फलं ॥ जल गंधादिक अष्ट दरब ले अर्घ बनावो भाई। नाचत गावत हर्ष भाव सो कंचन थार भराई ॥पारस॥ अर्घ्यं॥ गीतका छंद ॥ मन वचन काय त्रिशुद्ध करके पार्श्वनाथ सु पूजिये। जल आदि अर्घ बनाय भविजन भक्तिवन्त सुहूजिये ॥ पूज्य पारसनाथ जिनवर सकल सुख दातारजी। जे करत है नरनार पूजा लहत सुःख अपारजी ॥ पूर्ण अर्घं ॥ दोहा ॥ यह जगमें विख्यात हैं, पारसनाथ महान। जिन गुनकी जयमालका भाषा करौं बखान। ॥ पद्धरी छंद ॥ जय जय प्रणमो श्री पार्श्व देव। इन्द्रादिक तिनकी करत सेव ॥ जय जय सुवनारस जन्म लीन। तिहुं लोक विषे उद्योत कीन ॥१॥ जय जिनके पितु श्री विश्वसेन। तिनके घर भये सुख चैन एन ॥ जय वामादेवी माय जान। तिनके उपजे पारस महान ॥ २ ॥ जय तीन लोक

आनन्द देन । भविजनके दाता भये एन ॥ जय जिनने प्रभु का शरन लीन । तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन ॥ ३ ॥ जय नाग नागनी भये अधीन । प्रभु चरणन लाग रहे प्रवीन ॥ तजके सो देत स्वर्ग सु जाय ! धरनेंद्र पद्मवति भये आय ॥४॥ जे चोंर अंजना अधम जान । चोरी तज प्रभुको धरो ध्यान ॥ जे मृत्यु भयें स्वर्ग सु जाय । रिद्ध अनेक उनने सुपाय ॥ ५ ॥ जें मतिसागर इक सेठ जान । जिन रविव्रत पूजा करी ठान । तिनके सुत थे परदेश माहिं । जिन अशुभ कर्म काटे सु ताहि ॥ ६ ॥ जे रविव्रत पूजन करी शेठ । ताफलकर सबसें भई भेंट । जिन जिनने प्रभुका शरन लीन । तिन रिद्धसिद्ध पाई नवीन ॥ ७ ॥ जे रविव्रत पूजा करहिं जेय । ते सुख्य अनंतानन्त लेय ॥ धरनेन्द्र पद्मवति हुय सहाय । प्रभु भक्ति जान ततकाल आय ॥ ८ ॥ पूजा विधान इहिं विध रचाय । मन वचन काय तीनों लगाय ॥ जो भक्तिभाव जैमाल गाय । सोही सुख सम्पति अतुल पाय ॥ ६ ॥ वाजत मृदंग वीनादि सार । गावत नाचत नाना प्रकार ॥ तन नन नन नन नन ताल देत । सनं नन नन सुर भर सु लेत ॥ १० ॥ ता थेई थेई थेई पग धरत जाय । छम छम छम छम घुघरू बजाय ॥ जे करहिं निरत इहिं भांत भांत । ते लहहिं सुख्य शिवपुर सुजात॥ ११ ॥ दोहा ॥ रविव्रत पूजा पार्श्वकी, करे भवक जन कोय । सुख सम्पति इहिं भव लहै, तुरत सुरग पद होय ॥ अडिल्ल ॥ रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र पूज्य भव मन धरें । भव भवके आताप सकल छिनमें टरें ॥ होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहै । सुख सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी रहै ॥ फेर सर्व विध पाय भक्ति प्रभु अनुसरें । नाना विध सुख भोग बहुरि शिव त्रियवरै ॥

इत्यादि आशीर्वादः ।

पावापुर सिद्धक्षेत्र पूजा ।

दोहा ।

जिहि पावापुर छिति अघति, हत सन्मत जगदीश ।
भये सिद्ध शुभ थानसो, जजों नाय निज शीश ॥

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्र अवतर अवतर। अत्र तिष्ठ २ ठः ठः स्थापनं ॥ अत्रममसन्निहितो भवभववषट्सन्निधीकरणं परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

अथ अष्टक गीतका छंद ।

शुचि सलिल शीतौ कलिल रीतौ श्रमन चीतो लै जिसो।
भर कनक झारी त्रिगद हारी दै त्रिधारी जित तृषौ ॥
वर पद्मवन भर पद्म सरवर बहिर पावा ग्रामही ।
शिव धाम सन्मत स्वाम पायो जजों सो सुख दामही ।

ॐ ह्रीं श्री पावापुर क्षेत्रेभ्य वीरनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ जलं ॥
भव भ्रमत २ अशर्म्म तपकी तपन कर तप ताईयो । तसु वलय कंदन मलय चंदन उदक संग घिस ल्याइयो ॥ वरपद्म० ॥ सुगन्धं ॥ तंदुल नवीन खण्ड लीने लै महीने ऊजरे । मणि कुन्दइन्दु तुषारद्युत जित कण रकाबी में धरे ॥ वरपद्म० ॥ अक्षतं ॥ मकरंद लोभन सुमन शोभन सुरभ चोभन लेयजी । मद समर हरवर अमर तरके घ्रान दृग हरवेयजी ॥ वरपद्म० ॥ पुष्पं ॥ नैवेद्य पावन छुध मिटावन सेव्य भावन हित किया । रस मिष्ट पूरत इष्ट सूरत लेय कर प्रभु हित हिया ॥ वरपद्म० ॥ नैवेद्यं ॥ तम अज्ञ नाशक स्वपर भाशक ज्ञेय परकाशक सही । हिम पात्रमें धर मौल्य विनवर द्योत धर मणि दीपही ॥

वरपद्म० ॥ दीपं ॥ आमोदकारी वस्तु सारी विध दुचारी जारनी । तसु तूप कर कर धूप लै दश दश सुरभ विस्तारनी ॥ वरपद्म० ॥ धूपं ॥ फल भक्क पक्क सुचक्क सोहन सुक्क जनमन मोहने । वर रस पुरत लख तुरत मधु रत लेय कर अत सोहने ॥ वरपद्म० ॥ फलं ॥ जल गन्ध आदि मिलाय वसु विध थार स्वर्ण भरायकें । मन प्रमुद भाव उपाय कर ले आय अर्घ बनायकें ॥ वरपद्म० अर्घं ॥ अथ जयमाल ॥ दोहा ॥ चरम तीर्थ करतार श्री, वर्द्धमान जगपाल । कल मल दल विध्र विकल हुए, गाऊं तिन जयमाल ॥ १ ॥

पद्धड़ि छंद ।

जय जय सुवीर जिन मुक्ति थान । पावापुर वन सर शोभवान ॥ जे शित असाढ़ छट स्वर्ग धाम । तज पुष्पोत्तर सु विमान ठान ॥ १ ॥ कुण्डलपुर सिद्धारथ नृपेश । आये त्रिशला जननी उरेश ॥ शित चैत्र त्रियोदश युत त्रिज्ञान । जन्में तम अज्ञ निवार भान ॥ २ ॥ पूर्वान्ह धवल चतु दिशि दिनेश । किय न्हुन कनकगिरि शिर सुरेश । वय वर्ष तीस पद कुमर काल । सुख द्रव्य भोग भुगते विशाल ॥ ३ ॥ मारगशिर अलि दशमी पवित्र । चढ़ चन्द्रप्रभु शिवका विचित्र । चलपुर से सिद्धन शीश नाय । धारो संयम वर शर्म्मदाय ॥ ४ ॥ गत वर्ष दुदश कर तप विधान । दिन शित वैशाख दशैं महान । रिजुकूला सरिता तट स्व सोध । उपजायो जिनवर चरम बोध ॥ ५ ॥ तबही हरि आज्ञा शिर चढ़ाय । रचियो समवाश्रित धनद राय । चतु संघ प्रभृत गौतम गनेश । युत तीस बरष विहरे जिनेश ॥ ६ ॥ भवि जीवन देशन विविध देत । आये घर पावानग्र खेत ॥ कार्तिक अलि अन्तम दिवस ईश ।

व्युतसग्गासन विध अघतिपीश ॥ ७ ॥ है अकल अमल इक समय माहिं । पंचम गति निवशे श्री जिनाह ॥ तव सुरपति जिन रवि अस्त जान । आये जु तुरते स्व स्व विमान ॥ ८ ॥ फर वपु अरचा थुति विविध भांत । लै विविध द्रव्य परमल विख्यात ॥ तवही अगनींद्र नवाय शीश । संस्कार देह श्री त्रिजगदीश ॥ ६ ॥ कर भस्म नन्दना स्वस्व महीय । निवसे प्रभु गुन चितवन स्वहीय । पुन नर मुनि गन पति आय आय । वंदी सोरज सिर ल्याय ल्याय ॥ १० ॥ तवहीसें सो दिन पूज्यमान । पूजत जिनग्रह जन हर्ष मान । मैं पुन पुन तिस भुवि शीश धार । वन्दो तिन गुणधर हद मझार ॥ ११ ॥ जिनहीका अब भी तीर्थ एह । वर्तत दायक अति शर्म्म गेह ॥ अरु दुषम अवसान ताहि । वर्तै गीभव थित हर सदाहि ॥१२॥ कुसमतला छंद ॥ श्री सन्मत जिन अंघ्रि पद्म जी युग जजै भव्य जो मन वच काय । ताके जन्म जन्म संतत अघ जवहिं इक छिन माहिं पलाय ॥ धनधान्यादि शर्म्म इन्द्रीजन लह सो शर्म्म अतेन्द्री पाय । अजर अमर अविनाशी शिव थल वर्णी दौल रहै थिर थाय ॥ इत्यादि आशीर्वादः ॥

चंपापुर सिद्धक्षेत्र पूजा ।

दोहा ।

उतसव किय पनवार जहँ, सुरगन युत हरि आय ।
जजों सुथल वसपूज्य सुत, चम्पापुर हर्षाय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री चंपापुर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अत्रावतरावतर संवौषट इत्याह्वाननं । १ । अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः स्थापनं । २ ।

अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ॥

अष्टक ॥ चाल नन्दीश्वर पूजनकी ॥

सम अमिय विगत त्रस वारि, लै हिम कुम्भ भरा । तब तुखत त्रिगद हरतार, दै त्रय धार धरा ॥ श्री वासुपूज्य जिनराय, निर्वृत थान प्रिया । चंपापुर थल सुखदाय, पूजों हर्ष हिया ॥ ॐ ह्रीं श्री चंपापुर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय ॥ जलं ॥ काश्मीर नीर मयगार, पति पवित्र करी । शीतलचन्दन संगसार, लै भव तापहरी ॥ श्री वासुपूज्य० ॥ सुगंधं ॥ २ ॥ मणिद्युत समखंड विहीन, तंदुल लैनीके, सौरभ युत नववर बीन, शाल महानीके ॥ श्री वासुपूज्य० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥ अलि लुमन शुमन दृग घ्राण, सुमन सुरत द्रुमके, लैवाहिम मञ्जु नवान, सुमन दमन भ्रमके ॥ श्री वासुपूज्य ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ रस पुरत तुरत पकवान, पक्क यथोक्त घृती । क्षुध गदमद मदनन जान, लैविध युक्तकृती । श्री वासपूज्य ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥ तमअज्ञ प्रनाशक सूर, शिव मग परकाशी ॥ लै रत्नद्वीप द्युत पुर, अनुपम सुखराशी ॥ श्रीवासु० ॥ दीपं ॥ ६ ॥ वर परमल द्रव्य अनूप, सोध पवित्र करी । तसुचूरण कर कर धूप, लैविध कंज हरी ॥श्रीवासु०॥७॥ धूपं ॥ फल पक्क मधुररस स्वान, पासुक बहुविधिके । लख सुखद रसन दृग घ्रान, लैप्रद पद सिधके ॥ श्रीवासु० ॥ ८ ॥ फलं ॥ जल फल वसु द्रव्य मिलाय, लैभर हिमथारी ॥ वसु अंग धरा पर ल्याय, प्रमुद स्व चितधारी ॥ श्री वासु० ॥ अर्घं ॥ अथ जयमाल ॥ दोहा ॥ भये द्वादशम तीर्थपति, चंपापुर शुभ थान । तिन गुणको जयमाल कछु, कहों श्रवण

सुख दान ॥ पद्धड़िछन्द ॥ जय जय श्री चंपापुर सो धाम। जहां राजत नृप वसुपुज नाम ॥ जन पौन पल्यसे धर्महीन। भवभ्रमन दुःखमय लख प्रवीन ॥ १ ॥ उर करुणा धर सो तम विडार। उपजे किरणावलि धर अपार ॥ श्रीवासपूज्य तिन तने वाल। द्वादशम तीर्थ कर्ता विशाल ॥ २ ॥ भवभोग देहसें विरत होय। वय वाल माहि ही नाथ सोय ॥ सिद्धन नम महंव्रत भार लीन। तप द्वादश विध उग्रोग्र कीन ॥ तहं मोह सप्तत्रय आयु येह। दशप्रकृति पूर्व ही क्षय करेह ॥ श्रेणीजु क्षपक आरूढ़ होय। गुण नवम भाग नव माहिं सोय ॥ ४ ॥ सोलह वसु इक इक षट इकेय। इक इक इक इम इन क्रम सहेय ॥ पुन दशम थान इक लोभटार। द्वादशम थान सोलह विडार ॥ ५ ॥ द्वै अंतिम चतुष्टय युक्त स्वाम। पायो सब सुखद संयोग ठाम ॥ तह काल त्रिगोचर सर्व गेय। युगपत हि समय इक महि लखेय ॥ ६ ॥ कछु काल दुविध वृष अमिय वृष्टि। कर पोषें भव भवि धान्य श्रष्टि ॥ इक मास आयु अवशेष जान। जिनयोगनकी सुप्रवर्तहान ॥ ७ ॥ ताही थल तृतिशित ध्यान ध्याय। चतुदशम थान निवसे जिनाय ॥ तह दुचरम समय मझार ईश। प्रकृति जु बहत्तर तिनहि पीश ॥ ८ ॥ तेरहको चरम समय मझार। करके श्री जगतेश्वर प्रहार ॥ अष्टमि अवनी इक समयमद्ध। निवसे पाकर निज अचल रिद्ध ॥ ९ ॥ युत गुण वसु प्रमुख अमित गुणेश। ह्वै रहे सदाही इमहिं वेश ॥ तवहीसे यो थानक पवित्र। त्रैलोक्य पूज्य गायो विचित्र ॥ १० ॥ मैं तसु रज निज मस्तक लगाय। वन्दौं पुन पुन भुवि शीशनाय ॥ ताही पद वांछा उर मझार। धर अन्य चाह बुद्धि विडार ॥ ११ ॥ दोहा। श्री चंपापुर जो पुरुष, पूजै मनवच काय।

वर्णि "दौल" सो पायही, सुख संपति अधिकाय ॥ इत्यादि आशीर्वादः ॥

इति श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्रे पूजा समाप्तम् ।
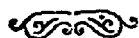
लघु पंचपरमेष्ठी विधान ।

स्व० कवि चन्द्रजो कृत

स्थापना ।

दोहा—श्रीधर श्रीकर श्रीपती, भव्यनि श्रीदातार ।
श्रीसर्वज्ञ नमो सदा, पार उतारन हार ॥ १ ॥

अडिल्ल छंद ।

चार घातिया कर्म नाशि केवल लयो ।
समोशरण तहां धनद+ आय सुंदर ठयो ॥
चौतिस अतिशय अष्ट प्रातिहारज भये ।
चार चतुष्टय सहित सगुण छयालिस लये ॥ २ ॥
कर विहार भवि जीवन पार लगाइये ।
नाश अघातिय चार सो शिवपुर जाइये ॥
जिनके गुण सु अनंत कहा वर्णन करों ।
वसु गुण हैं व्यवहार सिद्ध श्रुति उच्चरों ॥ ३ ॥

सोरठा ।

श्रीआचारज जान, धरत सदा आचारको ।
छत्तिस गुण परवान, वन्दों मन वच कायकर ॥ ४ ॥

+ कुवेर ।

दोहा—पच्चिस गुण उवझायके, ते धारें वर वीर ।
पढ़ें पढ़ावें पाठ वर, निर्मल गुण गम्भीर ॥ ५ ॥
वीस आठ गुण धारकर, साधें साधु महन्त ।
जीवदया पालें सदा, नहीं विरोधें जन्त ॥ ६ ॥

चौपाई ।

ये ही पंच परमगुरु जानो ! या सम जगमें अन्य न मानो !
जिन जीवन इन सुमरन कियो । सुर शिवथान जाय तिन लियो ।
जो प्राणी मन वच तन ध्यावें । सिंह व्याघ्र गज नाहिं सतावें ।
जो मनमें इन सुमरन लावे । ताहि सप्त भय नाहिं सतावें ॥६॥
दोहा—येही इष्ट उत्कृष्ट अति, पूजों मन वच काय ।
थापत हों अब वारकर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥१०॥
ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिनोऽत्रागच्छतागच्छत संवौषट् (आह्वाननं)
ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिनोऽत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः (प्रतिष्ठापनं)
ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिनोऽत्र मम संनिहिता भवत भवत भवत वषठ स्वाहा (सन्निधापनम्)

अष्टक ।

गीता छन्द ।

जल सरस गंग तरंगको, शुचि रंग सुन्दर लाइये ।
कंचन कटोरी माहिं भर, जिनराज चरन चढ़ाइये ॥
ये पंच इष्ट अनिष्ट हरता, दृष्टि लगत सुहावने ।
मैं अजों आनंदकन्द लखकर, दन्द फन्द मिटावने ॥
ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥
लै गारि मलयागिरि सु चन्दन, अति सुगंध मिलायके ।
मैं हर्षकर जिनचरण चर्चों, गाय साज बजायके ॥ ये पंच० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो, चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥
ले सरस तंदुल खंड विनसित, सालिके वर आनिये ।
मल धोय थार सँजोय पूजों, अखयपदको ठानिये ॥ ये० ॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्योऽक्षतान्निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
केवड़ा वेला चमेली, कुन्द सुमन सुहावने ।
केतकी आदिकसे पूजों, जगत जन मन भावने ॥ ये० ॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
लाडू पुआ पेड़ारु मिश्री, खोपरा खाजा बने ।
धर हेमथाल मझार पूजों, क्षुधा रोग निवारने ॥ ये० ॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो नैवेद्यं निर्वमाति स्वाहा ॥ ५ ॥
ले दीप मणिमय ज्योति जगमग, होत अधिक प्रकाशनी ।
कर आरती गुण गाय नाचों, मोहतिमिरविनाशनी ॥ ये० ॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥
कर चूर अगर कपूर ले, भरपूर जास सुवासकी ।
खेऊं सु अगन मझार होकरके सो सन्मुख जासकी ॥ ये० ॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
फल सरस सुख दातार, तन मन धोय जलसे लीजिये ।
धर थाल मध्य सु भक्तिसे, जिनराज चरण जजीजिये ॥ये०॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
ले नीर निर्मल गन्ध अक्षत, सुमन अरु नैवेद्य जी ।
मिल दीप धूप सु फल भले, धर अरघ परम उम्मेद जी॥ये०॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

रोड़क छन्द ।

वसु विधि अरघ संजोय, जोय जे पंच इश्वर ।
पूजों मन हुलसाय, पांय जिन प्रीति हृदय धर ॥

तुम सम अन्य न ज्ञान, जानि तुम्हरे गुण गाऊं।
धर थाली के मध्य सो, पूरण अरघ बनाऊं॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

श्रीअरहंतगुण पूजा।

सोरठा।

छयालिस गुण समुदाय, दोष अठारह टारते।
अरिहत शिवसुखदाय, मुझ तारो पूजों सदा॥ १ ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिने षट्चत्वारिंशद्गुणविभूषिताय अष्टादशदोषरहिताय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

छन्द मोतियदाम।

जिनके नहिं खेद न स्वेद कहा। तन श्रोणित दुग्ध समान महा॥
प्रथमा संस्थान विराजत है। वर वज्र शरीर सु राजत हैं॥१॥
छवि देखत भानु प्रताप नसे। तनसे सु सुगन्ध महा निकसे॥
शत लक्षण अष्ट विराजत हैं। प्रिय वैन सबे हित छाजत हैं॥२॥
दोहा—तन मल रहित अतुल्य बल, धारत हैं जिनराज॥
ये दश अतिशय जनमके, भाषे श्रीगणराज॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं सहजदशातिशयप्राप्ताय श्रीजिनाय अर्घं नि० ॥

पद्धरी छन्द।

केवल उपजे अतिशय सुजान। सो सुनो भव्य जन चित्त आन॥
शत योजन चारों दिशा माहिं। दुर्भिक्ष तहां दीखे सो नाहिं॥४॥
आकाशगमन करते जिनेश। प्राणीका घात न होय लेश॥
कवलाआहार नाहीं करात। उपसर्ग विना दीखत सो गात॥५॥
चतुरानन चारों दिशा जान। सब विद्याके ईश्वर महान॥

छाया तनकी नाहीं सो होय । टमकार पलक लागे न कोय॥६॥
नख केश वृद्धि ना होंय जास । ये दश अतिशय केवल प्रकाश॥
तिनको हम बन्दें शीशनाय । भव भवके अघ छिनमें पलाय॥७॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानजन्मदशातिशयसुशोभिताय श्रीजिनाय अर्घं नि० ॥

चौबोला छंद ।

अब देवनकृत चौदह अतिशय, सो सुन लीजे भाई ।
सकल अरथमय मागधि भाषा, सब जीवन सुखदाई ॥
मैत्रीभाव सकल जीवनके, होत महा सुखकारी ।
निर्मल दिशा लसें सब ओरी, उपजें आनँद भारी ॥ ८ ॥
अरु निर्मल आकाश विराजत, नीलवरन तन धारी ।
षट् ऋतुके फल फूल मनोहर, लागे द्रुमोंकी डारी ।
दर्पण सम सो धरनि तहाँकी, अति जिय आनँद पावे ।
निष्कंटक मेदनि विराजे, क्यों कवि उपमा गावे ॥ ९ ॥
मन्द सुगन्ध बयारि वृष्टि, गन्धोदककी चहुँघाई ।
हरषमई सब सृष्टि विराजे, आनँद मंगलदाई ॥
चरण कमल तल रचत कमल सुर, चले जात जिनराई ।
मेघ कुमारोंकृत गंधोदक, बरसे अति सुखदाई ॥ १० ॥
चउ प्रकार सुर जय जय करते, सब जीवन मन भावे ।
धर्मचक्र चले आगे प्रभुके, देखत भानु लजावे ॥
दश विधि मंगलद्रव्य धरीं, तहाँ देखत मनको मोहे ।
विपुल पुण्यका उदय भयो है, सब विभूतियुत सोहे ॥११॥

दोहा ।

ये चौदह देवन सु कृत, अतिशय कहे बखान ।
इन युत श्रीअरहंतपद, पूजों पद सुख मान ॥१२॥

ॐ ह्रीं सुरकृतचतुर्दशातिशयसंयुक्ताय श्रीजिनायअर्घंनि०॥

लक्ष्मीधरा छन्द ।

प्रातिहार्य वसु जान, वृक्ष सोहे अशोक जहाँ ।
पुष्पवृष्टि दिव्यध्वनि, सुर ढोरें सु चमर तहाँ ॥
छत्र तीन सिंहासन, भामण्डल छवि छाजे ।
वजत दुन्दुभी शब्द श्रवण, सुख हो दुख भाजे ॥१३॥
ॐ ह्रीं अष्टविधिप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीजिनाय अर्घं नि०॥

चौपाई ।

ज्ञानावरणी करम निवारा, ज्ञान अनन्त तवै जिन धारा ॥
नाश दरशनावरणी सूरा । दरशन भयो अनन्त सु पूरा ॥१४॥

दोहा ।

मोह कर्मको नाशकर, पायो सुक्ख अनन्त ।
अन्तरायको नाशकर, बल अनन्त प्रगटन्त ॥१५॥
ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयविराजमानश्रीजिनाय अर्घं नि० ॥

पाईता छन्द ।

अतिशय चौंतीस वखाने । वसु प्रातिहारज शुभ जाने ॥
पुन चार चतुष्टय लेवा । इन छयालिस गुण युत देवा॥१६॥
ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय श्रीजिनाय अर्घं नि० ॥

श्रीसिद्धगुण पूजा ।

अडिल्ल ।

दर्शन ज्ञानान्त, अनन्ता बल लहो ।
सुख अन्नत विलसंत, सु सम्यक् गुण कहो ॥

अवगाहन सु अगुरुलघु, अव्याबाध है।
इन वसु गुण युत सिद्ध, जजों यह साध है॥ १॥
ॐ ह्रीं अष्टगुण विशिष्टाय सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घं नि० ॥

श्रीआचार्य पूजा ।

दोहा—आचारज आचारयुत, निज पर भेद लखन्त ।
तिनके गुण षट् तीस हैं, सो जानो इमि सन्त ॥ १ ॥

वेसरी छंद ।

उत्तम क्षमा धरे मन माहीं । मारदव धरम मान तिहिं नाहीं ॥
आरजव सरल स्वभाव सु जानो । झूठ न कहें सत्य परमानो ।
निर्मल चित्त शौच गुण धारी । संयम गुण धारें सुखकारी ॥
द्वादश विधि तप तपत महंता । त्याग करें मन वच तन संता ॥
तज ममत्व आकिंचन पालें । ब्रह्मचर्य धर कर्मन टालें ॥
ये दश धरम धरें गुण भारी । आचारज पूजों सुखकारी ॥४॥
ॐ ह्रीं दशलाक्षणिकधर्मधारकाचार्य परमेष्ठिने अर्घं नि० ॥

वेसरी छन्द ।

अब द्वादश तप सुनिये भाई, अनशन ऊनोदर सुखदाई ॥
व्रतपरिसंख्या रस नहिं चाहें । विविक्तशैय्यासन अवगाहें ॥५॥
कायकलेश सहें दुख भारी, ये छह तप बारह गुण धारी ॥
प्रायश्चित लेवें गुरु शाखें । विनयभाव निशिदिन चित्त राखें॥६॥

दोहा ।

वैयावृत्य स्वाध्यायकर, कायोत्सर्ग सुजान ।
ध्यान करें निज रूप को, ये बारह तप मान ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं द्वादशविधितपोयुक्ताय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घं नि० ॥

लक्ष्मीधरा छन्द।

प्रतिक्रमण ये करें, सो कायोत्सर्ग ये ठाने।
समताभाव समेत, वंदना नित मन आने॥
स्तुति करें बनाय गाय, स्वाध्याय सु नीको।
षट् आवश्यक क्रिया, पाप मल धोय यती को॥ ८॥

ॐ ह्रीं षडावश्यकगुणविभूपितायाचार्यपरमेष्ठिने अर्घं नि०॥

ज्ञानाचार सु धार, दर्शनाचार सु धारें।
धर चारित्राचार, तपाचारहिं विस्तारें॥
वीर्याचार विचार पंच आचार ये धारी।
मन वच तन कर, बार बार वन्दना हमारी॥ ६॥

ॐ ह्रीं पचाचारगुणविभूपितायाचार्यपरमेष्ठिने अर्घं नि०॥

दोहा।

तीन गुप्त पालें सदा, मन अरु वचन सु काय।
सो वसु द्रव्य सँजोय के, पूजों मन हुलशाय॥ १०॥

ॐ ह्रीं त्रिगुप्तिगुणविभूपितायाचार्यापरमेष्ठिने अर्घं नि०॥

सोरठा।

दश विधि धर्म सुजान, द्वादश तप षट् क्रिया धर।
पंचाचार प्रमाण, तीन गुप्ति छत्तीस गुण॥ ११॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यपरमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

श्री उपाध्याय गुण पूजा।

दोहा—उपाध्याय गुण वरणऊँ, पंच अरु वीस प्रमान।
एकादश वर अंग अरु अरु चौदह पूरव जान॥ १॥

सुन्दरी छन्द।

प्रथम आचारांग सु जानिये। द्वितीय सूत्रकृतांग बखानिये॥
तीसरो स्थानांग सो अंग जू। तूर्य समवायांग अभंग जू॥२॥
पंचमो व्याख्याप्रज्ञप्ति जू। छट्ठम ज्ञातृकथा गुणयुक्त जू॥
उपासकाध्ययन सो सप्तमो। अंग अन्तकृतांग सु अष्टमो॥३॥
दोहा—नवम अनुत्तर दशम पुनः, प्रश्न व्याकरण जान।
विपाकसूत्र सु ग्यारमो, धारैं गुरु गण खान॥४॥

ॐ ह्रीं एकादशांगपठनयुक्ताय उपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं नि०॥

गीता छन्द।

अब चार दश पूरव, प्रथम उत्पाद नाम सु जानिये।
अग्रायणी वीर्यानुवाद सु, अस्ति नास्ति बखानिये॥
ज्ञानप्रवाद सु पंचमो, कर्मप्रवाद छट्ठौं कहो।
सत्यप्रवाद सु सप्तमो, आत्मप्रवाद वसु लहो॥५॥
पुनः नाम प्रत्याख्यान अरु, विद्यानुवाद प्रमाणिये।
कल्याणवाद महन्त पूरव, क्रियाविशाल बखानिये॥
वर लोकविंद मिलाय चौदह, सार ये पूरव कहे।
ते धरैं श्री उवझाय तिनके, पूजते शिवमग लहे॥६॥

ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वपठनपाठनसंलग्नाय उपाध्याय परमेष्ठिने अर्घं नि०॥

दोहा—ऐसे ग्यारह अंग अरु, चौदह पूरव जान।
उपाध्याय जानैं सुधी, सो पूजों रुचि ठान॥७॥

श्री साधुगुण पूजा।

दोहा—साधु तने अठ वीस गुण, सो धारैं मुनिराज।
अतीचार लागे नहीं, साधैं आतम काज॥१॥

छन्द भुजंगप्रयात।

करें नाहिं हिंसा दया मन धरें जू असत नाहिं बोलें न परधन हरें जू।
महाशील पालें परिग्रह सु टालें। यही पंच भारी महाव्रत सम्हालें।

ॐ ह्रीं पंचमहाव्रतधारकाय साधुपरमेष्ठिने अर्घं नि०॥

त्रिभंगी छंद।

इर्यापथ सोधें, जिय न विरोधें, भवि संबोधे हितकारी।
सांचे वच भाखे, झूठ न राखें, निजरस चाखें दुखहारी।
ठाड़े चितधारा, करें अहारा, ग्रहें निहारा क्षेपत हैं।
मल मूत्रहिं डारें, जीव निहारें, पंच समितिइमिसेवत हैं॥३॥

ॐ ह्रीं पंचसमितिसंयुक्ताय साधुपरमेष्ठिने अर्घं नि०

दोहा—स्पर्शन रसना घ्राण पुनि, चक्षु श्रवण निरधार।
पांचों इन्द्री वश करें, ते पावें भव पार॥ ४॥
ते गुरु मेरे हृदय वसो।

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रियापाररहिताय साधुपरमेष्ठिने अर्घं नि०

प्रतिक्रमण ये आदरें, धारे उत्सर्ग सु ध्यान।
समताभाव सो राखहीं, वन्दन करत निदान॥ ते० ५॥
त्रिकाल ये स्तुति करत हैं, चूकें नाहिं सुकाल।
स्वाध्याय नित चित्त धरें, करुणाप्रति प्रतिपाल॥ते०६॥

ॐ ह्रीं षडावश्यकयुक्ताय साधुपरमेष्ठिने अर्घं नि०॥

पद्धरी छंद।

सिर केश लुंच करते सु जान। अरु नग्नवृत्तितिनकी प्रधान॥
अस्नान नहीं करते सु वीर। भू शयन करत ते महा धीर॥७॥
धोवें न दंत जिय दयावान। आहार खड़े करते सु जान॥
इक बार असन लघु करें जान। ये सात कहेगुण अति महान॥

ॐ ह्रीं शेषसप्तगुणयुक्ताय साधुपरमेष्ठिने अर्घं नि० ॥

दोहा—पंच महाव्रत समितिपन, इन्द्री दंडे पंच ।
षट् आवश्यक सप्त अरु, अष्ट वीस गुण संच ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं साधुपरमेष्ठिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जयमाला ।

दोहा—पंच परमपद सार जग, ऋद्धि सिद्धि दातार ।
तिन गुण की जयमालिका, सुनो भव्य चित धार ॥१॥

पद्धडि छन्द ।

अरहंत सिद्ध आचार्य जान । उवझाय साधु पांचों वखान ॥
जग में इन समनहिंऔर कोय । देखें समदृगकरजगतसोय ॥२॥
शिवनायकशिवलायक सु आय । सो कर्म नाशिशिवलोकजाय ॥
शिवमग दर्शावत आप आय । जे धरें ध्यान मन वचन काय ॥३
इक वार सुमरि शिवलोक जाय । आगम में कथा चली वनाय॥
जल थल कानन में जपत जोय । संकट नाशें आनन्द होय ॥४॥
यह महामंत्र नवकार जान । या सम न जगत में मंत्र आन ॥
जग में न मंत्र अरु यन्त्र होय । इसकी सरवरदूजा न कोय॥५॥
रसकूप पड़ो इक पुरुष दीन । तहां चारुदत्त उपकार कीन ॥
यह मन्त्र सुमरिसुरलोकलीन । सोकथा जगतविख्यातकीन॥६॥
अनपुत्र कंठगत प्राण धार । यह महामंत्र कीना उचार ॥
तज देह देव उपजो सु जाय । यह चारुदत्त उपदेश पाय ॥७॥
अंजनसे अधम किये उधार । मन वच तन कर सुरपद सो धार
मरकट मुनिका उपदेश पाय । कैइक भवमें केवल लहाय॥८॥
युग नाग नागनी जरत काय । श्रीपार्श्वनाथ उपदेश पाय ॥
यह मंत्र सु फल प्रत्यक्ष दीश । धरनेन्द्र भये पद्माइतीश ॥९॥
इक सभग ग्वाले कुल हीन जास । तिन नेम लियो मुनिराज पास
जप णमोकार शुभ गति सो जाय । यह कथा कही जिन सूत्रपाय

करिणी‡फांदेमें फंसी जाय । यह मंत्र सुमरि शुभ गति सो पाय
इन आदि बहुत जिय तरे सोय । जिन मंत्र जपो निश्चिन्त होय ॥
याकी महिमा जगमें अपार । वरणों कहलों लहिये न पार ॥
यह चिंतामणि सम लखो भ्रात । मन चिन्ते सब कारज करात॥
यह कामधेनु सम गिनो वीर । सुरतरु समान जानो सु धीर ॥
मनवांछित फलको देनहार । सुमरो मन वच तन चित्तधार ॥
यामें संशय जानो न कोय । धरके प्रतीत नित जपो जोय ॥
याते मैं भी चित धार धार । पूजों जिनचरणा वार वार ॥

घत्तानंद छन्द ।

यह शुभ मात्रा, जानो तंत्रा, पूजो ध्यावो भक्ति करो ।
निश दिन गुण गाऊं, सुर शिव पाऊं, पूरब कृत सब करम हरो॥
ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गीतिका छंद ।

ये पांच पद पैंतीस अक्षर, सार जगमें जानिये ।
मन वचन काय त्रिशुद्ध करके, भक्ति पूजा ठानिये ।
याके सु फल धन धान्य सम्पत्ति, रूप गुणशुभ पाइये ।
सुरपद सहज ही मिलत है, वसु करम हर शिव जाइये॥१६॥

इत्याशीर्वादः ।

दोहा—जो अनर्थ घट वढ़ शवद, कोप न कीजे कोय ।
लघु मति यह पूजन रची, कारण सुनिये सोय॥१७॥

सवैया ।

मान कछू कारण नहि, माया भी न यशकी चाह,
शैलीके भायन, विचार कियो आयकें ।

‡ हथिनी ।

आगे आचारजने संस्कृत + पूजा रची,
ताके शबद अरथ, कोई समझे ना बनायके ॥
भाई पंडित लोग, भाषा पढ़ी पूजा रची,
ताकी है थिरता नाहि, बांचनकी गायके ।
तातें यह छोटी करी, और चित्त नाहिं धरी,
भैया इक घड़ी बाँचो, आछो मन ल्यायके ॥ १८ ॥
शैलीके भाईजी; गुलाबचन्द्र पंण्डित जान ।
दुलीचन्द्र दयाचन्द्र, खूबचन्द्र जानिये ।
सिंगई भगोलेलाल, भाई, उमराव जान,
लीलाधर सुखानन्द, और भी प्रमानिये ॥
आय जिन मन्दिर में, शास्त्र सुनें प्रीति सेती,
घड़ी पहर बैठ, घर में बखानिये ।
धरम की चर्चा करें, करम की भी आन परे,
छोड़ के कुधर्म 'चन्द्र' धरम हृदय आनिये ॥ ११ ॥
दोहा—पंचमकाल कराल में, पाप भयो अति जोर ।
कछु धरम रुचि राखिये, 'चन्द्र' कहत कर जोर ॥२०॥
बसत जबलपुर नगर में, चलत सु निज कुल रीति ।
राखत निशि वासर सदा, जैन धर्म सें प्रीति ॥ २१ ॥
संवत एक सहस्र नव, शतक सु*सत्ताईस ।
भादों कृष्ण त्रयोदशी, बुद्धिवार सु गणीश ॥ २२ ॥

इतिपंचपरमेष्ठी विधान ।

+श्रीयशोनंद्याचार्यकृत 'पंचपरमेष्ठिपूजा'
* वि० सं. १९२७ ।
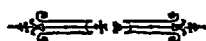
श्री सम्मेदशिखरपूजाविधान।

दोहा।

सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उत्कृष्ट सु थान॥
शिखर सम्मेद सदा नमौ, होय पाप की हान॥ १॥
अगनित मुनि जहँ ते गए, लोक शिखिर के तीर।
तिनके पद पंकज नमौ, नासै भव की पीर॥ २॥

अडिल्ल छंद।

है उज्जल वह क्षेत्र सु अति निर्मल सही।
परम पुनीत सुठौर महा गुन की मही॥
सकल सिद्धि दातार महा रमनीक है।
वन्दौ निजसुख हेत अचल पद देत है॥ ३॥

सोरठा।

शिखिर सम्मेद महान। जग मैं तीर्थ प्रधान है॥
महिमा अद्भुत जान। अल्पमती मैं किम कहो॥४॥

पद्धड़ी छंद।

सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है। अति सु उज्जल तीर्थ महान है।
करहि भक्तिसु जेगुनगाइ कैं। वरहि शिवसुरनरसुखपाइकैं।५।

अडिल्ल छन्द।

सुर हरि नरपति आदि सु जिन वन्दन करैं।
भवसागर तैं तिरे नहीं भवदधिं परैं॥
सुफल होय जो जन्म सु जे दर्शन करैं।
जन्म जन्म के पाप सकल छिन में टरैं॥ ६

पद्धड़ि छन्द।

श्री तीर्थंकरजिन वर सुवीस। अरु मुनि असंख्य सबगुननईस॥
पहुँचे जँह से केवल सुधाम। तिन सबकौं अब मेरी प्रणाम॥७॥

गीतका छंद।

सम्मेद गड़ है तीर्थ भारी, सबन को उज्जल करै।
चिरकाल के जे कर्म लागे, दरस ते छिनमें टरै।
है परम पावन पुन्य दाइक अतुल महिमा जानिये।
है अनूप सरूप गिरि वर तासु पूजा ठानिये॥ ६॥

दोहा।

श्री सम्मेद शिखर महा। पूजौं मन वच काय।
हरत चतुर्गति दुःख को, मन वांछित फलदाय॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रावतरावतरसंवौषट् इत्याह्वाननम् परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं परि पुष्पञ्जलिं क्षिपेत्।

अष्टकं।

अडिल्ल छन्द—क्षीरोदधि सम नीर सु उज्जल लीजिये। कनक कलस मैं भरके धारा दीजिये। पूजौं शिखिर सम्मेद सुमन वचकाय जू। नरकादिक दुःख टरैं अचल पद पाय जू॥ ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धिक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाथ जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥ पयसौं घिस मलयागिर चन्दन ल्याइये। केसर आदि कपूर सुगंध मिलाइये॥ पूजौ शिखिर०। ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारताप विनासनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥ तंदुल धवल सु उज्जवल खासे धोय के। हेम वरन के थार भरौं शुचि होय कैं॥ पूजौं शिखिर०। ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति

श्री सम्मेद शिखर जी

श्री अतिशयक्षेत्र चाँदखेड़ीजी [कोटा]

स्वाहा ॥ ३ ॥ फूल सुगंध सु ल्याय हरष सो आन चढ़ायौ । रोग शोक मिट जाय मदन सब दूर पलायौ ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥ षट् रस कर नैवेद्य कनक थारी भर ल्यायो ॥ क्षुधा निवारण हेतु सु तुजौ मन हरषायो ॥ पूजौ शिखिर० ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥ लेकर मणिमय दीप सुज्योति उद्योत हो । पूजत होत स्वज्ञान मोहतम नाश हो ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥ दस विधि धूप अनूप अग्नि मैं खेवहूं । अष्टकर्म कौ नाश होत सुख पावहू ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्योअष्टकर्मदहनाथ धूपंनिर्वपामीति स्वाहा॥७॥ भेला लौंग सुपारी श्रीफल ल्याइये । फल चढ़ाय मन वांछित फल सु पाइये ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥ जल गंधाक्षित फूल सु नेवज लीजिये । दीप धूप फल लेकर अर्घ चढ़ाइये ॥ पूजौ शिखिर० । ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥ पद्धड़ी छन्द–श्रीविंसति तीर्थंकर जिनेन्द्र । अरु हैं असंख्य बहुते मुनेंद्र ॥ तिनकौं करजोर करों प्रणाम । तिनको पूजों तज सकल काम ॥ ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घं । ढार योगीरायसा–श्री सम्मेदशिखिर गिर उन्नत शोभा अधिक प्रमानों । विंशति तिंहपर कूट मनोहर अद्‌भुत रचना जानौ ॥ श्री तीर्थंकर वीस तहांते शिवपुर पहुँचे जाई । तिनके पद पंकज युग पूजौ प्रत्येक अर्घ चढ़ाई । ॐ ह्रीं

श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥
प्रथम सिद्धवर कूट मनोहर आनंद मंगलदाई। अजित प्रभु जहं ते शिव पहुँचे पूजो मनवचकाई ॥ कोड़ि जु अस्सी एक अर्व मुनि चौवन लाख सुगाई। कर्म काट निर्वाण पधारे तिनको अर्घ चढ़ाई। ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धकूटते श्री अजितनाथ जिनेन्द्रादि एक अर्व अस्सी कोड़ि चौवन लाख मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥ धवल कूट सो नाम दूसरो है सबकौं सुखदाई। संभव प्रभुसो मुक्ति पधारे पाप तिमिर मिटजाई। धवलदत्त हैं आदि मुनीश्वर नव कोड़ाकोड़ि जानौ। लक्ष बहत्तर सहस बयालिस पंच शतक रिष मानौ ॥ कर्म नाश कर अमर पुरी गए वंदौ सीस नवाई। तिनके पद युग जजौ भावसौ हरष हरष चितलाई ॥ ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर धवल कूटतें संभवनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नव कोड़ाकोड़ि बहत्तर लाख ब्यालिस हजार पांच से मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥३॥ चौपाई-आनंद कूट महा सुखदाय। प्रभु अभिनन्दन शिवपुर जाय। कोड़ाकोड़ि बहत्तर जानौ। सत्तर कोड़ि लाख छत्तीस मानौ ॥ सहस बयालीस शतक जु सात। कहें जिनागम मैं इस भांत। ऐरिष कर्म काट शिव गये, तिनके पद युग पूजत भये ॥ ॐ ह्रीं श्री आनन्दकूटतैं अभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि मुनि बहत्तर कोड़ाकोड़ि अरु सत्तर कोड़ छत्तीस लाख ब्यालीस हजार सातसै मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥ अडिल्ल छन्द-अचल चौथौ कूट महा सुख धाम जी। जहं ते सुमति जिनेश गये निर्वाणजी ॥ कोड़ाकोड़ि एक मुनीश्वर जानिये। कोड़ि चौरासी लाख बहत्तर मानिये ॥ सहस इक्यासी और सातसे गाइये। कर्म

कूट शिव गये तिन्है सिर नाइये ॥ सो थानिक मैं पूजौ मन वच काय जू। पाप दूर हो जाय अचल पद पायजू ॥ ॐ ह्रीं श्री अवचल कूटतै श्री सुमति जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ा-कोड़ि चौरासी कोड़ि बहत्तर लाख इक्यासी हजार सातसै मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥५॥ अडिल्ल छन्द मोहन कूट महान परम सुंदर कही। पद्मप्रभु जिनराय जहां शिव पद लही ॥ कोड़ि निन्यानवै लाख सतासी जानिये। सहस तेतालिस और मुनीश्वर मानिये। सप्त सैकड़ा सत्तर ऊपर बीस जू। मोक्ष गये मुनितिन को नमि नित शीश जू कहैं जवाहरदास सुदोय कर जोरकै। अविनासी पद देउ कर्म न खोयकैं ॥ ॐ ह्रीं श्री मोहनकूटतैं श्री पद्मप्रभु मुनि निन्यानवै कोड़ि सतासी लाख तेतालिस हजार सातसै संताउन मुनि निर्वाण पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥६॥ सोरठा—कूट प्रभात महान। सुंदर जन मणि मोहनौ। श्री सुपार्श्व भगवान, मुक्ति गये अघ नाश कर। कोड़ाकोड़ी उनंचास कोड़ि चौरासी जानिये। लाख बहत्तर जान सात सहस अरु सात सै ॥ और कहें व्यालीस। जंह तें मुनि मुक्ति गये। तिनकौं नम नित सीस दास जवाहर जोरकर ॥ ॐ ह्रीं प्रभात कूटतें श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि मुनि उनंचास कोड़ाकोड़ी बहत्तर लाख सात हजार सातसै व्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥७॥ दोहा—पावन परम उतंग हैं। ललित कूट है नाम ॥ चंद्र प्रभु मुकै गये, वंदौ आठौ जांम ॥ नवसै अरु वसु जानियौ। चौरासो रिषि मान। कौड़ि बहत्तर रिषि कहे। असी लाख परवान। सहस चौरासी पंच शत। पचवन कहे मुनीश। वसु कर्मन को नाशकर। पायो सुखको कंद ॥ ललित कूटते शिव गये। वंदौं सीस

नवाय ॥ तिनपद पूजौ भाव सौ, निज हित अर्घ चढ़ाय ॥ ॐ ह्रीं ललितकूट तैं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादि मुनि नवसै चौरासी अर्व वहत्तर क्रोड़ अस्सीलाख चौरासी हजार पांचसै पचवन मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥ पद्धड़ी छंद । सुवरनभद्र सो कूट जान । जहं पुष्पदंतको मुक्त थान ॥ मुनि कोड़ाकोड़ी कहे जु भाख । अरु कहे निन्यानवै लाख चार ॥१॥ सौ सात सतक मुनि कहे सात । रिषि असी और कहे विख्यात ॥ मुनि मुक्ति गये वसु कर्म काट । वंदौ कर जोर नवाय माथ ॥२॥ ॐ ह्रीं श्री सूप्रभकूटतै पुष्पदंत जिनन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ी निन्यानवै लाख सात हजार चारसै अस्सीमुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥६॥ सुंदरी छंद--सुभग विद्युतकूट सु जानियै । परम अद्भुतता परमानियै ॥ गये शिवपुर शीतलनाथजी नमहुँ तिन पद कर धरि माथजी ॥ मुनिजु कोड़ाकोड़ी अष्टहु । मुनि जो कोड़ी ब्यालिस जान हू ॥ कहे और जु लाख वत्तीस जू । सहस ब्यालिस कहे यतीश जू ॥ और तह सै नौसै पांच सुजानिये । गये मुनि सिवपुरको और जु मानिये ॥ करहि पूजा जे मन लायकें । धरहि जन्मन भवमें आयकें ॥ ॐ ह्रीं सुभग विद्युत कूटतै श्री शीतलनाथ जिनेंद्रादि मुनि अष्ट कोड़ाकोड़ी ब्यालीस लाख वत्तीस हजार नौसै पांच मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धिक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥१० ढार योगीरसा-कूटजु संकुल परम मनोहर श्रीयांस जिनराई । कर्म नाश कर अमरपुरी गये, वंदो शीस नवाई ॥ कोड़ाकोड़ जुकहै छ्यानवै छ्यानवे, कोड़ प्रमानौ ॥ लाख छ्यानवै साढ़े नवसै, इकसठ मुनीश्वर जानो । ताऊपर ब्यालीस कहे हैं श्री मुनिके गुन गावै । त्रिविध योग कर जो कोई पूजै सहजानंद पद पावै ॥ ॐ ह्रीं

संकुल कूटतैं श्रीयांसनाथ जिनेन्द्रादि मुनिं क्ष्यानवे कोड़ा-कोड़ी क्ष्यानवे कोड़ क्ष्यानवै लाख साढ़ेनौ हजार व्यालीस मुनि सिद्ध पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥११॥ कुसुमलता छंद--श्री मुनि संकुल कूट परम सुंदर सुखदाई । विमलनाथ भगवान जहां पंचम गति पाई ॥ सात शतक मुनि और व्यालिस जानिये । सत्तर कोड़ सात लाख हजार छै मानिये ॥ दोहा--अष्ट कर्मको नाश कर, मुनि अष्टम क्षिति पाय ॥ तिनको मैं वंदन करौं, जन्ममरण दुख जाय ॥ ॐ ह्रीं श्री संकुलकूटतैं श्री विमलनाथ जिनेंद्रादि मुनि सत्तर कोड़ सात लाख छै हजार सातसै व्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धिक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥१२॥ अडिल--कूट स्वयंप्रभु नाम परम सुंदर कहौ । प्रभु अनंत जिननाथ जहां शिवपद कहौ ॥ मुनि जु कोड़ाकोड़ी क्ष्यानवै जानियै । सत्तर कोड़ जु सत्तर लाख बखानियै ॥ सत्तर सहस जु और सातसै गाइये । मुक्ति गये मुनि तिन पद शीस नवांइये ॥ कहे जवाहर दास सुनौ मन लायकें । गिरवरकों नित पूजौ मन हरपायकै ॥ ॐ ह्रीं स्वयंभू कूटतें श्री अनंतनाथ जिनेंद्रादि मुनि क्ष्यानवै कोड़ा-कोड़ी सत्तर लाख सात हजार सातसै मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धिक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥१३॥ चौपाई--कूट सुदत्त महा शुभ जानों । श्री जिनधर्म नाथकों थानौं ॥ मुनि जु कोड़ाकोड़ी उन तीसं और कहे ऋपि कोड़ उनीस ॥ लाख जु नव्वै सहस नौ जानौं । सात शतक पंचा नव मानौं ॥ मोक्ष गये वसु कर्मन चूर । दिवस रैन तुमही भरपूर ॥ ॐ ह्रीं श्री सुदत्त कूटतै श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि मुनि उनतीस कोड़ाकोड़ी उनीस कोड़ नव्वै लाख नौ हजार सातसै पंचानवै मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामिति स्वाहा ॥१४॥ है प्रभासी कूट

सुंदर अत पवित्र सो जानीये । सांतनाथ जिनेन्द्र जहांते परम धाम प्रमानिये । ॐ ह्रीं प्रभासकूटते श्री शांतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नौ कोड़ाकोड़ी नौ लाख नौ हजार नौसे निन्यानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १५ ॥ गीतका छंद– ज्ञान धर शुभ कूट सुंदर परम मनको मोहनो । जंहते श्री प्रभु कुंथु स्वामी गये शिवपुर को गनो ॥ कोड़ाकोड़ी छ्यानवे मुनि कोड़ि छ्यानवे जानिये । लाख बत्तीस सहस छ्यानवे अरु सात सौ सात प्रमानिये ॥ दोहा–और कहे ब्यालीस सुमरो हिये मझार । जिनवर पूजौ भाव सौ, कर भवदधि ते पार ॥ ॐ ह्रीं ज्ञानधरकूट तैं श्रीकुंथुनाथ स्वामी और छ्यानवे कोड़ाकोड़ी मुनि छ्यानवे कोड़ि बत्तीस लाख छ्यानवे हजार अरु सातसौ ब्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥१६॥ दोहा–कूट जु नाटक परम शुभ, शोभा अपरंपार । जहते अरह जिनेन्द्रजी, पहुँचे मुक्त मझार । कोड़ि निन्यानवै जानि मुनि, लाख निन्यानवै और । कहे सहस निन्यानवै, वंदौ कर जुग जोर ॥ अष्ट कर्मको नाशकर, अविनाशी पद पाय । ते गुरु मम हृदये वसौ, भवदधि पार लगाय ॥ ॐ ह्रीं नाटक कूटते श्री अरहनाथ जिनेन्द्रादि मुनि निन्यानवै कोड़ि निन्यानवै लाख निन्यानवै हजार मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १७ ॥ अड़िल्ल छन्द–कूट संवल परम पवित्र जू ॥ गये शिवपुर मल्लि जिनेश जू ॥ मुनि जु छ्यानवै कोड़ि प्रमानिये, पद जिनेश्वर हृदये मानिये ॥ ॐ ह्रीं संवल कूटतैं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्रादि छ्यानवै कोड़ाकोड़ी मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १८ ॥ ढार परमादीकी चालमें– मुनिसुव्रत जिनराज सदा आनंदके दाई । सुंदर निजर कूट जहां तैं शिवपुर पाई ॥ निन्यानवै कोड़ाकोड़ कहे मुनि कोड़

संतावन । नो लख जोर मुनेन्द्र कहे नौसे निन्यावन । सोरठा--कर्मनाश ऋषिराज, पंचमगतिके सुख लहे । तारन तरन जिहाज मो दुखदूर करौ सकल ॥ ॐ ह्रीं श्री निर्जर कूटतें श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेंद्रादि मुनि निन्यानवे कोड़ा कोड़ी संतावन क्रोड़ नौ लाख नौ शतक निन्यानवै मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घं ॥ १६ ॥ ढार जोगीरासा--येही मित्रधर कूट मनोहर सुंदर अतिछबछाई । श्री नमि जिनेश्वर मुक्ति जहांतैं शिवपुर पहुँचे जाई॥नौसे कोड़ा कोड़ी मुनीश्वर एक अर्व ऋषि जानौ । लाख सैतालिस सात अब नौसे व्यालिस मानौ । दोहा--वसु कर्मन को नाशकर, अविनाशी पद पाय । पूजौ चरन सरोज ज्यों, मनवांछित फल पाय ॥ ॐ ह्रीं श्री मित्रधर कूटतैं श्री नमिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नौसे कोड़ाकोड़ी एक अर्व सैतालिस लाख सात हजार नौसे व्यालिस मुनि सिद्ध-पद प्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥२०॥ दोहा--सुवर्ण भद्र जू कूट ते, श्री प्रभु पारसनाथ । जहंतैं शिवपुरको गये, नमो जोड़िजुग हाथ ॐ ह्रीं सुवर्णभद्र कूटतैं श्री पश्र्वनाथ स्वामी सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१॥ याविधि बीस जिनेन्द्रके, वीसौ शिखिर महान ॥ और असंख्य मुनि जँह पहुँचे शिवपुर थान ॐ ह्रीं श्री बीस कूट सहित अनंत मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ २२ ॥ ढार कातिककी--प्राणी आदीश्वर महाराजजी, अष्टापद शिव थान हो । वासपूज जिनराजजी चंपापुर शिवपद जान हो ॥ प्राणी नेम प्रभु गिरनारतैं, पावापुर श्री महावीर हो ॥ प्राणी पूजौ अर्घं चढ़ाय कै, इह नाशै भयभीत हो । प्राणी पूजौ मनवच कायके ॥ ॐ ह्री श्री ऋषभनाथ कैलाश गिरते श्री महावीरस्वामी पावापुर तैं श्री वासुपूज चंपापुर तैं नेमिनाथ

गिरिनारतैं सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥२३॥ दोहा—सिद्धक्षेत्रजे और हैं, भरत क्षेत्रके मांहि ॥ और जु अतिशय क्षेत्र हैं, कहे जिनागम मांहि । तिनकौ नाम जु लेतही, पाप दूर हो जाय । ते सब पूजौ अर्घ लै, भव भवकूं सुखदाय । ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र अतिशय क्षेत्रेभ्यो अर्घं । सोरठा—दीप अढ़ाई मेरु सिद्ध क्षेत्र जे और है । पूजौ अर्घ चढाय भव भवके अघनाश है ॥ ॐ ह्रीं अढ़ाई द्वीप सम्बंधी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ २४ ॥

अथ जयमाला ।

चौपाई—मन मोहन तीरथ शुभ जानौ । पावन परम सु क्षेत्र प्रमानौ ॥ उन्नति शिखिर अनूपम सोहै । देखत ताहि सुरासुर मोहे । दोहा—तीरथ परम सुहावनो, शिखिर सम्मेद विशाल ॥ कहत अल्प बुध उकसो, सुखदायक जयमाल ॥ २ ॥ चौपाई—सिद्धक्षेत्र तीरथ सुखदाई । वंदत पाप दूर हो जाई । शिखिर शीस पर कूट मनोग । कहें वीस अतिशय संयोग ॥३॥ प्रथम सिद्ध शुभ कूट सुनाम । अजितनाथ कौं मुक्ति सु धाम ॥ कूट तनौ दर्शन फल कहो । कोड़ि बत्तीस उपास फल लहो ॥ ४ ॥ दूजौ धवल कूट है नाम । संभव प्रभु जंहते निर्वाण ॥ कूट दरश फल प्रोषध मानौ । लाख व्यालिस कहै बखानौ ॥ ५ ॥ आनन्द कूट महासुखदाई । जह तैं अभिनन्दन शिव जाई ॥ कूट तनौ वंदन हम जानौ । लाखउपास तनौ फल मानौ ॥ ६ ॥ अवचल कूट महासुख धाम । मुक्ति गये जहँ सुमति जिनेश ॥ कूट भाव धर पूजौ कोई । एक क्रोड़ प्रोषध फल होई॥७॥मोहन कूट मनोहर जान । पद्म प्रभु जहँ तें निर्वाण ॥ कूट पुन्य फल लहै सुजान । कोड़ उपास कहै भगवान ॥ ८ ॥ मन मोहन शुभ कुट प्रभासा । मुक्ति गये जंहतै श्रीयांसा ॥ पूजै

कूट महाफल सोई । कोड़ वत्तीस उपवास फल होई ॥ ९ ॥
चन्द्र प्रभु को मुक्ति सु धामा । परम विशाल ललित घट नामा॥
दर्शन कूट तनो इम जानो । प्रोषध सोला लाख बखानो॥ १० ॥
सुप्रभ कूट महा सुखदाई । जहँते पुष्पदन्त शिव जाई ॥ पूजैं
कूट महा फल होय । कोड़ उपास कहो जिनदेव ॥ ११ ॥ सो
विद्युतवर कूट महान । मोक्ष गये शीतल धर ध्यान ॥ पूजे
त्रिविध योग कर कोई । कोड़ उपास तनो फल होई ॥ १२ ॥
संकुल कूट महा शुभ जानो । जहँ तैं श्रीयांस भगवानो ॥ कूट
तनो अब दर्शन सुनो । कोड़ उपास जिनेश्वर भनो ॥ १३ ॥
संकुल कूट परम सुखदाई । विमल जिनेश जहां शिव जाई ॥
मन वच दर्श करे जो कोई । कोड़ उपास तनो फल होई ॥१४॥
कूट स्वयंप्रभ सुभगसु ठाम । गये अनन्त अमरपुर धाम ॥
एही कूट कोई दर्शन करे । कोड़ उपास तनो फल धरे ॥ १५ ॥
है सुदत्तवर कूट महान । जहँ तै धर्मनाथ निर्वाण ॥ परम
विशाल कूट है कोई, कोड़ उपवास दर्शफल होई ॥ १६ ॥
परम विशाल कूट शुभ कहो । शांति प्रभु जहँ तैं शिव लहो ॥
कूट तनी दर्शन है सोई । एक कोड़ प्रोषध फल होई ॥ १७ ॥
परम ज्ञानधर है शुभ कूट । शिवपुर कुंथु गये अब छूट ॥
इनको पूजे दोइ कर जोर । फल उपवास कहो इक कोड़॥१८॥
नाटक कूट महा शुभ जान । जहँ तै अरह मोक्ष भगवान ॥
दर्शन करे कूट को जोई । छ्यानवे कोड़ उपासफल होई ॥१९॥
संवलकूट मल्लि जिनराय । जहँते मोक्ष गये निज काय ॥
कूट दरश फल कहो जिनेश । कोड़ि एक प्रोषध फल होय ।२०।
निर्जर कूट महा सुखदाई । मुनिसुव्रत जहँ ते शिव जाई ॥
कूट तनी दर्शन है सोई । एक कोड़ प्रोषध फल होई ॥ २१ ॥
कूट मित्रधरतै नमि मोक्ष । पूजत आय सुरासुर जक्ष ॥ कूट

तनौ फल है सुखदाई । कोड़उपास कहौ जिन राई ॥ २२ ॥
श्रीप्रभु पार्श्वनाथ जिनराय । दुरगति तै छूटै महाराज ॥
सुवर्णभद्र कूट कौ नाम ॥ जहँ तैं मोक्ष गये जिन धाम ॥२३॥
तीन लोक हित करत अनूप । मंगल मय जगमैं चिद्रूप ॥
चिन्तामणि स्वर वृक्षसमान । रिद्धसिद्ध मंगल सुखदान॥२४॥
पार्श्व और काम जौ धैन । नाना विध आनन्द कौं देन ॥
व्याध विकार जाँह सब भाज । मन चिन्तै पूरे सब काज॥२५॥
भवदधि रोग विनाशक होई । जो पद जग मैं और न कोई ॥
निर्मल परम धाम उत्कृष्ट वन्दत पाप भजे अरु दुष्ट ॥ २६ ॥
जो नर ध्यावत पुन्य कमाय । जश गावत ऐ कर्म नशाय ॥
करे अनादि कर्म के पाप ! भजै सकल छिन मैं संताप ॥ २७ ॥
सुर नर इन्द्र फणिन्द्र जु सवै । और खगेन्द्र महेन्द्र जु नमै ॥
नित स्वर स्वरीकरै उच्चार । नाचत गावतविविध प्रकार॥२८॥
बहु विध भक्त करैमनलाय । विविध प्रकारवाजित्र बजाय॥२९॥
द्रुम द्रुम द्रुम बाजै मृदंग । घन घन घंट बजै मुह चंग ॥
झन झन झनिया करैं उच्चार । सार सारंगी धुन उच्चार॥३०॥
मुरली वीन बजै घन मिष्ट । पट हांतुरी स्वरान्नुत पुष्ट ॥ नित
स्वर्गन थित गावत सार । स्वर्गन नाचत बहुत प्रकार ॥ ३१ ॥
झननन झननन नूपुर तान । तननन तननन टोरत तान । ता
थेई थेई थेई थेई थेई चाल । सुर नाचत निज नावत भाल॥३२॥
गावत नाचत नाना रंग । लेत जहां शुभ आनन्द संग ॥ नित
प्रति सुर जहां वंदै जाय ॥ नाना विध मंगल कौं गाय ॥ ३३ ॥
आनन्द धुन सुन मोर जु सोय । प्रापत ब्रषकी अत ही होय ॥
तातैं हमकू है सुख सोई । गिर वंदन कर धर शुभ होई ॥३४॥
मारुत मन्द सुगन्ध चलेय । गंधोदक तहां वरषै सोय ॥ जियकी
जात विरोध न होई । गिरिवर वंदै कर धर द्रोई ॥ ३५ ॥ ज्ञान

चरित तपसा धन होई। निज अनुभवकौ ध्यान धरेय॥ शिव मन्दिर को धारै सोई। गिरिवर वंदै कर धर दोई॥ ३६॥ जो भव वन्दै एक जुवार। नरक निगोद पशु गति टार॥ सुर शिवपदकूं पावै सोय। गिरिवर वंदौ कर धर दोय॥३७॥ ताकी महिमा अगम अपार। गणधर कवहूँ न पावैं पार॥ तुम अद्भुत मैं मति कर हीन। कही भक्त वसु केवल लीन।३८। घत्ता—श्री सिद्ध क्षेत्र अति सुख देत॥ सेवतु नासौ विघन हरा॥ अरु कर्म विनाशै सुख पयासै केवल भासै सुख करा। ॥ ३९॥ ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रभ्यो महार्घं। दोहा—शिखिरसम्मेद पूजो सदा। मनवच तन नारि॥ सुर शिव के जे फल लहै। कहते दास जवार। ॥ ४०॥

इत्यादि आशीर्वादः।

दीप मालिका विधान

(महावीर जिन पूजा कवि वृन्दावन जी कृत)

स्थापना। मत्तगयंद॥

श्रीमत वीर हरैं भवपीर, भरैं सुखसीर अनाकुलताई। केहरि अंक अरीकरदंक, नये हरिपंकतमौलि सुहाई॥ मैं तुमकौं इत थापतु हौं प्रभु, भक्ति समेत हिये हरषाई। हे करुणाधनधारक देव, इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर। संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। अत्र मम सिन्निहितो भव भव। वषट्॥

अथाष्टक । छंद अष्टपदी ।

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कन्चनभृंग भरौं । प्रभु वेग हरौ भवपीर, यातैं धार करौं । श्रीवीर महा अतिवीर, सनमतिनायक हो । जय वर्द्धमान गुणधीर, सनमतिदायक हो ।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयागिरचंदन सार, केसरसंग घसौं । प्रभु भव आताप निवार, पूजत हिय हुलसौं ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि० ॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीने थारभरी । तसु पुंज धरौं अविरुद्ध, पाऊं शिवनगरी ॥ श्रीवीर० जय वर्द्धमान ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०॥३॥

सुरतरु के सुमनसमेत, सुमन सुमन प्यारे । सो मनमथ भंजन हेत, पूजूं पद थारे ॥ श्रीवीर० ॥ जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०॥४।

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थारभरी । पदजज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी ॥ श्रीवीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०॥५॥

तमखंडित मंडित नेह, दीपक जोवत हूँ । तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हूँ ॥ श्रीवीर० जय वर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥

हरिचन्दन अगर कपूर, चूरि सुगन्ध करे । तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरे ॥ श्री वीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि०॥७॥

रितुफल कलवर्जित लाय, कंचनथार भरौं । शिव फल हित

हे जिनराय, तुम ढिग भेट धरौं ॥ श्री वीर० ॥ जयवर्द्धमान०॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥
जलफल वसु सजि हिमथार, तनमन मोद धरौं। गुण गाऊं भवदधितार, पूजत पापहरौं ॥ श्रीवीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि०॥९॥

पंचकल्यानक—राग टप्पा।

मोहि राखौ हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखौ हो सरना ॥ टेक ॥ गरभ साढ़सित छट्ट लियौ तिथि, त्रिशला उर अघहरना। सुर सुरपति तित सेव करत नित, मैं पूजूं भवतरना ॥ मोहि राखौ० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठिदिने गर्भमङ्गलमण्डिताय श्री-महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा० ॥ १ ॥

जन्म चैत सित तेरस के दिन, कुंडलपुर कनवरना। सुरगिर सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजूं भवहरना ॥ मोहिराखौ०

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदशीदिने जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीमहा-वीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मगशिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरणा। नृप कुमारघर पारन कीना, मैं पूजूं तुम चरना। मोहि राखौ हो०॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमङ्गलमंडिताय श्री-महावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

शुकलदशैं वैशाखदिवस अरि, घात चतुक छय करना। केवल लहि भवि भवसर तारे, जजूं चरन सुख भरना ॥ मोहि राखौ० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहा-वीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतैं वरना। गनफ-
निवृंद जजैं तित बहु विधि,मैं पूजूं भवहरना॥मोहिराखो०॥५॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावास्यायां मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

अथ जयमाला। छंदहरिगीता (२८ मात्रा)

गनधर असनिधर चक्रधर, हरधर गदाधर वरवदा।
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा॥
दुखहरन आनँदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं।
सुकुमाल गुन मणिमाल उन्नत, भालकी जयमाल हैं॥१॥

छंद घत्तानंद (३१ मात्रा)

जय त्रिशलानंदन हरिकृतवंदन, जगदानंदनचंद वरं।
भवतापनिकंदन तनमनवंदन, रहितसपंदन नयन धरं॥२॥

छंद तोटक।

जय केवलभानुकलासदनं। भविकोकविकाशन कंजवनं॥
जगजीत महारिपु मोहहरं। रजज्ञानदृगांवरचूरकरं॥१॥
गर्भादिक मंगल मंडित हो। दुख दारिदको नित खंडित हो।
जगमांहि तुमी सत पंडित हो। तुमही भवभावविहंडित हो॥१॥
हरिवंससरोजनकौं रवि हो। वलवंत महंत तुमी कवि हो॥
लहि केवल धर्मप्रकाश कियौ। अबलौं सोई मारग राजतियौ॥३॥
पुनि आपतने गुणमाहिं सही। सुर मग्न रहैं जितने सब ही।
तिनकी वनिता गुण गावत हैं। लयताननिसों मनभावत हैं॥४॥
पुनि नाचत रंग अनेक भरी। तुव भक्तिविषै पग एम धरी।
झननं झननं झननं झननं। सुर लेत तहाँ तननं तननं॥५॥

घननं घननं घनघंट बजैं । द्रूमदं द्रूमदं मिरदंग सजैं ।
गगनांगणगर्भगता सुगता । ततता ततता अतता वितता॥६॥
धृगतां धृगतां गति बाजत है। सुरताल रसाल जु छाजत है।
सननं सननं सननं नभमैं । इकरूप अनेक जु धार भमैं ॥७॥
कइ नार सु बीन बजावतु हैं । तुमरौ जस उज्वल गावतु हैं ।
करतालविषैं करतालधरैं । सुरताल विशाल जु नाद करैं॥८॥
इन आदि अनेक उछाहभरी । सुरभक्ति करैं प्रभुजी तुमरी ।
तुमही जगजीवनकेपितु हो । तुमही बिन कारणके हितहो॥६॥
तुमही सब विघ्न विनाशन हो । तुमही निज आनंदभासन हो ।
तुमहीं चितचिंतितदायक हो । जगमाहिं तुमी सब लायकहो॥१०
तुमरे पनमंगलमाहिं सही । जिय उत्तम पुण्य लियौ सब ही ।
हमको तुमरी सरनागत है । तुमरे गुनमैं मन पागत है ॥११॥
प्रभु मो हिय आप सदा बसिये । जबलौं बसुकर्म नहीं नसिये ।
तबलौं तुम ध्यान हिये बरतो । तबलौं श्रुतचिंतन चित्तरतो॥१२॥
तबलौं व्रत चारित चाहत हौं । तबलौं शुभ भाव सुगावत हौं ।
तबलौं सतसंगति नित्य रहौ । तबलौं मम संजम चित्त गहौ॥१३
जबलौं नहि नाश करौं अरिको । शिवनारि वरौं समताधरिको ।
यह द्यो तबलौं हमको जिनजी । हम जाचत हैं इतनी सुनजी॥१४

छंद घत्तानन्द ।

श्री वीर जिनेशा नमित सुरेशा, नाग नरेशा भगति भरा ।
'वृन्दावन ध्यावैं' वांछित पावैं शर्मवरा ॥ १५ ॥
ॐ ह्रीं श्री वर्धमान जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दोहा ।

श्री सनमति के जुगल पद, जो पूजहि धर प्रीति ।
वृन्दावन सो चतुर नर, लहै मुक्त नवनीत ॥ १६ ॥

धारैंसंस्कृत ।

जयमालासहित ।

वसन्त तिलकाछन्द ।

यःपांडुकामल शिलागतमादि देव । सिस्नापयामिसु वरान्सुरशैलभूद्धि्न । कल्याणमीश्वर हर्मक्षित तोयपुष्पैः । सम्भावयामिपुरएवतदीपविम्बम् ॥ १ ॥ जिन विम्ब स्थापनं ॥ सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरूप्य । तम्रारकूटघटितापयसं सपूर्णान् । संवाजतो मिवगताचतुरासमुद्रान् । संस्थापयामि कलशां जिनवेदिकान्ते । कलश स्थापनम् ॥ २ ॥ दूरावनाम्र-सुरनाथकिरीटकोटी । संलग्नरत्नकिरणाक्षविधूसरांगी । प्रस्वेदतंपरिमलामुकतेप्रेकोष्टं । भक्त्याजलैजिनपतीवदुधा-भिषेक ॥ ३ ॥ जलस्नानं ॥ भक्त्याललाटतटदोसनिवेसतोचैं । हस्तीस्तुतासुरवरासुरमर्तिनाथै । तत्कालपेलतमहेक्षुरसंस्य-धारा । सद्यापुनातुजिनविम्बगतैवजुख्यान् ॥ ४ ॥ इक्षुरसस्ना-पनं ॥ उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिरामा । देहप्रभावलयसंकमलू-प्रदीस्थां । धाराघृतस्यशुभगन्धगुणानुमेयं । वन्देर्हतंसुरभिसं-स्नपनंकरोमिः ॥ ५ ॥ घृतस्नापनं ॥ सम्पूर्णशारदशशांकमरीच जालैः । सद्यं रिवात्मयशसाम्विलाप्रवाहै । क्षीरे जिनाशुचित रैरभिषिंचमानं । सम्पादयन्तिमभिचिन्तसमीहितानं ॥ ६ ॥ दुग्धस्नापनं ॥ दुग्धाब्धिवोचिचयसंचितफेनराशै । पांडुत्व कान्तिमिवधारयतामतीवा । दध्यागताजिनपतेप्रतिमंसुधारा । सम्पादितंसयदिवांक्षित सिद्धयेव ॥ ७ ॥ दधिस्नापनं ॥ संस्ना पितस्यघृतदुग्धदधिप्रवाहै । सर्वाभिरौषधिभिरंहतउज्ज्वला-

भी । उद्धर्त्ततस्यविदधामभिषेकमेला । कालेयकुम्कुमरसोत्कट वारिपूरे ॥ ८ ॥ सर्वौपधीस्नापनं ॥ इष्टैमनोरथसतैरितभव्य पुंसे । पूर्णसुवर्णकलशैनिखिलावसानैसन्सारसागरविलंघनहेतुसेतौ । मप्लावरोत्रभुवनाद्धिपतिंजिनेंद्रं ॥ ९ ॥ चतुरकलश स्नापनं ॥ द्रव्यैरनल्पघनसारचतुरासमुद्रै । रामोदवासितसमस्तदिगन्तरात्मै । मिश्रीकृतेनपयसाजिनपुंगवानं । त्रैलोक्य पावनमहंस्नपनंकरोमिः ॥ १० ॥ गन्धोदकस्नापनं ॥ श्लोक ॥ निर्मलःनिर्मलीकरणं पवित्रं पापनासनं । जिनगन्धोदकंवन्दे । सर्वपापविनाशनं ॥ ११ ॥ गन्धोदकवन्दनं ॥ अथ जयमाला ॥ अन्तमहि जिनेश्वर र्महि परमेश्वर इन्द्रन्हवनसंजोइयऊ । तव देखिविकम्पो हियराजम्पो सुरंपरंपरवोलियऊ ॥ पद्धड़ीछन्द ॥ क्षिमकलशढुरैंवालोजिनेंद्र । तसुमन में जम्पोसुरवरेन्द्र । दिट्ठोजिनेन्द्रवालोशरीर । तवमेरुअंगूठाहनोवीर ॥ १ ॥ डगमगो मेरु कम्पो सुरेश । वीराधिवीरजाने जिनेश । सुरसाथ सुरेश भये अनंद । त्रैलोक्य नाथ जहां भुवन चन्द्र ॥ २ ॥ जय जय वालोपन भुवन मन्थ । कन्दर्प दलन निज मुक्ति पंथ । सुरनर पतियंजर गुणहऋद्धि । तुम दर्शन स्वामी होहुसिद्ध ॥ ३ ॥ तहां इन्द्र सुन्हौन करायत्र । ते तीसकोटि शिरधरैं क्षत्र । ढारेघटसहस्ररुअष्टनीर । क्षीरोदधि से ला सुरसुधीर ॥ ४ ॥ कुमकुम चंदन चर्चें शरीर । भवताप दहननाशन सुवीर । जे अन्य विरस गुरुकर विभाव । जे अमर लहैं शिव पुरी ठाव ॥ ५ ॥ उज्ज्वल अक्षत आगे धरेहु । अरिहन्तसिद्धिपुनि पुनिभनेहु ॥ जेनेवजनवचिधिथारदेहि । मन वचनसफलकाया करेहि ॥ ६ ॥ आतऊ इन्द्रकरचलोशांति । मणिरत्नप्रदीपहि प्रज्वलांति ॥ तंधूपअगरखेवैंसुगन्ध । मयभुंजयनरघरपट्टबन्ध ॥ ७ ॥ फलनालिकेलिजिनचढ़नयोग्य । करभावधरैंपुनलहैं

भोग्य ॥ वसुविधिपूजाकर चलोइन्द्र । दुन्दुभीबाजेंसुरभया नन्द ॥ ८ ॥ नरपुहिमिलोयरंजोमहेन्द्र । सब विधिसे भक्ति करीसतेन्द्र । केसोबहुनन्दनकरहिएव । किरपालभनेंजिनवर णसेव ॥ ९ ॥ घत्ता । सम्यक्त्वदृढ़ावे ज्ञान बढ़ावे विविधभांति स्तुति करऊ । जिनवरमनध्यावे शिव पद पावे भव समुद्रदुस्त-रतिरऊ । इत्याशीर्वादः ।

॥ इति धारें जयमालसहित सम्पूर्णम् ॥

जन्मकल्याणक पूजा ।

दोहा ।

दोष अठारह रहित प्रभु, सहित सुगुण छ्यालीस ।
तिन सब की पूजा करौं, आय तिष्ट जगदीश ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्री-मदर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र अवतर! अवतर! संवौषट् ।

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट् चत्वारिंशदगुणसहित श्रीमदर्हपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट् चत्वारिंशदगुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्ठन्! अत्रममसन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

(द्यानतरायकृत नन्दीश्वर द्वीपाष्टक की चाल ।)

शुचिक्षीरउदधिको नीर, हाटक भृंग भरा ।
तुमपदपूजों गुणधीर, मेटो जन्मजरा ॥
हरि मेरुसुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।
हम पूजैं इन गुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादोषरहित षट् चत्वारिषद्गुण सहित श्री-

मदर्हत्परमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

केसर घनसार मिलाय, शीत सुगन्धघनी।
जुगचरनन चर्चौं लाय, भव आतापहनी ॥
हरि मेरु सुर्दन जाय, जिनवर न्हौन करें।
हम पूजैं इत गुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोपरहित षट् चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्ठिने संसारातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अक्षत मोती उनहार, स्वेत सुगन्ध भरे।
पाऊं अक्षयपद सार, ले तुम भेंट धरे ॥
हरि मेरुसुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें।
हम पूजैं इतगुणगाय, मङ्गल मोद धरें ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोपरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥

बेलहा जूही गुलाव, सुमन अनेक भरे।
तुम भेंट धरों जिनराज, काम कलंक हरे ॥
हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें।
हम पूजैं इतगुण गाय, मंगल मोद धरें ॥४॥

ॐ ह्रीं अष्टादश दोपरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्टिने कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फेनी गोझा पकवान, सुन्दर ले ताजे।
तुम अग्र धरों गुण खान, रोग छुधाभाजे ॥
हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें।
हम पूजैं इत गुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचन मय दीपक वार, तुम आगे लाऊं।
मम तिमिर मोह छैकार, केवल पद पाऊं॥
हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें।
हम पूजैं इत गुण गाय, मंगल मोद धरें॥ ६॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु तगर कपूर, चूर सुगन्ध करो।
तुम आगे खेवत भूर, वसुविध कर्म हरों॥
हरि मेरु सुदरशन जाय, जिनवर न्हौन करें।
हम पूजैं इत गुण गाय, मंगल मोद धरें॥ ७॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल अंगूर अनार, खारक थार भरों।
तुम चरन चढ़ाऊं सार, तां फल मुक्ति वरों॥
हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें।
हम पूजैं इत गुण गाय, मंगल मोद धरें॥ ८॥

ॐ ह्रीं अष्टादश दोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल आदिक आठ अदोष, तिनका अर्घ करों।
तुम पद पूजों गुण कोष, पूरन पद सु धरों॥
हरि मेरु सुदरशन जाय, जिनवर न्हौन करें।
हम पूजैं इत गुण गाय, चदरी मोद धरें॥ ९॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमदर्हत्परमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आरती ।

(जोगीरासा ।)

जन्मसमय उच्छव करने को, इन्द्र शची युत धायो।
तिहुँ को कछु वरणन करवेको, मेरो मन उमगायो॥
बुधि जन मोकों दोष न दीजो, थोरी बुद्धि भुलायो।
साधू दोष क्षमै सब ही के, मेरी करौ सहायौ॥ १॥

(छन्द कामिनी—मोहन मात्रा २० ।)

जन्म जिनराज को जबहिं निज जानियों।
इन्द्र धरनिंद्र सुर सकल अकुलानियों॥
देव देवाङ्गना चलियँ जयकारतीं॥
शचियँ सुरपति सहित करतिं जिन आरती॥ २॥

साजि गजराज हरि लक्ष जोजन तनो। वदन शत वदन प्रति दन्त वसु सोहनो॥ सजल भरि पुर सरतंत प्रति धारतीं। शचियँ सुरपति सहित, करतिं जिन आरतीं॥ ३॥ सरहिं सर पंच दुय एक कमलिनी बनी। तासु प्रति कमल पच्चीस शोभा घनी॥ कमल दल एक सौ आठ विस्तारतीं। शचियं सुरपति सहित करत जिन आरतीं॥ ४॥ दलहिं दल अप्सरा नाचहीं भावसों। करहिं सङ्गीत जयकार सुर चावसों॥ तगड़दा तगड़ थेई करत पग धारतीं। शचियं सुरपति स०॥५॥ तासु करि बैठि हरि सकल परिवारसों। देहि पर दक्षिणा जिनहिं जयकारसों॥ आनि कर शचियं जिननाथ उर धारतीं। शचियं सुरपति स०॥ ६॥ आन पांडुक शिला पूर्व मुख थाप जिन। करहिं अभिषेक उच्छाह सों अधिक तिन॥ देखि

प्रभु बदन छवि कोटि रवि वारती ॥ शचियं सु० ॥ ७ ॥ जो जनह आठ गम्भीर कलशा बने । चारि चौराई मुख एक जोजन तने ॥ सहसरु आठ भरि कलश शिर ढारही ॥ शचिय सुरपति स०॥८॥ छत्र मणि खचित ईशान करतारहीं । सनत महेन्द्र दोऊ चमर शिर ढारहीं ॥ देव देवीय पुष्पांञ्जि ढारती ॥ शचियं सुरपति सहित करहि जिन० ॥ ९ ॥ जलसु चन्दन पहुप शालि चरु ले धरों । दीप अरु धूप फल अर्घ ले पूजा करों ॥ पिंडिका और नीरांजना वारतीं ॥ शचियं सुरपति सहित कर० ॥१०॥ कियो शृङ्गार सब अंग सामान सों । आनि मातहिं दियो बहुरि जिनराज कों ॥ तृपत नहीं होत दृग रूप निहारतीं ॥ शचियं सुरपति सहित करत० ॥ ११ ॥ ताल मिरदंग धुनि सप्तसुर बाजहिं । नृत्य तांडव करत इन्द्र अति छाजहीं ॥ करत उच्छाह सौं निज सु पद धारतीं ॥ शचियं सुरपति सहित करत० ॥ १२ ॥ भव्यजन आय जिन जन्म उत्सव करें । आपने जन्म के सकल पातिक हरें ॥ भक्ति गुरुदेव की पार उत्तारतीं । शचियं सुरपति सहित करहिं जिन आरतीं ॥ १३ ॥

घत्ता ।

जिन वर पद पूजा भावसु हूजा, पूरण चित्त आनन्द भया ।
जयवन्त सु हूजो आसा पूजो, लाल विनोदी भाल नया ।

ॐ ह्रीं अष्टादश दोषरहित षट् चत्वारिंशद्गुण सहित श्री मदर्हत्परमेष्ठिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौपाई ।

मंगल गर्भ समय में जोय । मंगल भयो जन्म में जोय ॥
मंगल दीक्षा धारत जोय । मंगल ज्ञान प्राप्ति में जोय ॥

मंगल मोक्ष गमन में जोय। इन्द्रन कीनों हर्षित होय॥
जाचूँ वार बार हों सोय। हे प्रभु! दोजे मंगल मोय॥
इत्याशीर्वादः। (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

——:※:——

फूलमाल पचीसी।

दोहा।

जैन धरम त्रेपन क्रिया, दया धरम संयुक्त।
यादों वंश विषैं जये, तीन ज्ञान करि युक्त॥१॥
भयो महोछो नेमिको, झूनागड़ गिरनार।
जाति चुरासिय जैनमत जुरे क्षोहनी चार॥२॥
माल भई जिनराजकी, गुंथी इन्द्रन आय।
देशदेशके भव्य जन, जुरे लेनको धाय॥३॥

छप्पय।

देश गौड़ गुजरात चौड़ सोरठि वीजापुर।
करनाटक कशमीर मालवो अरु अमेरपुर॥
पानीपथ हीं सार और वैराट महा लघु।
काशी अरु मरहट्ट मगध तिरहुत पट्टन सिंधु॥
तहँ वंग चंग बंदर सहित, उदधि पार लौ जुरिय सव।
आसा जु चीन मह चीन लग, माल भई गिरनारि जव॥४॥

नाराच छन्द।

सुगन्ध पुष्प वेलि कुंद केतकी मगायकें। चमेलि चंप सेवती जुही गुही जु लायकें॥ गुलाव कंज लायची सवे सुगंध जातिसे। सुमालती महा प्रमोद लै अनेक भांतिके॥५॥ सुवर्ण तारपोइ बीच मोति लाल लाइया। जु हीर पन्न नील पीत पद्म जोति छाइया॥ शची रची विचित्र भांति चित्त देवनाइ

है । सुइंद्रने उछाहसों जिनेंद्रको चढ़ाई है ॥६॥ सुमागहीं अमोल माल हाथ जोरि वानियें । जुरीं तहां चुरासि जाति रावराज जानिये ॥ अनेक और भूपलोग सेठ साहु को गनें । कहालु नाम वर्णिये सुदेखते सभा वनें ॥७॥ खँडेलवाल जैसवाल अग्रवाल आइया । ववेरवाल पोरवाल देशवाल छाइया ॥ सहेलवाल दिल्लिवाल सेतवाल जातिके । बघेरवाल पुष्पमाल श्री श्रीमाल पांतिके ॥८॥ सुओसवाल पल्लिवाल चूरुवाल चौसखा । पद्मावतीय पोरवाल दूसरा अठैसखा ॥ गंगेरवाल वंधुराल तोर्णवाल सोहिला । करिद्वाल पच्चिवाल मेडवाल खोहिला ॥९॥ लवेंचु और माहुरे महेसुरी उदार हैं । सुगोलालारे गोलापूर्व गोलहू सिंघार हैं ॥ वंधनौर मागधी विहारवाल गूजरा । सुखंड राग होय और जानराज दूसरा ॥१०॥ भुराल और सुराल और सोरठी चितौरिया । कपोल सोमराठ वर्ग हूमड़ा नागौरिया ॥ सीरीगहोड़ भंडिया कनौजिया अजोधिया । मिवाड़ मालवान और जोघड़ा समोधिया ॥११॥ सुभट्टनेर रायवल्ल नागरा रूधाकरा । सुकंथ राउ जालु राउ वालमीक भाकरा ॥ पमार लाड़ चोड़ कोड़ गोड़ मोड़ संभरा । सु खंडिआत श्री खंडा चतुर्थ पंचमं भरा ॥१२॥ सु रत्नकार भोजकार नारसिंघ हैं पुरी । सु जंबूवाल और क्षेत्र ब्रह्म वैश्य लौंजुरी ॥ सु आइ हैं चुरासि जाति जैनधर्मकी धनी । सबै विराजी गोठियो जु इन्द्रकी सभा बनी ॥१३॥ सुमाल लेनको अनेक भूपलोग आवहीं । सु एक एकतें सुमाग मालको बढ़ावहीं ॥ कहें,जु हाथ जोरि जोरि नाथ माल दीजिये । मगाय देउँ हेमरत्न सो भँडार कीजिये ॥१४॥ बघेलवाल बाँकड़ा हजार बीस देत हैं । हजार दे पचास दे पोरवार फेरि लेत हैं । सु जैसवाल लाख देत माल लेत चोंपसों । जु दिल्लिवाल,

दोय लाख देत है अगोपर्सो ॥१५॥ सु अग्रवाल बोलिये जु माल मोह दीजिये । दिनार देंहु एक लक्ष सो गिनाय लीजिये । खँडेलवाल बोलिया जु दोय लाख देंउगो । सुवाँटि केलमोल में जिनेन्द्रमाल लेउँगो ॥१६॥ जु संभरी कहैं सु मेरि खानि लेहु जायकें । सुवर्ण खानि देत हैं चितौड़िया बुलायके ॥ अनेक भूप गांव देत रायसो चँदेरिका । खजान खोलि कोठरीं सु देत हैं अमेरिका ॥१७॥ सुगौड़वाल यों कहै गयन्द वीस लीजिये । मढ़ाय देउ हेमदन्त माल मोहि दीजिये ॥ पमार के तुरङ्ग साजि देत हैं विनागने । लगाम जीन पाहुड़े जड़ाउ हेमके वने ॥१८॥ कनौजिया कपूर देत गाड़िया भरायके । सुहीर मोति लाल देत ओशवाल आयके ॥ सु हूमड़ा हँकारहीं हमें न माल देउगे । भराइये जिहाज में कितेक दाम लेउगे॥१९॥ कितेक लोग आयके खड़े ते हाथ जोरकें । कितेक भूप देखिके चले जु वाग मोरिकें ॥ कितेक सूम यों कहैं जु कैसै लक्षि देत हो । लुटाय माल आपनों सु फूलमाल लेत हो ॥२०॥ कई प्रवीन श्राविका जिनेन्द्र को बधावहीं । कई सु कंठ रागसों खड़ी जु माल गावहीं । कईसु नृत्यको करैं नहैं अनेक भावहीं । कई मृदङ्ग तालपे सु अंगको फिरावहीं ॥२१॥ कहैं गुरू उदार धी सु यों न माल पाइये ॥ कराइये जिनेन्द्र यज्ञ विंवहू भराइये ॥ चलाइये जु संघ जात संघही कहाइये । तवै अनेक पुण्यसों अमोल माल पाइये ॥२२॥ सँवोधि सर्व गोटिसो गुरू उतारकें लई । बुलाय कें जिनेंद्रमाल संघ रायको दई । अनेक हर्षसो करैं जिनेंद्र तिलक पाइये । सुमाल श्रीज़िनेंद्रकी विनोदीलाल गाइये ॥२३॥

दोहा ।

माल भई भगवन्तकी, पाई संग नरिन्द ।

लालविनोदी उच्चरैं, सबको जयति जिनंद ॥२४॥
माला श्री जिनराजकी, पावै पुण्य संयोग।
यश प्रघटै कीरति बढ़ै, धन्य कहैं सबलोग ॥२५॥

फूलमाल पच्चीसी समाप्त ॥

———:※:———

श्री तारंगाजीक्षेत्र पूजा।

स्थापना।

वरदत्तादि ऊंठकोटि मुनि जानिये, मुक्ति गये तारंगा गिरिसे मानिये। तिन सबको शिरनाय सुपूजा ठानिये, भवदधि तारन जान सुविरद बखानिये॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्तय अत्रावतरावतर संवौषट् (आह्वाननं)। ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्तय अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं)। ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणं)।

अथाष्टक।

शीतल प्रासुक जललाय भाजनमें भरके, जिन चरनन देत चढ़ाय रोग त्रिविध हरके। तारंगा गिरिसे जान वरदत्तादि मुनि, सब ऊंठकोटि परमान, ध्याऊं मोक्षधनी ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री तारङ्गा गिरिसे वरदत्त सागरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ जलं ॥ मलियागर चंदन लाय केशर मांहि घिसे, जिन चरण जजू चित्तलाय भव आताप नसे। तारंगा गिरिसे जान वरदत्तादि

मुनि, सब ऊंठकोटि परमान, ध्याऊं मोक्षधनी ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्त सागरदत्तादि साढ़े तीनकोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ चंदनं ॥ तंदुल अखंड भरथार उज्वल अति लीजे अक्षयपद कारणसार पूज सुढिग कीजे। तारंगा गिरिसे जान, वरदत्तादि मुनि, सब उंठ कोड़ परमान ध्याउं मोक्षधनी ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्त सागरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥ अक्षतं ॥ चंपा गुलाब जई आदि फूल बहुत लीजे, पूजो श्री जिनवर पाद काम विथा छीजे। तारंगा गिरि से जान वरदत्तादि मुनि, सब उंठकोटि परमान ध्याउं मोक्षधनी ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्त सागरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ पुष्पं ॥ नाना पक्वान बनाय सुवरण थाल भरै, प्रभूको अर्चौं चित्तलाय रोग क्षुधादि हरै। तारंगा गिरिसे जान वरदत्तादि मुनि, सब उंठकोटि परमान ध्याउं मोक्षधनी ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्त सागरदत्तादि साढ़ेतीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ दीप कपूर जगाय जगमग जोति लसे, करूं आरति जिन चित्तलाय (गुणगाय) मिथ्या तिमिर नसे। तारंगा गिरसे जान वरदत्तादि मुनि, सब ऊंठकोटि परमान ध्याऊं मोक्षधनी ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्त सागरदत्तादि साढ़ेतीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा । दीपं । कृष्णागर धूप सुवास खेऊं प्रभू आगे, जैल जाय कर्मकी रास ध्यान कला आगे। तारंगा गिरिसे जान वरदत्तादि मुनि, सब ऊंठकोटि परमान ध्याऊं मोक्षधनी ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे

वरदत्त सागरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ श्रीफल कदली बादाम पुंगी फल लीजे, पूजो श्रीजिनवर धाम, शिवफल पालीजे। तारंगा गिरिसे जान वरदत्तादि मुनि, सब ऊंठकोटि परमान ध्याऊं मोक्षधनी ॥८॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसेवरदत्त सागरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ शुचि आठो द्रव्य मिलाय तिनको अर्घ करो, मन वच तन दहु चढ़ाय भवतर मोक्षवरो। तारंगा गिरिसे जान वरदत्तादि मुनि, सब ऊंठकोटि परमान ध्याऊ मोक्ष-धनी ॥९॥ ॐ ह्रीं श्री तारंगा गिरिसे वरदत्त सागरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—वरदत्तादि मुनिंद्र, ऊंठकोटि मुक्तिह गये। वंदत सुर नर इन्द्र, मुक्ति रमणके कारणे ॥ पद्धड़ि छंद ॥ गुजरात देशके मध्य जान, इक सोहे ईडर संसथान। ताकी सुपश्चिम दिश बखान, गिरि तारंगा सोहे महान ॥१॥ तहांते मुनि उंठ करोड़ सोय, हन कर्म सबे गये मोक्ष सोय। तागिरपर मंदिर है विशाल, दरसन से चित्त होवे खुशाल ॥२॥ नायक सुमूल संभव अनूप, देखत भवि ध्यावत निजस्वरूप। पुनि तीन टुकपर दर्शजान, भविजन वंदत उह हर्षठान ॥३॥ तहां कोटि शिला पहिली प्रसिद्ध, दूजी तीजी है मोक्ष सिद्ध। तिनपर जिन चरण विराजमान, दर्शन फल हम सुनिये सुजान ॥४॥ जो वंदै भविजन एकवार, मनवांछित फल पावे अपार। वसुविध पूजे जो प्रीतिं लाय, दारिद तिनका क्षणमें पलाय॥५॥

सब रोग शोक नाशे तुरंत, जो ध्याये प्रभूको पुन्यवंत।
अरु पुत्रपौत्र संपत्ति होय, भव भवके दुःख डारे सुखोय ॥६॥
इत्यादिक महिमा, है अपार, वर्णनकर कविको लहे पार।
अब बहुत कहा कहिये बखान, कहे 'दीप' लहे ते मोक्ष धान ॥७॥

घत्ता।

तारंगा वंदो मन आनंदो, ध्याऊं मन वच शुद्धकरा।
सब कर्म नसाऊं शिवफल पाऊं, ऊंठकोटि मुनि-राजवरा।
ॐ ह्रीं श्री तारंगागिर सिद्धक्षेत्रसे वरदत्त सागरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपद प्राप्ताय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

—:※:—

देव शास्त्र गुरु पूजा की अचरी।

फटिक मणिमय खचित भाजन, गंग जल जामें भरौं।
इन्द्रसुर सब साज लै, इहि भांत पूजा विस्तरौं ॥
तेहू करै मणिहार मणिमय, पूज प्रभू कासैं बनैं।
त्रैलोक्य नाथ अनन्त गुण को कह सकै सुनतई बनैं ॥ १ ॥
साखा सुगन्धित घिस कालङ्कित चरण चरचित अनुसरौं।
इन्द्रसुर सब साज ले इहि भांत पूजा विस्तरौं ॥ तेहू० ॥ २ ॥
हीरा कनीसी जोत जामें थिति अखण्ड पू जन धरौं।
इन्द्रसुर सब साज लै इहि भांत पूजा विस्तरौं ॥ तेहू० ॥ ३ ॥
परिजात के फल फूल ले जुग आन कैं वर्षा करौं।
इन्द्रसुर सब साज ले इहि भांत पूजा विस्तरौं ॥ तेहू० ॥ ४ ॥
मेवा सु मिष्ट कलप तरू के थार भर आगे धरौं।

इन्द्र सुर सब साज ले इहि भांत पूजा विस्तरैं ॥ तेहू० ॥ ५ ॥
दीप रतनन जोत जामें नृत्य कर आरति करैं ।
इन्द्र सुर सब साज ले इहि भांत पूजा विस्तरैं ॥ तेहू० ॥ ६ ॥
धूप दशाङ्गी खेइये वसु कर्म भव भव के दहैं ।
इन्द्र सुर साज ले इह भांत पूजा विस्तरैं ॥ तेहू० ॥ ७ ॥
फलयुक्त लै आगे धरैं प्रभू फल फले से अनसरैं ।
इन्द्र सुर सब साज ले इहि भांत पूजा विस्तरैं ॥ तेहू० ॥ ८ ॥
वसु द्रव्य ले एकत्र इह विधि अर्घ ले मङ्गल पढ़ौं ।
इन्द्र सुर सब सव साज ले इहि भांत पूजा विस्तरैं॥तेहू०॥९॥

—:※:—

अथ शान्तिपाठः प्रारभ्यते ।

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये)

दोधकवृत्तम् ।

शान्तिजिनं शशिनिर्म्मलवक्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।
अष्टशतार्च्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥
पञ्चममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥२॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥*
तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यमरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

* अशोकवृक्षः सुरपुष्पवृष्टिर्दिव्यध्वनिश्चामरमासनं च ॥ भामण्डलं दुन्दुभिरातपत्रं सत्प्रातिहार्य्याणि जिनेश्वराणाम् ॥ (यह श्लोक क्षेपक है, इसे बोलना न चाहिये ।)

वसन्ततिलका ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पादपद्माः । ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थङ्कराः सतत शान्तिकराभवन्तु ॥५॥

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधना नाम्'।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्ति भगवान् जिनेन्द्रः॥६॥

स्रग्धरावृत्तम् ।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुश्टुप् ।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्ति वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः सङ्गतिः सर्वदार्य्यैः
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोपवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भव भवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

आर्यावृत्तम् ।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ १० ॥

आर्या ।

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥१॥
दुःक्खखओ कम्मखओ समाहिमरणं च बोहिलाहो य ।
मम होउ जगतबंधव तव जिणवर चरणसरणेण ॥१२॥
(परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

—:※:—

अथ विसर्जनम् ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥१॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम् ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥३॥
आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम् ।
ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥
इति नित्यपूजाविधानं समाप्तम् ।

——:※:——

इति बुधजन कृत स्तुति ।

प्रभु पतित पावन मैं अपावन, चरण आयो शरण जी ।
यह विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरण जी ॥
तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविध प्रकार जी ।
या बुद्धि सेती निज न जाण्या, भ्रम गिण्या हितकार जी ॥१॥
भव विकट वन में करम वैरी, ज्ञान धन मेरो हर्यो ।

तव इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्यो ॥
धन घड़ी यो धन दिवस योही, धन जनम मेरो भयो ।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभु को लख लयो ॥ २ ॥
छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासा पैं धरैं ।
वसु प्रातहार्य अनन्त गुण युत, कोटि रवि छवि को हरैं ॥
मिट गयो तिमर मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतम भयो ।
मोउर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिन्तामणि लयो ॥ ३ ॥
मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊं तुव चरण जी ।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनो तारन तरन जी ॥
जाचूँ नहीं सुरवास पुनि, नर राज परिजन साथ जी ।
" बुध " जाचहूँ तुव भक्ति भव भव, दीजिये शिवनाथ जी॥४॥

इति बुधजन कृत स्तुति ।

(यदि आशिका लेनी हो तो यह दोहा पढ़कर लेवे ।)

दोहा ।

श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीस चढ़ाय ।
भव भव के पातक कटैं दुःख दूर हो जांय ॥ १ ॥

—:*:—

सुप्रभातस्तोत्रम् ।

श्रीपरमात्मने नमः ॥ यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवेयद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे । यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुतं तद्भवैः सङ्गीतस्तुतिमंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः ॥ १ ॥ श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभिरालीढपादयुगदूर्धरकर्मदूर । श्रीनाभिनन्दनजिनाजितशंभवाख्य! त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।२। छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमान देवाभिनन्दनमुने सुमते जिनेन्द्र ।

पद्मप्रभारुणमणिद्युतिभासुराङ्ग त्व० ॥ ३ ॥ अर्हन् सुपार्श्व ! कदलीदल वर्णगात्र प्रालेयतारगिरिमौक्तिकवर्णगौर । चन्द्रप्रभ-स्फटिकपाण्डुरपुष्पदंत त्व० ॥ ४ ॥ सन्तप्तकाञ्चनरुचे जिन शीतलाख्यश्रेयान्विनष्टदुरिताष्टकलङ्कपङ्क । बन्धूकबन्धुररुचे जि-नवासुपूज्य त्व० ॥ ५ ॥ उद्दण्डदर्पकरिपो विमलामलाङ्गस्थे-मन्ननन्तजिदनन्तसुखाम्बुराशे । दुष्कर्मकल्मषविवर्जित धर्म-नाथ त्व० ॥ ६ ॥ देवामरीकुसुमसन्निभशान्तिनाथ कुन्थो दया गुणविभूषणभूषिताङ्ग । देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ त्व०॥७॥ यन्मोहमल्लमदभञ्जनमल्लिनाथ क्षेमङ्करावितथशासनसुव्रताख्य । यत्सम्पदा प्रशमितो नमिनामधेय त्व० ॥ ८ ॥ तापिच्छगुच्छ-रुचिरोज्ज्वल नेमिनाथ घोरोपसर्गविजयन् जिनपार्श्वनाथ । स्याद्वादसूक्तिमणिदर्पणवर्द्धमान त्व० ॥ ९ ॥ प्रालेयनीलहरि-तारुणपीतभासं यन्मूर्तिमव्ययसुखावसथं मुनीन्द्राः ध्यायन्ति सप्ततिशतं जिनवल्लभानां त्व० ॥ १० ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं माङ्गल्यं परिकीर्तितम् । चतुर्विंशतितीर्थानां सुप्रभातं दिने दिने ॥ ११ ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रेयःप्रत्यभिनन्दितम् । देवता ऋष्यः सिद्धाः सुप्रभातं दिने दिने ॥ १२ ॥ सुप्रभातं तवैकस्य वृषभस्य महात्मनः । येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्यसत्व सुखावहम् ॥ १३ ॥ सुप्रभातं जिनेन्द्राणां ज्ञानोन्मीलितचक्षुषाम् । अज्ञा-नतिमिरान्धानाम् नित्यमस्तमितो रविः ॥ १४ ॥ सुभातं जिने-न्द्रस्य वीरः कमललोचनः ॥ येन कर्माटवी दग्धा शुक्लध्याने-ग्रवह्निना ॥ १५ ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकल्याणं सुमङ्गलम् । त्रैलोक्यहितकर्तृ णां जिनानामेव शासनम् ॥ १६ ॥

इति सुप्रभातस्तोत्रं समाप्तं ॥

दृष्टाष्टकस्तोत्रम् ॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापहारि भव्यात्मनां विभव-सम्भवभूरिहेतुः । दुग्धाब्धिफेनधवलोज्ज्वलकूटकोटीनद्धध्वजप्रकारराजिविराजमानम् ॥ १ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैक लक्ष्मीधामर्द्धिवर्द्धितमहामुनिसेव्यमानम् । विद्याधरामरवधूजनमुक्तदिव्यपुष्पाञ्जलिप्रकरशोभितभूमिभागम् ॥ २ ॥ दृष्टंजिनेन्द्रभवनंभवनादिवासविख्यातनाकगणिकागणगीयमानम् ।नानामणिप्रचयभासुररश्मिजालव्यालीढनिर्मलविशालगवाक्षजालम् ॥ ३ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं सुरसिद्धयक्षगन्धर्वकिन्नरकरार्पितवेणुवीणा । सङ्गीतमिश्रितनमस्कृतधीरनादैरापूरिताम्बरतलोरुदिगन्तरालम् ॥ ४ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विलसद्विलोलमालाकुलालिललितालकविभ्रमाणम् ॥ माधुर्यवाद्यलयनृत्यविलासिनीनां लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यम् ॥ ५ ॥ दृष्टं जिनेन्द्र भवनं मणिरत्नहेमसारोज्ज्वलैः कलशचामरदर्पणाद्यैः । सन्मङ्गलैः सततमष्टशतप्रभेदैर्विभ्राजितं विमलमौक्तिकदामशोभम् ॥ ६ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं वरदेवदारुकर्पूरचन्दनतरुष्कसुगन्धिधूपैः । मेघायमानगगने पवनाभिघातचञ्चच्चलद्विमलकेतनतुङ्गशालम् ॥ ७ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनंधवलातपत्रच्छायानिमग्नतनुयक्षकुमारवृन्दैः दोधूयमानसितचामरपङ्क्तिभासं भामण्डलद्युतियुतप्रतिमाभिरामम् ॥ ८ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विविधप्रकारपुष्पोपहाररमणीयसुरत्नभूमि । नित्यं वसन्ततिलकश्रियमादधानंसन्मङ्गलम सकलचन्द्रमुनीन्द्रवन्द्यम् ॥ ९ ॥ दृष्टं मयाद्य मणिकाञ्चनचित्रतुङ्गसिंहासनादिजिनबिम्बविभूतियुक्तम् । चैत्यालयं यदतुलं परिकीर्तितं मे सन्मंगलं सकलचन्द्र मुनीन्द्रवन्द्यम् ॥ १० ॥ इति दृष्टाष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अद्याष्टकस्तोत्रम् ।

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम । त्वामद्राक्षं-यतो देव हेतुमक्षयसम्पदः ॥ १ ॥ अद्य संसारगम्भीरपारावारः-सुदुस्तरः । सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥ अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते । स्नातोहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ३ ॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्व-मंगलम् । संसारार्णवतीर्णोहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥ अद्य कर्माष्टकज्वालं विधूतं सकषायकम् । दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिने-न्द्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥ अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे शुभाश्चैचका-दशस्थिताः । नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ६ ॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः । सुखसङ्ग समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ७ ॥ अद्यकर्माष्टकं नष्टं दुःखो-त्पादनकारकम् । सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥ अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञानदिवाकरः । उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥ अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः । भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्श-नात् ॥ १० ॥ अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमानसः । तस्य-सर्वार्थसंसिद्धिर्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ११ ॥

इति अद्याष्टकं स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

—:*:—

सूतकनिर्णय ।

सुतक में देव शास्त्र गुरुका पूजन प्रक्षालादि तथा मन्दिरजीका वस्त्राभूषणादिको स्पर्शनकी मना है तथा पान दान भी वर्जित है ॥ सूतक पूर्ण होने के बाद प्रथम दिन पूजन

प्रक्षाल तथा पात्रदान करके पवित्र होवे। सूतक विवरण इस प्रकार है। १. जन्म का सूतक दश दिन का माना जाता है। २. स्त्री का गर्भ जितने माह का पतन हुआ हो उतने दिन का सूतक मानना चाहिये, विशेष यह है कि यदि तीन माह से कम का हो तो तीन दिन का सूतक मानना चाहिये। ३. प्रसूती स्त्री को ४५ दिन का सूतक होता है इसके पश्चात् वह स्नान दर्शन करके पवित्र होवे॥ कहीं कहीं चालीस दिन का भी माना जाता है। ४. प्रसूति स्थान एक माह तक अशुद्ध है। ५. रजस्वला स्त्री पांचवे दिन शुद्ध होती है। ६. व्यभिचारिणी स्त्री के सदा ही सूतक रहता है। कभी भी शुद्ध नहीं होती। ७. मृत्यु का सूतक १२ दिन का माना जाता है। ८. तीन पीढ़ी तक १२ दिन, चौथी पीढ़ी में १० दिन, पांचवीं पीढ़ी में ६ दिन का, छठी पीढ़ी में ४ दिन, सातवीं पीढ़ी में ३ दिन, आठवीं पीढ़ी में एक दिन रात, नवमीं पीढ़ी में दो पहर, और दशमी पीढ़ी में स्नान मात्र से शुद्धता कहा है। ८. जन्म तथा मृत्यु का सूतक गोत्र के, मनुष्य को ५ दिन का होता है। १०. आठ वर्ष तक के बालक की मृत्यु का तीन दिन का और तीन दिन के बालक का सूतक १ दिन का जानो। ११. अपने कुल का कोई गृह त्यागी हो उसका सन्यासमरण अथवा किसी कुटुम्बी का संग्राम में मरण हो जाय, तो एक दिन का सूतक होता है। यदि अपने कुल का देशान्तर में मरण करे और १२ दिन के पूरे होने के पहिले मालूम हो तो शेष दिनों का सूतक मानना चाहिये। यदि दिन पूरे हो गये होवें तो स्नान मात्र सूतक जानो। १२. घोड़ी, भैंस, गौ आदि पशु तथा दासी अपने गृह में जने अथवा आंगन में जने तो १ दिन का सूतक होता है। गृह बाहर जने तो सूतक नहीं

होता । १३. दासी दास तथा पुत्री के प्रसूति होय या मरे, तो ३ दिन का सूतक होता है । यदि गृह बाहर हो तो सूतक नहीं । यहां पर मृत्यु की मुख्यता से ३ दिन का कहा है । प्रसूतका १ ही दिन का जानो । १४. अपने को अग्नि में जला कर (सती होकर) मरे तिस का छह माहका तथा और और हत्याओं का यथायोग्य पाप जानना । १५. जने पीछे भैंस का दूध १५ दिन तक, गाय का दूध १० दिन तक और बकरी का दूध आठ दिन तक अशुद्ध है पश्चात खाने योग्य है । प्रगट रहे कि कहीं देशभेद से सूतकविधान में भी भेद होता है इसलिये देशपद्धति तथा शास्त्रपद्धति का मिलानकर पालन करना चाहिये । (श्रावकधर्मसंग्रह से उद्धृत)

दुःख हरण विनती ।

श्रीपति जिनवर करुणायतनं, दुखहरन तुमारा बाना है । मत मेरी बार अबार करो, मोहि देहु विमल कल्याना है ॥ टेक त्रैकालिक वस्तु प्रतच्छ लखो, तुमसौं कछु बात न छाना है । मेरे उर आरत जो वरतै, निहचै सब सो तुम जाना है ॥ अवलोकि विथा मत मौन गहो, नहिं मेरा कहीं ठिकाना है । हो राजिवलोचन सोचविमोचन, मैं तुम सौं हित ठाना है ॥ श्री० ॥ १ ॥ सब ग्रन्थनि में निरग्रन्थनिने, निरधार यही गणधार कही । जिननायक ही सब लायक हैं, सुखदायक छायकज्ञानमही ॥ यह बात हमारे कान परी, तब आन तुमारी सरन गही । क्यों मेरी बार विलम्ब करो, जिननाथ कहो यह बात सही ॥ श्री० ॥ २ ॥ काहू को भोग मनोग करो, काहु को स्वर्ग विमाना है । काहू को नाग नरेशपति, काहू

को ऋद्धिनिधाना है। अब मो पर क्यों न कृपा करते, यह क्या अन्धेर जमाना है। इन्साफ करो मत देर करो, सुखवृंद भरो भगवाना है ॥ श्री० ॥ ३ ॥ खलकर्म मुझे हैरान किया, तब तुमसों आन पुकारा है। तुम हो समरत्थ न न्याय करो, तब बन्दे का क्या चारा है ॥ खलघालक पालक बालक का, नृप नीति यही जग सारा है। तुम नीतिनिपुण त्रैलोकपती, तुम ही लगि दौर हमारा है ॥ श्री० ॥ ४ ॥ जब से तुम से पहिचान भई, तब से तुम ही को माना है। तुमरे ही शासन का स्वामी!, हमको शरना सरधाना है ॥ जिनको तुमरी शरनागत है, तिनसों जमराज डराना है। यह सुजस तुम्हारे सांचे का अस गावत वेद पुराना है ॥ श्री० ५ ॥ जिसने तुम से दिल-दर्द कहा, तिसका तुमने दुख हाना है। अघ छोटा मोटा नाशि तुरित, सुख दिया तिन्हें मनमाना है ॥ पावकसों शीतल नीर किया, औ चीर बढ़ा असमाना है। भोजन था जिसके पास नहीं, सो किया, कुबेर समाना है ॥ श्री० ॥ ६ ॥ चिन्तामन पारस कल्पतरू, सुखदायक ये परधाना है। तुव दासन के सब दास यही, हमरे मन जे ठहराना है ॥ तुव भक्तन को सुर-इन्द्रपदी, फिर चक्रपती पद पाना है। क्या बात कहौं विस्तार बड़ी; वे पावैं मुक्ति ठिकाना है ॥ श्री० ॥ ७ ॥ गति चार चौरासी लाखविषैं, चिन्मूरत मेरा भटका है। हो दीन बन्धु करुणानिधान, अब लौं न मिटा वह खटका है ॥ जब जोग मिला शिवसाधन का, तब विघनकर्म ने हटका है ॥ तुम विघन हमारा दूर करो, प्रभु मोकों आश तुमारा है ॥ श्री० ॥ ८ ॥ गज ग्राहग्रसित उद्धार लिया, ज्यों अञ्जन तस्कर तारा है। ज्यों सागर गोपदरूप किया, मैनाका संकट टारा है ॥ ज्यों सूलीतैं सिंहासन औ बेड़ी को काट विडारा है। त्यों

मेरा संकट दूर करो, प्रभु मोकों आश तुमारा है ॥ श्री० ॥९॥
ज्यों फाटक टेकत पांय खुला, औ सांप सुमन करि डारा है।
ज्यों खड्ग कुसुमका माल किया बालक का जहर उतारा है॥
ज्यों सेठ विपत चकचूरि पूर, घर लछमी सुख विस्तारा है।
त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु, मोकों आश तुम्हारा है॥ १० ॥
जद्दपि तुम को रागादि नहीं, यह सत्य सर्वथा जाना है। चिन्मूरत आप अनन्त गुनी, नित शुद्ध दशा शिवथाना है॥ तद्दपि भक्तन की भीति हरो, सुख देत तिन्हें जु सुहाना है। वह शक्ति अचिन्त तुम्हारीका, क्या पावे पार सयाना है॥ श्री० ॥ ११ ॥ दुःखखण्डन श्रीसुखमंडनका, तुमरा प्रन परम प्रमाना है। वरदान दिया यस कीरतका, तिहुँलोक धुजा फहराना है॥ कमलाधरजी! कमलाधरजी! करिये कमला अमलाना है। अब मेरी विथा विलोक रमापति, रंच न बार लगाना है॥ ॥ श्री० ॥ १२ ॥ हो दीनानाथ अनाथहितू, जन दीन अनाथ पुकारी है। उदयागत कर्म विपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है। ज्यों आप और भवि जीवन की, तत्काल विथा निरवारी है। त्यों "वृन्द्रावन" यह अर्ज करै प्रभु, आज हमारी बारी है॥ श्री० ॥ १३ ॥

नेमिनाथजी का बारहमासा।

(पं० जियालालजी रचित)

नप उग्रसेन के द्वार, जु कर श्रृंगार, नेमि कव्वार, व्याहने आये। पशुवनकि टेर सुन गिरनारी जा छाए॥ टेक॥ कातिक में राजुल कहै, नैनजल बहै बिरह तन दहै, सुनोरी आली।

हमको तज मुनिवर भये नेमि बनमाली ॥ सखी पूजैं खेलैं जुआ, तिरी औ दुवा, खूब दिन हुवा, आज दीवाली । सब गावत मंगल चार बजावैं ताली ॥ झड़ी ॥ अगहन मैं बास नहिं प्यारा, तन भखा बिरहने सारा, सखी पड़ैं शीत अति भारा, साजन दुद्धर तपधारा ॥ अब पोह भई शरदाई, नेमि जदुराई, बने मुनिराई जोग मन भाये । पशुवनकि० ॥ अब माघ शीत का अन्त, समै बासन्त, पास नहि कंत, कहा अब करिये । सुन. होनहार से सखी कहा अब लरिये ॥ फागुनमैं खेलत होली, रंगभर झोली, पहन कर चोली, वस्त्र केसरिये । जो पिछले भव मैं किया सो इस भव भरिये ॥ झड़ी ॥ जब चैत फुलै बनराई, ऋतु शिशिर मेरे मन भाई । सो बिन पीतम दुखदाई, जो करम लिखा सोपाई । वैशाखमास भया गर्म, न पाया मर्म, तजके कुल कर्म सजन बन धाये ॥ पशुवनकी० ॥ अब जेठ पड़ै हैं अगन, लगे सब तपन, काया से झरन, लगैं पसीने । इस ऋतु साजन गिर शिखर जोगमैं भीने ॥ आषाढ़ बरसै घन घोर, बोलते मोर, कोयल करै शोर, पी मुझ चकवीने । किस लिये छोड़कर गये हमैं दुख दीने ॥ झड़ी ॥ सावनमैं तीज-तिव्हारे, सब झूलैं हिंडोलेनारे । सखी तज गये सजन हमारे हम बैठ रही मन मारे । भादों की अन्धेरी रैन, पड़ै नहिं चैन, तड़फते नैन, को पी समझाये । पशुवनकि० ॥ अब क्वारमास आ रहा, बहुत दुःख सहा, नैन जल बहा, कहन लगि राजुल । दो आज्ञा मुझ को गिर पर आऊं बाबुल ॥ अति तात मात समझाई, नहिं मन भाई, वहां से आई, पास पी के चल । लग नेमि प्रभु के चरण रहे आंसू ढल ॥ झड़ी ॥ प्रभु ने राजुल समझाई, वह भई अर्जिका बाई । नेमीश्वर मुक्ती पाई, राजुल सुरगोंमैं धाई । हम बरनै जियालाल, दीन दयाल, तुम्ही किर-

पाल, मुझे तो पाप । पशुवनकि टेर सुन गिरनारी जा छाप ॥

——:*:——

बारहमासी राजुल, सोरठ में ।

पिय प्यारे ने सुधि बिसराई । अब कैसे जियों मेरी माई ॥ टेक ॥ सखी आयो अगम अषाढ़ा । तब क्यों न गये गिरनारा ॥ मेरी रच संयोग बिसारी । मन में क्या नाथ विचारी ॥ अब क्यों छोड़ी अकुताई । अब० ॥ १ ॥ सावन में ब्याहन आये । सब यादव नृपति सुहाये ॥ पशुवन की करुणा कीनी । मेरी ओर दृष्टि ना दीनी ॥ गिरि गमन कियो यदुराई । अब ० ॥२॥ भादों बरसत गंभीरा । मेरे प्राण धरैं ना धीरा ॥ मोहि मात पिता समझावे । मेरे मन एक न आवे ॥ मो प्रभु बिन कछु न सुहाई । अब० ॥३॥ सखी आयो अश्विन मासा । पहुँची अपने पिय पासा ॥ क्यों छोड़े भोग बिलासा । कर पूर्व जन्म की आशा ॥ तज वर्तमान सुखदाई । अब० ॥४॥ अब लागो कातिक मासा । सब जन गृह करत हुलासा ॥ सब गृह मंगल गावें । हमरे पिय ध्यान लगावें ॥ मेरी मान कही यदुराई । अब० ॥५॥ लागा अघहन मास सुहाई । जा में शीत पड़े अधिकाई ॥ सब जन कम्पें जग केरे । कैसे ध्यान धरो प्रभु मेरे । थिरता मन नाहि रहाई । अब० ॥६॥ सखी पूष में परम तुषारा । वर शीत भई अधिकारा ॥ कैसे के संयम मंडो कैसे वसु कर्मन दंडो ॥ घर चल के राज कराई । अब ॥७॥ सखी माघ मास अब लागो । सब ही जन आनंद दागो ॥ तुम लीनी जगत बड़ाई । मोहि त्याग दया नहीं आई । धृक मेरी पूर्व कमाई । अब० ॥८॥ फागुन में सब जन होरी । खेलत केसर रंग बोरी ॥ तुम गिरि पर ध्यान लगायो । मेरा कुछ ध्यान

न आयो ॥ तुम शरणागत मैं आई। अब० ॥९॥ सखी पहिले चैत जनायो। सब साल को आगम आयो ॥ सब फूले वन अकुलाई। मोंहि तुम विन कछु न सुहाई ॥ मोहि अधिक उदासी छाई। अब० ॥१०॥ बैशाख पवन झकझोरे। लूह लपट लगे चहुँ ओरे ॥ जे जड़ ते तपत पहारा। मो तन कोमल सुकमारा ॥ घर छोड़ चले यदुराई। अब० ॥११॥ सखी जेठ मास अब आयो। तब घाम ने जोर जनायो ॥ कैसे भूख पियास सहोगे। कैसे संयम धारोगे ॥ थिरता मन में न रहाई। अब कैसे जियों मेरी माई ॥१२॥ इति सम्पूर्णम्।
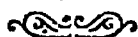
विनती, भूधर दास कृत।

गीता छन्द।

पुलकंत नयन चकोर पक्षी हंसत उर इन्द्रीवरो। दुर्बुद्धि चकवी विलख विछुरी निवड़ मिथ्या तम हरो ॥ आनन्द अम्बुज उमग उछरो अखिल आतम निरदले। जिन वदन पूर्ण चन्द्र निरखत सकल मन वांछित फले ॥१॥ मुझ आज आतम भयो पावन आज विघ्न नशाइयो। संसार सागर नीर निवटो अखिल तत्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरी मुझ उभय भव निर्मल ठये। दुख जरो दुर्गति वास निवरो आज नव मंगल भये ॥२॥ मनहरण मूरति हेर प्रभु की कौन उपमा ल्याइये। मम सकल तन के रोम हुलसे हर्ष ओर न पाइये। कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभु को लखें जो सुर नर घने। तिस समय की आनन्द महिमा कहत क्यों मुख से बने ॥३॥ भर नयन निरखे नाथ तुम को ओर वांक्षा न रही। मन ठठ मनोरथ भये पूरण रंक मानो निधि लही। अब होहु भव भव भक्ति

तुम्हरी कृपा ऐसी कीजिये । कर जोर भूधर दास विनवे यही बर मोहि दीजिये ॥४॥ इति ।

——:*:——

निशि भोजन भुंजन कथा ।

(दोहा छन्द)

नमो सारदा सार बुध, करैं हरैं अघलेप ।
निशि भोजन भुंज की कथा, लिखूं सुगम संक्षेप ॥१॥

(चौपाई छन्द)

जम्बू दीप जगत विख्यात । भरतखण्ड छवि कहियन जात ॥
तहां देश कुरु जांगल नाम । हस्त नागपुर उत्तम ठाम ॥
यशोभद्र भूपति गुण बास । रुद्दत्त दुज प्रोहित तास ॥
अश्वमास तिथि दिन आराध । पहलीपड़वा कियो सराध ॥
बहुत विनय सों नगरी तने । न्योत जिमाये ब्राह्मण घने ॥
दानमान सबही कोंदियो । आप विप्र भोजन नहि कियो ॥
इतने राय पठायो दास । प्रोहित गयो राय के पास ॥
राजकाज कछु ऐसो भयो । करत करावत सब दिन गयो ॥
घर में रात रसोई करी । चूल्हे ऊपर हांडी धरी ॥
हींग लेन उठि बाहर गई । यहां विधाता औरहि ठई ॥
मैंडक उछल परो तामांहि । विप्र तहां कछु जानो नांहि ॥
बैंगन छौंक दियो ततकाल । मैंडक मरो होय बेहाल ॥
तबहुं विप्र नहिं आयो धाम । धरी उठाय रसोई ताम ॥
पराधीन की ऐसी बात । औसर पायो आधी रात ॥
सोय रहे सब घरके लोग । आग न दीवा कर्म संयोग ॥
भूखो प्रोहित निकसे प्राम । ततखिन बैठो रोटी खान ॥

बैंगन भोले लीनो ग्रास। मैंडक मुंह में आयो तास॥
दांतन तले चबो नहिं जबै। काढ़ धरो थाली में तबै॥
प्रात हुए मैंडक पहिचान। तोभी विप्रन करी गिलानि॥
थिति पूरी कर छोड़ी काय। पशु की योनी उपजो आय॥

सोरठा छन्द।

१ घूघू २ काग ३ विलाव, ४ साबर ५ गिरध पखेरुआ।
६ सूकर ७ अजगर भाव, ८ बाघ ९ गोह जलमें१०मगर।
दश भव इहिविधि थाय, दसो जन्म नरकहि गयो।
दुर्गति कारण पाय, फलो पाप वट बीजवत॥

दोहा छन्द॥

निशि भोजन करिये नहीं, प्रघट दोष अविलोय।
परभव सब सुख ऊपजे, यहं भव रोग न होय॥

छप्पय छन्द॥

कीड़ी बुध बल हरे कंप गद करे कसारी। मकड़ी कारण पाय कोढ़ उपजे दुख भारी॥ जुवाँ जलोदर जनै फांस गल विथा बढ़ावे। बाल सबे सुरभंग वमन माखी उपजावे॥ तालुवे छिद्र बीछू भखत और व्याधि बहु करहि थल। यह प्रगट दोष निशअसन के पर भव दोष परोक्ष फल॥

दोहा छन्द।

जो अघ इहि भव दुख करे, परभव क्यों न करेय।
डसत सांप पीड़े तुरत, लहर क्यों न दुख देय॥
सुवचन सुन झाहरजे, मूरख मुदित न होय।
मणिधर फण फेरे सही, नहीं सांप नहिं होय॥
सुवचन सत गुरु के बचन, और न सुवचन कोय।
सत गुरु वही पिछानिये। जा उर लोभ न होय॥
भूधर सुवचन सांभलो, स्वपर पंक्ष कर बीन।

समुद रेणुका जो मिले, तोड़ें ते गुण कौन॥

इति निश भोजन भुंजन कथा सम्पूर्णम्॥

॥ झंझोटी ॥

देखि सखी छवि आज भली रथ चढ़ि यदुनन्दन आवत हैं॥ टेक॥ तीन छत्र माथे पर सोहैं त्रिभुवन नाथ कहावत हैं॥१॥ मोर मुकुट केसरिया जामा चौसट चमर ढुरावत हैं॥२॥ ताल मृदंग साज सब बाजत आनंद मंगल गावत हैं॥३॥ मोहनलाल आस चरनन की झुकि झुकि शीश नवावत हैं॥४॥

॥ राग देश ॥

आज जिनराज दरशन से भयो आनन्द भारी है॥ टेक॥ लहे ज्यों मोर घन गर्जे सु निधि पाये भिखारी है। तथा मो मोद की वार्ता नहीं जाती उचारी है॥१॥ जगत के देव सब देखे क्रोध भय लोभ धारी हैं। तुम्हीं दोषावरण बिन हो कहा उपमा तिहारी है॥२॥ तुम्हारे दर्श बिन स्वामी भई चहुँगति में ख्वारी है। तुम्हीं पद कंज नमते ही मोहनी धूल झारी है॥३॥ तुम्हारी भक्ति से भव जन भये भव सिंधु पारी हैं। भक्ति मोहि दीजिये अविचल सदा याचक बिहारी है॥४॥

सोरठ।

ज्ञानी पिया क्यों बिसरे निज देश। कुमति कुरमिनी सोत संग राचे छाय रहे परदेश॥टेक॥ अनंत काल पर देशनि छाये पाये बहुत कलेश। देश तुम्हारो सुपद समारो त्रिभुवन होउ नरेश॥१॥ भ्रम मद पाय छकायरहो घन ज्ञान रहो नहीं लेश। दुखी भये बिललात फिरतहो गति २ धरि

दुरभेश ॥२॥ यह संसार असार जानि लख सुख नहीं रंचक लेश । मानिकलाल लब्धि पावस लहि सुमति हाथ उपदेश ॥३॥

पीलू ।

स्वामी मुजरा हमारो लीजे ॥ टेक ॥ तुम तो वीतराग आनंद घन हम को भी अब कीजे ॥१॥ जग के देव सब रागी द्वेषी या से निज गुण दीजे ॥२॥ आदि देव तुम समान को वेग अचल पद दीजे ॥३॥

रेखता ।

भगवान आदिनाथ जिन सें मन मेरा लगा । आराम मुझे होत दुःख दर्श से भगा ॥टेक॥ मरु देवी नंद धर्म कंद कुल में सुर उगा । नृप नाभिराज के कुमार नसत सुर सगा ॥१॥ युगला निवारि धर्म को संसार को तगा । वसु कर्म को जराय शिव पंथ में लगा ॥२॥ अब तो करो सिताब मिहरबान दिल लगा । कहैं दास हीरालाल दीजे मुक्ति का मगा ॥३॥

गजल ।

ख्याल कर दिल मझार चेतन अजब करम ने भ्रमाई गतियां ॥टेक॥ निगोद वस कर सुबोध खोया त्रिजग बनारक बनास्पतियां । कभी मनुपथा कभी सुरगथा अनादि ते दिन बिताई रतियां ॥१॥ यह दुःख भर २ यतीम हूवा न गौर कीं कहुँ सुनाइँ पतियां । पड़ा हूं अब तो उसी के दर पर लगें हजारी न यम.की पतियां ॥२॥

दादरा ।

निरखत छबि नाथ नैना छकित रस होय गये ॥टेक॥ रवि कोट द्युति लज जात है नख दीप्त अपार ॥१॥ इक तो

परम वैरागी दूजे शान्ति स्वरूप ॥२॥ उपमा हजारी से ना बने अनुपम जग चन्द ॥३॥

कहरवा ।

लीजे खबर हमारी दयानिधि ॥टेक॥ तुम तो दीन दयाल जगत के सब जीवन हितकारी ॥१॥ मो मत हीन दीन तुम समरथ चूक माफ कर म्हारी ॥२॥ भूधर दास आस चरनन की भव भव शरण तिहारी ॥३॥

भैरवी ।

जग में प्रभु पूजा सुखदाई ॥टेक॥ दादुर कमल पाखुरी लेकर प्रभु पूजा को जाई। श्रेणिक नृप गज के पग से दबि प्राण तजे सुर जाई ॥१॥ द्विज पुत्री ने गिरि कैलासे पूजा आन रचाई। लिङ्ग छेदि देव पद लीनो अन्त मोक्ष पद पाई ॥२॥ समोशरण विपुला चल ऊपर आये त्रिभुवन राई। श्रेणिक बसु विध पूजा कीनी तीर्थ कर गोत्र बंधाई ॥३॥ द्यानत नर भव सुफल जगत् में जिन पूजा रुचि आई। देव लोक ताके घर आगन अनुक्रम शिव पुर जाई ॥४॥

रसिया ।

तोसे लागी रे लगन चेतन रसिया ॥टेक॥ कुमत सोत के संग तुम राचे नाना भेष गति गति धरिया ॥१॥ नरक मांहि बिललात फिरत ते वे दुःख बिसर गये रसिया ॥२॥ नीठ नीठ नरकन से कढ़ कर मानुष भव दुर्लभ बसिया ॥३॥ नर भव पाइ वृथा मत खोवो ऐसा औसर नहिं मिलिया ॥४॥ कहत हजारी सुमति संग राचे कुमति छोड़ तुम हो सुखिया ॥५॥
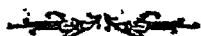
विनती, भूधर दास कृत।

अहो जगति गुरु एक सुनिये अर्ज हमारी। तुम प्रभु दीन दयालु मैं दुखिया संसारी ॥१॥ इस भव बन के मांहि काल अनादि गमायो। भ्रमत चतुर्गति मांहि सुख नहीं दुख बहु पायो ॥२॥ कर्म महा रिपु जोर ये कलकान करें जी। मन माने दुख देय काहु से नहिं डरें जी॥३॥ कब हूँ इतर निगोद कब हूँ कि नर्क दिखावें। सुर नर पशुगति मांहि बहु विधि नाच नचावें ॥४॥ प्रभु इनको परसङ्ग भव भव मांहि बुरो जी। जो दुख देखो देव तुम से नाहिं दुरो जी ॥५॥ एक जन्म की बात कहि न सकों सब स्वमी। तुम अनन्त पर्याय जानत अन्तर्यामी ॥ मैं तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट घनेरे। कियो बहुत बेहाल सुनिये साहब मेरे ॥७॥ ज्ञान महानिधि लूट रंक निबल कर डारो। इन ही मो तुम मांहि है प्रभु अन्तर पारो ॥८॥ पाप पुण्य मिल दोय पायन बेरी डारो। तन कारागृह मांहि मूंद दियो दुख भारी ॥९॥ इनको नेक विगार मैं कुछ नाहि करो जी। बिन कारण जगबन्धु बहुविधि बैर धरो जी ॥१०॥ अब आयो तुम पास सुन कर सुयश तुम्हारो। नीत निपुण महाराज कीजे न्याय हमारो ॥११॥ दुष्टन देहु निकाल साधुन को रख लीजे। विनवे भूधर दास हे प्रभु ढील न कीजे ॥१२॥

इति।

दश धर्म के भजन।

उत्तम क्षमा।

जिया तज क्रोध महा दुखकारी, भज क्षमा सुमनि मन प्यारी॥टेक॥
पूरव अति संक्लेश भावतें, संचे अघ अनिवारी।
ते अनिष्ट न इष्ट अन्य पर, स्वान वान क्यों धारी॥ १॥
तप कल्पद्रुम श्रेय सुमुन युत, शिव फल दायक भारी।
रोष दोष दुःख कोप धनंजय, तत क्षण भस्म सुकारी॥ २॥
द्वीपायन मुन क्रोधा नलकर, द्वारावति पुर जारी।
तप निज भंज प्रभंज नरक में, दुख अति पंच प्रकारी॥ ३॥
क्रोसन ताड़न मारन ही में, क्षमा धरीजिन सारी।
अव चल वास वसे तिन मग में, होहु सदा सु विहारी॥ ४॥

उत्तम मार्दव।

परिहरमान सुगुन निरवारी, सेवो मार्दव वृष सुखकारी॥टेक॥
जात्यादिक विध कृत संयोग कर, उंच गिनत अविचारी।
सो तो शरद् मेघवत् चंचल, विनशत लगत न वारी॥ १॥
वचन सत्य युत हृदय दया युत, मत जिन श्रुत अनुसारी।
दान देन कल्पद्रुम समूह, श्रुत गाये मदहारी॥ २॥
निधिपत भरतेश्वर चक्री को भ्राता मद अपहारी।
तीन खण्ड पति वली सवै इक, छिन मैं भये दुखारी॥ ३॥
सब गुण हीन दीन अवलम्वित, कर पुलकत भारी।
सम्पदादि सब प्रगट अथिर लख, क्यों मद करत अनारी॥ ४॥
सब अनर्थ को मूल दर्प लख, त्यागो सुवुध विचारी।
मार्दव सार सुधारस पीकर, हो शिव सदन विहारी॥ ५॥

उत्तम आर्जव।

जिय तज माया उपधि असारी, सज आर्जव सुखद अपारी॥टेक॥

वितथ वितरणी गुण आवरणी, दोष बढ़ावन हारी ।
कुगति युवति माला अघमाला नीत प्रीति निरवारी ॥ १ ॥
अन्य कषाय प्रगट दीखत है, माया गुप्त कटारी ।
जैसे ढकी अग्नि हू जारत, करत फवौका भारी ॥ २ ॥
कपट वृति कर पर विस्यादिक, वंचक होत दुखारी ।
सुर्गादिक सुख ठगत आपने, मोह हती बुध थारी ॥ ३ ॥
प्रगटत निज कृत दोष विपति अति, भोगत विविध प्रकारी ।
तो भी तजत न ज्यों विलाव पय, पीवत लकुट प्रहारी ॥ ४ ॥
सल्य दोष हर आर्जव गुण धर, भये संत अविकारी ।
अविचल ऋद्धि लही तिन पथ में, कबहूँ हो सुच विहारी ॥५॥

उत्तम सत्य ।

असत वैन दुख देत जानकर, सत्य धर्म धारो सुखकारी ॥टेक॥
कलह धरन दालिद्र करन अघ, पुंज भरण समलता कुठारी ।
अयस विधान अनीति खान, अप्रतीति थान तज मृषा असारी
सत्य सुबोध जलधि वर्द्धन शशि,गुण गण कोष दोष निरवारी ।
शिव पथ संवल, हरण, अमंगल दलन विपति दल पुण्य भंडारी
अति दुर्लभ वच योग लहो सो, वितथ बोल क्यों करत असारी
वसु नृप असत प्रभाव नरक में, वेदन सहत कहत सु पुकारी ॥
सत्य प्रसाद वचन ऋद्ध उपजी, पुन आप्त दिव्य ध्वनि धारी ।
तिन जिन चन्द्र चरण सेवा करहू, सत्य मारग सु विहारी ॥

उत्तम शौच ।

लोभ मलिनता डार सार भज,शौच धर्म निज प्रज्ञा धारी ॥टेक॥
मोह उदय पर द्रव्य चाह धर, करत अनर्थ अनेक प्रकारी ।
अटवी अन्त दिगन्तर भटकत, विकट समर में ह्वै संचारी ॥१॥
अघ द्रुम कानन, सुयश,नशावन,कलह बढ़ावन सुकृत निवारी ।
यह-परभव दुख दाय पाय पितु,लोभ सदृश न मलिन मसिकारी

मिथ्यात्वादिक मल विलप्त पुनि,परधन परत्रिय वांक्षाकारी ।
ते स्नान किये क्यों शुचि है,गङ्गादिक जल तन मलहारी ॥३॥
जिन दृग-ज्ञान चरित्र जलकर, रज हर परम शौचता धारी ।
तिन जिनराज परम शासन कर, होहु विमल पद पंथ विहारी ॥

उत्तम संयम ।

पञ्चइन्द्रिय मन जीत कायषट्, रक्षाकर संयम सुधरीजे॥टेक॥
सेय अमेय विषय विष तिन फल, भव आताप माँहि चिरछीजे ।
अब नित ज्ञान सुधारस पीके, सब दुख द्वंद जलांजलि दीजे॥१॥
मन विकल्प संतति उपजावन, इक क्षण के गुण पार न लीजे ।
ताके विषम विकार हार निज, अनुभव माँहि सदा थिर कीजे॥२॥
स्वसम जीव मात्र सब लखकें, सबसे मैत्री भाव धरीजे ।
असत् अदत्त अब्रह्म उपाधि तज,पंच समिति त्रय गुपत धरीजे॥
वीतराग चारित्र धार कर, बन्ध काट सुख सिन्धु भरीजे ।
होहु विहारी संयम मग में, भव दुःख भानकाल चिर छीजे॥४॥

उत्तम तप ।

द्वादश विधि वर सकल दोषहर,तपश्चरण धारो सो ज्ञानी॥टेक॥
धरम धराधर हनन वज्र वर,काल ज्वाल जग गुण निधि पानी।
दुष्ट करम अहिवर मंत्राक्षर,विघ्न व्यूम,तम रवि जिम जानी ॥
भव कानन भानन दावानल, दुख दव समन सुमेघ समानी ।
निरवांछक जिन सदृश चितयति,अविचल ऋद्धि देन वड़दानी॥
सो वर तप इच्छा निरोध लक्षण लख, धरत भेद विज्ञानी ।
विपरीता भिन वेश सहित है, वृथा क्लेश करत अज्ञानी ॥
ऋद्धत्यादिक प्रत्यक्ष फल जाके,पुनि इन्द्रादिक पद रजधानी ।
होहु विहारी तपो मार्ग में, जा फल मुख्य मोक्ष सुनि दानी ॥

उत्तम त्याग ।

चंचल अघकृत तृष्णा वर्धन, धन लख सार त्याग वृत कीजे॥टेक॥
अभय ज्ञान आहार सोभेषज, चार दान जिन कथित करीजे।
निर्भय विसद ज्ञान धन ऋद्धि रोग रहित सुरतन पाईजे॥
वहु वध कृत आरम्भ ठान अति, श्रम सहस्र कर धन संचीजे।
सप्त क्षेत्र में वीज बोय वट, यादव वत असंख्य फल लीजे॥
तीव्र लोभकर धन संचय कर, मधु माखी समान क्यों सीजे।
कृपण कहाय अजश लह यह भव परभव सुखगिरि वज्रन कीजे॥
आपद निहत विषै करुणा कर, पात्र विषै तिन गुण रस भींजे।
अभय देय सब जीव मात्रको, गृह वस दान विना न रहीजे॥
सब पर द्रव्य ममत पर हरकें, निज गुण रत्न सदा पर खीजे।
होहु विहारी त्याग पंथ में, जाते सुख अनंत विलसीजे॥

उत्तम (आकिञ्चन)

परम अकिञ्चन भाव भायके सर्व उपधि तज दुख करतारी॥टेक॥
मोह मद्य पीकर चिरते निज रूप अचल चिद्रूप विसारी।
अनुचर भयें भंगुर जड़ रूपी देह जंत्र में स्वय वुध धारी॥१॥
सकल भाव निजद्रव्य चतुकमय सदा पर नमत हैं अनिवारी।
तिन पर न मन अनिष्ट इष्ट लख वांधे विधि नाना परकारी॥२॥
अब अपूर्व भाग्योदय ते लह जिनवच रविकर संशय हारी।
अमल अखण्ड शुद्ध चिद्रूपी निज लख होहु अकिंचन धारी॥३॥
आशा गर्त प्राणि युत युत हैं लोक सम्पदा अणुवत कारी।
त्याग भाव कर पूर्ण करो तुम तिन पद पंकजकी वलिहारी॥४॥
क्रोधादिक कर कुगति वन्ध ह्वै परिग्रह सतत वन्ध विस्तारीं।
तातें त्रिजंग त्रिकालविषैं कहू परिग्रही नहिं शिवअधिकारी॥५॥

वाह्याभ्यन्तर ।संग त्याग जिन मुद्राधार भये अविकारी।
ज्ञानानन्द स्वरूप मगननित तिन जिनपथ कब होहु विहारी।६।

उत्तम ब्रह्मचर्य।

पर वनिता तजो बुधिवान
युगम भव दुख देन हारी प्रगट लखहु सुजान ॥ टेक ॥
कुगति वहन सु सकल गुण गण गहन दहन समान।
सुयश शशि को मेघमाला सर्व औगन वान ॥ १ ॥
एक छिन पर दार रति सुख काज करत अज्ञान।
करत अछति सकल नरक दुख सहत जलथन मान ॥ २ ॥
अन्य रामा दीप में ह्वै सुलभ परत अजान।
यहां ही दण्डादि भोगत पुन कुगति दुखदान ॥ ३ ॥
स्वदारा विन नारि जननी सुता भगिनी मान।
करहिं वांछा स्वप्न मैं नहिं धन्य पुरुष प्रधान ॥ ४ ॥
परवधू मन वचन तें तज शील धर अमलान।
स्वर्ग सुख लह पुन विहारी होहि अवचल थान ॥ ५ ॥

जिन वाणी की स्तुति।

करों भक्ति तेरी हरो दुख माता भ्रमण का ॥ टेक ॥
अकेला ही हूँ मैं कर्म सब आये सिमटके।
लिया है मैं तेरा शरण अब माता सटक के ॥ १ ॥
भ्रमावत है मोकों कर्म दुख देता जनम का ॥ करो० ॥ १ ॥
दुःखी हुआ भारी भ्रमत फिरता हूँ जगत में।
सहा जाता नाहीं अकल घबड़ाई भ्रमण में ॥
करों क्या मा मेरी चलत वस नाहीं मिटन का ॥ करों० ॥ २ ॥
सुनो माता मेरी, अरज करता हूँ दरद में।

दुःखी जानों मोकों डरपकर आया शरण में ॥
कृपा ऐसी कीजे दरद मिट जावे मरण का ॥ करौं० ॥ ३ ॥
पिलावे जो मोकों सुबुद्धि का प्याला अमृत का।
मिटावे जो मेरा सर्व दुख सारे फिरण का ॥
परों पैयां तेरी हरो दुःख भारी फिरण का ॥ करो० ॥ ४ ॥
टेक—मिथ्या तम नाशवे कों ज्ञान के प्रकाशवेकों अप्पा पर भासवे कों भानुसी बखानी है।
छहुँ द्रव्य जानवेकों बन्ध विधि भानवेकों स्वपर पिछानवेकों परम प्रवाणी हैं ॥ ५ ॥
अनुभव बतावधेकों जिय के जतायवेकों काहू न सतायवेकों भव्य उर आनी है।
जहां तहां तारवेकों पार के उतारवेकों सुख विस्तारवेकों ऐही जिन वाणी है ॥ ६ ॥

दोहा।

जिन वाणी की स्तुति, अल्प बुद्धि परमाण।
पन्नालाल बिनती करैं, देहु मात मोहि ज्ञान ॥ ८ ॥
हे जिनवाणी भरती, तोह जपों दिन रैन।
जो तेरो शरण गहे, सो पावे सुख चैन ॥ ९ ॥
जिनवाणी के ज्ञानते सुझे लोकालोक।
सो वाणी मस्तक धरूँ, सदा देत हौं धोक ॥ १० ॥

——:*:——

भोजनों की प्रार्थनाएँ।

(सबेरे भोजन करने की इष्ट प्रार्थना)

परमेष्ठी सुमरण कर हम सब बालक गण नित उठा करैं।
स्वस्थ होय फिर देव धर्म गुरु की स्तुति सब किया करैं ॥

करना हमें आज क्या क्या है यह विचार निज काज करें ।
कायिक शुद्धि किया करके फिर जिन दर्शन स्वाध्याय करें ॥
मौन धार कर तोषित मनसे क्षुधा वेदना उपशम हित ।
विघ्न कर्म के क्षयोपशम से भोजन प्राप्त करें परमित ॥
हे जिन हो हितकर यह भोजन तन मन हमरे स्वस्थ रहें ।
आलस तजकर "दीप" उमंग से निज परहित में मगन रहें ॥

सांझ के भोजन समय की इष्ट प्रार्थना ।

जय श्री महावीर प्रभू की कह अरु निज कर्त्तव्य पूरण कर ।
संध्या प्रथम मौन धारण कर भोजन करें शांत मन कर ॥
परमित भोजन करें ताकि नहिं आलस अरु दुःस्वप्न दिखें ।
"दीप" समय पर प्रभू सुमरण कर सोवें जगे सुकार्य लखें ॥

कुगुरु, कुदेव कुशास्त्र की भक्ति का फल ।

अन्तर बाहर ग्रन्थ नहिं, ज्ञान ध्यान तप लीन ।
सुगुरु बिन कुगुरु नमें, पड़े नर्क हो दीन ॥ १ ॥
दोष रहित सर्वज्ञ प्रभु, हित उपदेशी नाथ नाथ ।
श्री अरहंत सुदेव, तिनको नमिये माथ ॥ २ ॥
राग द्वेष मल कर दुखी, हैं कुदेव जग रूप ।
तिनकी वन्दन जो करें, पड़ै नर्क भव कूप ॥ ३ ॥
आत्म ज्ञान वैराग सुख, दया छमा सत शील ।
भाव नित्य उज्जल करें, है सुशास्त्र भव कील ॥ ४ ॥
राग द्वेश इन्द्री विषय, प्रेरक सर्व कुशास्त्र ।
तिनको जो वन्दन करें, लहै नर्क विद गात्र ॥५॥